

**TEXT PROBLEM
WITHIN THE
BOOK ONLY**

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182200

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 83/1795 J. Accession No. H 2 8

Author मुद्रवापायक्य कालुनी

Title जीवन प्रवाह

This book should be returned on or before the date
last marked below. 1957

जीवनज्वाला

फाल्गुनी मुखोपाध्याय



: अनुवादक :
मगनलाल जैन

रवाणी एन्ड कम्पनी

[हिन्दी तथा गुजराती पुस्तक-विक्रेता]

रिज्जीफ रोड,
अहमदाबाद-१

बाबू गेनू रोड
बम्बई-२

यशवन्तगंज
इन्दौर नगर

: પ્રકાશક :

જમનાદાસ માથેકચંદ રવાણી,
જીવન પ્રકાશન
વલ્લભવિદ્યાનગર (ગુજરાત)

પ્રથમાવૃત્તિ : જૂન, ૧૯૬૬

પ્રત : ૨૦૦૦

મૂલ્ય ૩-૧૨-૦

: મુદ્રક :

જમનાદાસ માથેકચંદ રવાણી,
અનેકાન્ત મુદ્રણાલય
વલ્લભવિદ્યાનગર (ગુજરાત)



अर्पण

सुख-दुःख की सहभागिनी
रतन को सप्रेम.....

—मगनलाल जैन

हमारे अन्य प्रकाशन

जिगर और अमी (भाग १-२)	(सत्य घटनात्मक उपन्यास)	चु० व० शाह	७-०-०
बेटी की विदा	(उपन्यास)	पन्नालाल पटेल	२ ०-०
रोज की कहानी	(रेखाचित्र)	शिवनारायण उपाध्याय	२-०-०
आसनचिकित्सा	(स्वास्थ्योपयोगी)	डॉ० एच. डी. गाँधी (पुनर्मुद्रण)	
मेरी यात्रा	(संस्मरण)	पुरातन बुच	(प्रेस में)
अगनखेल	(उपन्यास)	सारंग बारोट	(,,)
अम्बर चरखा	(विवरण)	'सेवक'	१-४-०
Ambar Charkha		'Sevak'	1-4-0

— जीवन प्रकाशन —

वत्सभविद्यानगर [गुजरात]

दो शब्द

वैंगला के प्रसिद्ध उपन्यासकार श्री फाल्गुनी मुखोपाध्याय का यह एक सामाजिक उपन्यास है। लेखक ने मानवीय भावों को चित्रित करने में जो सफलता प्राप्त की है उस सम्बन्ध में कुछ भी लिखा जाना मात्र लोक-परिपाटी का पालन करना है।

“जीवनज्वाला” नाम से किसी पाठक को यह भ्रान्ति नहीं होना चाहिये कि लेखक ने किसी प्रेमकथा का चित्रण किया होगा। प्रस्तुत पुस्तक में क्या है इसका परिज्ञान तो सम्पूर्ण पुस्तक के पढ़ने से होगा, किन्तु—“इसी देश की नारी ने पति की निन्दा सुनकर हँसते-हँसते मृत्यु स्वीकार कर ली थी, मृत पति के शरीर को लेकर देश-देशान्तर में भटकी थी, कोढ़ी पति को कन्धे पर रखकर जगह-जगह फिरी थी; आज वह आधुनिका है ! दुर्भाग्य से किसी को मूर्ख-निर्बोध पति मिले तो क्या उस से स्नेह के स्वर में एक बात भी नहीं कही जा सकती ? क्या उसे मित्रों द्वारा अपमानित कराके निकाल देना चाहिये ? क्या इसकी अपेक्षा यह कहना उचित नहीं है कि तुम चले जाओ, मैं तुम्हें नहीं चाहती ?”—ऐसे ही अनेक भावों को लेखक ने शब्द-चित्रों में गूँथ दिया है। मानव-जीवन में प्रतिदिन अनेक घटनाएँ घटती रहती हैं, किन्तु यह उनकी महानता है जो उन्हें मूक भाषा देकर चिरजीवी बना देते हैं।

दार्शनिकों और महात्माओं ने जगत के सम्बन्ध में विविध व्याख्याएँ की हैं, जिन्होंने मानव को भीरुता, उदासीनता के सन्निकट ला दिया । “जीवनज्वाला” का लेखक उन दार्शनिक विचारों से परे किसी ओर ही जगत का निर्माण कर रहा है, जहाँ न भीरुता है, न उदासीनता । उसका जगत “मरण की वीथिका में जीवन का उच्छ्वास, जीवन की यातना में मृत्यु की मधुरता” रूप है ।—यही जीवनज्वाला के कथानक का मूल स्रोत है, और इसी को लेखक की सफलता, महानता एवं प्रतिष्ठा का कारण माना जायेगा ।

भाई श्रीकान्त त्रिवेदी गुजराती भाषा के एक सफल अनुवादक हैं; उनके गुजराती अनुवाद से मैंने यह अनुवाद किया है; इसलिये यदि इस में मुझे किंचित् भी सफलता प्राप्त हुई हो तो उस श्रेय के भागी भाई श्रीकान्त ही हैं ।

पिछले अनुवादों को भाँति पाठकों ने इसे भी स्वीकार किया तो उसे मैं अपना सौभाग्य मानूँगा और भविष्य में दूसरे अनुवाद प्रस्तुत करने का साहस कर सकूँगा ।

—अनुवादक

कृपया २१वें पृष्ठ पर छपी हुई काव्य पंक्तियाँ इस प्रकार पढ़ें
 बासन्ती शोभा विलसे तुम्हारे जीर्ण जीवन में,
 दुःखार्त शून्य से प्राण पुलकित हों नवयौवन में ।

जीवनज्वाला



तपती यौवन के द्वार पर खड़ी थी।

आधुनिक युग में लड़कियों की वैवाहिक उम्र-सम्बन्धी कोई नियम नहीं है; इसी लिये मिस्टर शंकर चटर्जी अपनी इकलौती पुत्री का विवाह जल्दी कर देना चाहते थे। सगाई हो चुकी थी, मुहूर्त निकलवा लिया था, सिर्फ विवाह की ही देर थी !

तपती इस वर्ष बी. ए. की तैयारी कर रही थी। विवाह का नाम सुनकर बंगाली लड़कियाँ खुशी से नाच उठती हैं, किन्तु तपती को कुछ न हुआ। उसे क्यों कुछ नहीं हुआ ?—यह पूछने पर वह कहती : 'माता-पिता का दिया हुआ अनिवार्य दण्ड जब भोगना ही पड़ता है तब चिन्ता या विचार करने से क्या लाभ ? विवाह हो जाने पर आनन्द या निरानन्द कुछ भी कर लेंगे, इस-समय तो परीक्षा की चिन्ता करना है !'

और वास्तव में विचारने जैसा कुछ था भी नहीं। कितने ही कुलीन युवक तपती को पाने के लिये अधीर हो रहे थे। उसने उन सबको देखा भी था। मिस्टर और मिसिस चटर्जी की इच्छा विवाह के बाद दामाद को विलायत भेजने की थी।

तपती शिक्षिता, आधुनिका और प्रगतिवादिनी थी। सोसायटी के कितने युवक उसे अपना बनाने में प्रयत्नशील थे ! दिन-प्रतिदिन

तपती यौवन के द्वार पर खड़ी थी।

आधुनिक युग में लड़कियों की वैवाहिक उम्र-सम्बन्धी कोई नियम नहीं है; इसी लिये मिस्टर शंकर चटर्जी अपनी इकलौती पुत्री का विवाह जल्दी कर देना चाहते थे। सगाई हो चुकी थी, मुहूर्त निकलवा लिया था, सिर्फ विवाह की ही देर थी !

तपती इस वर्ष बी. ए. की तैयारी कर रही थी। विवाह का नाम सुनकर बंगाली लड़कियाँ खुशी से नाच उठती हैं, किन्तु तपती को कुछ न हुआ। उसे क्यों कुछ नहीं हुआ ?—यह पूछने पर वह कहती : 'माता-पिता का दिया हुआ अनिवार्य दण्ड जब भोगना ही पड़ता है तब चिन्ता या विचार करने से क्या लाभ ? विवाह हो जाने पर आनन्द या निरानन्द कुछ भी कर लेंगे, इस-समय तो परीक्षा की चिन्ता करना है !'

और वास्तव में विचारने जैसा कुछ था भी नहीं। कितने ही कुलीन युवक तपती को पाने के लिये अधीर हो रहे थे। उसने उन सबको देखा भी था। मिस्टर और मिसिस चटर्जी की इच्छा विवाह के बाद दामाद को विलायत भेजने की थी।

तपती शिक्षिता, आधुनिका और प्रगतिवादिनी थी। सोसायटी के कितने युवक उसे अपना बनाने में प्रयत्नशील थे ! दिन-प्रतिदिन

वे तपती के आसपास मँडराते, गीत गुनगुनाते और उसके भविष्य सम्बन्धी छानबीन करते थे। हाँ, तपती सुन्दर थी, अद्भुत थी, असाधारण थी ! किन्तु कोई एक ही युवक उसे प्राप्त कर सकेगा, यह दूसरों को असह्य था ! किन्तु उपाय क्या ? उसके पिता धनवान थे; जिसे योग्य समझेंगे उसीको कन्या देंगे; इसमें दूसरों को बोलने का अधिकार भी क्या हो सकता है ?

मि. चटर्जी के 'तपती-निवास' नामक नवनिर्मित भवन में धाम-धूम से विवाह की तैयारियाँ हो रही थीं। वर महाशय अभी आये नहीं थे, किन्तु बाराती लगभग आ चुके थे और मिठाइयों पर हाथ साफ कर रहे थे !

रात के दस बजे होंगे। उसी समय मलिन वेश में, फटी हुई कमीज़ पहिने, मुण्डित सिर के एक युवक ने आकर मि. चटर्जी से मिलने की इच्छा व्यक्त की। विवाह-मण्डप में ऐसे अतिथि से मिलना कौन पसन्द करता ? किन्तु युवक अपने निश्चय में अडिग था।

मि. चटर्जी कन्यादान की तैयारी कर रहे थे, फिर भी युवक के साथ बातचीत करने के लिये अपने कमरे में जा पहुँचे।

एक गुड़ीमुड़ी-सा पत्र निकालकर युवक बोला : 'मेरे पिता के बक्स में यह दस्तावेज मिला है; यह आपका और शायद जरूरी है। कृपा करके इसे स्वीकार कीजिये।'

मि. चटर्जी आश्चर्यचकित होकर बोले : 'तू महादेव का लड़का है ? इतना बड़ा हो गया ! बैठ बेटा ! आज मेरी पुत्री का विवाह है, यहीं भोजन करके जाना !'

'लेकिन मुझे एक दूसरा काम था।' युवक ने विनय से कहा।

'होगा, फिर कभी कर लेना; बैठ !'

मि. चटर्जी ने प्रतिज्ञा-पत्र हाथ में लिया। वास्तव में वह जरूरी पत्र था। युवक को बैठाकर वे अन्दर चले गये।

वर महाशय आ गये थे और उनके पिता समधी की वाट देख रहे थे। मि. चटर्जी के आते ही वे बोले :

‘प्रतिज्ञा के रुपये मुझे दे दो; इसके बाद लड़का आपका; फिर आप चाहे जो कर सकते हैं !’

‘हाँ समधी महाशय ! कल-परसों ही आपके रुपयों का बन्दोबस्त कर दूँगा।’

‘क्यों ? आज ही दे दो न ! लड़का तो मैं बेच ही रहा हूँ। नक्रद का व्यवहार ही अच्छा !’

‘ऐसी बात क्यों करते हैं, समधी महाशय ?’ मि. चटर्जी ने अस्थिर धातु स्वर में कहा।

‘भुके जो नक्रद पचास हजार रुपये देना तय हुआ है वे देकर लड़का अपना बना लो, मुझे नक्रद का व्यवहार ही अच्छा लगता है !’

‘लेकिन आज ही देने का कहाँ तय हुआ है ? और इतनी रात को रुपये कैसे दिये जा सकते हैं ! कल रुपये दे दूँ इसमें आपको क्या आपत्ति है ?’

‘यह नहीं हो सकता चटर्जी महाशय ! रुपये न मिले तो मैं लड़के को लेकर चला जाऊँगा !’

‘चले जाओगे ?’

विराट विवाह-सभा स्तब्ध हो गई ! किसीने कल्पना भी नहीं की थी कि सभ्य, शिक्षित समाज में ऐसा हो सकता है। मि. चटर्जी क्रोध को दबाकर बोले : ‘अच्छा, लड़के को ले जाओ, मैं रुपये नहीं दूँगा !’

‘हेमेन्द्र, खड़ा हो जा !’ वर के पिताने आवाज़ दी। वर एक-दम खड़ा हो गया। उसका पिता मि. चटर्जी से कहने लगा : ‘इस तरह मुझे बनाना चाहते थे ! यह नहीं चल सकता मि. चटर्जी ! प्रतिज्ञा के रुपये मुझे देकर लड़की-दामाद का जो करना हो करो। आप तो श्रीमन्त हैं, रुपये न देने का कारण क्या ?’

‘रुपये नहीं दूँगा !’ मि. चटर्जी रोष भरे स्वर में बोले।

‘तो विवाह भी नहीं हो सकता—चल भाई हेमेन्द्र !’

वर और उसका पिता खड़े हो गये। दोनों ओर के मेहमान बोल उठे : ‘अरे यह क्या करते हो घोषाल महाशय ! बैठो ! बैठो !’ लेकिन मि. चटर्जी ने दरवान को बुलाकर कहा : ‘वे लोग चले गये ? ठीक हुआ; दरवाज़ा बन्द कर दे, कोई अन्दर न आये।’

सब आश्चर्यचकित हो गये। मि. चटर्जी दीवानखाने में आकर बोले : ‘तेरा विवाह नहीं हुआ, बेटा ?’

‘जी नहीं; क्यों ?’

‘तेरे पिता को मैंने वचन दिया था कि तुझे अपना दामाद बनाऊँगा। लेकिन भूल ही गया था, इसलिये भगवान ने ठीक समय पर तुझे भेज दिया। चल, बेटा !’

‘मैं ?...मैं क्या आपकी पुत्री के योग्य हूँ ?’

‘जरूर ! तू ही उसके योग्य है।’

और एक ही घन्टे में असामान्या ‘सोसायटी गर्ल’ तपती चटर्जी के साथ एक बिलकुल दीनहीन ब्राह्मण युवक का विवाह हो गया।

तपती के युवक-मित्र, जिन्होंने कुशलता से वह विवाह रोक देने के हेतु घोषाल महाशय के कान भर दिये थे और रुपये पहले ही माँग लेने को समझा दिया था कि मि. चटर्जी की नीयत साफ नहीं थी,—उन्होंने चुपचाप खड़े-खड़े देखा कि तपती को ग्रहण

करने के लिये उनमें से किसी को नहीं बुलाया गया ! सारी आशाओं पर पानी फिरते देख वे झुण्डितमस्तक, मलिनवेशी वर के मुण्डपात की कामना करते हुए वर वापिस लौटे; किन्तु निश्चित न रह सके ।

दूसरे दिन सवेरे वर से पूछा गया : 'वर महाशय, कितना पढ़े हो ?' उत्तर में तपनज्योति ने कहा : 'पिता का अकाल अवसान होने से मुझे स्कूल छोड़ना पड़ा था; फिर भी घर रहकर थोड़ा-बहुत अध्ययन किया है । पिता की मृत्यु के एक ही वर्ष बाद माता ने विदा ली और मुझे अनाथ बनकर जगह-जगह भटकना पड़ा ! कुछ ही दिन पहले गया में पिता का श्राद्ध कर रहा था, कि उनके कागज-पत्र पधराते समय अचानक मि. चटर्जी का पत्र दिखाई दिया और मुझे यहाँ आना पड़ा ।'

यह सुनकर सब स्तब्ध हो गये । तपती चटर्जी जैसी सुन्दरी, शिक्षिता, बी. ए. पास युवती के लिये क्या वह योग्य वर था ? स्त्रियों ने नाक सिकोड़ ली; पुरुषों ने आश्वासन के स्वर में कहा : 'जो होना था वह हो गया ! उसे कहाँ नौकरी करने जाना है ? दस्तखत कर लेगा तो भी बस है ।' तपती के समवयस्क मित्र सहानुभूति प्रदर्शित करके फिर कानाफूसी करने लगे : 'अच्छा हुआ ! यह अभिमानी लड़की इसी के योग्य थी !'

तपती कुछ न बोली । कल रात की अप्रत्याशित घटना से वह विह्वल-सी हो गई थी । विचार करते-करते कब नींद आ गई इस की उसे कोई खबर न पड़ी । पति के साथ बात भी न हुई । इतना उसे विश्वास था कि पिताने उसे अयोग्य के हाथ में तो नहीं ही सौंपा होगा । आज यह सब सुनकर उसका मन पिता के विरुद्ध बलवा करने को तैयार हो गया; लेकिन अब क्या हो सकता था !

मि. चटर्जी और मिपिस चटर्जी को भी दुःख हुआ। दृठ करके उन्होंने जो कर डाला था उसके लिये पश्चाताप हुआ; किन्तु निरुपाय के आश्वासनरूप से उन्होंने विचार किया : दामाद को क्लर्क तो बनाना नहीं है। बी. ए. या एम. ए. पास नहीं है तो क्या हुआ ? पुत्री को बुलाकर उन्होंने इतना ही कहा :

‘बेटी, तेरे पिता को उसने अपमान से बचा लिया है, इतना ही याद रखना !’

किन्तु पुत्री कुछ न बोली, पढ़ने के लिये अपने कमरे में चली गई।

तपनज्योति ने कहा कि जहाँ वह रहता है वहाँ किसी से कहकर नहीं आया था इसलिये आज वह जा रहा है। कल सवेरे फिर आ जायेगा।

विवाह-मण्डप धीरे-धीरे अदृश्य हो गया।

सुहागरात के दिन सुसज्जित कमरे के बाहर एक सोफे को फूलों से सजाया गया। चाँदनी से स्निग्ध होकर वह वर-बहू की अपेक्षा कर रहा था। तपनज्योति को बुलाकर वहाँ बैठाया गया। दो-चार हास्यप्रिय युवतियों ने उससे बातचीत करने का प्रयत्न किया, किन्तु तपनज्योति ने कोई उत्तर न दिया ! सब को लगा कि ग्रामीण लड़का है, इसलिये हँसी-मज़ाक करना नहीं जानता। सब चली गई।

तपनज्योति सोच रहा था—जिसके साथ विवाह हुआ है वह कैसी होगी ? उसे स्वीकार करेगी या नहीं ? उसका हृदय इतना अधीर हो गया था कि किसी के साथ बातचीत करना लगभग अशक्य था। अधीर चित्त से वह वधू की वाट देखने लगा। सहेलियाँ तपती को ले आईं। तपन का हृदय नवोद की भाँति धड़क धड़क हो रहा था। तपती ने सहेलियों को दरवाज़े से ही

विदा कर दिया और अकेली अन्दर आई। जिस दालान में वह बैठा था, उसके बीच का दरवाज़ा ज़ोर से बन्द करके मानो उसने तपन को सूचित कर दिया कि उसके शयनखण्ड में वर को आने की मनाई है !

काँच की खिड़की से तपन ने देखा कि तपती ने नाइटड्रेस पहिनी, उज्ज्वल प्रकाश को बुझाकर स्निग्ध नीले प्रकाशवाला बल्ब जलाया और पलंग पर लेट गई !

तपन स्तब्ध हो गया। कुछ देर बाद उसे लगा कि शायद उसकी उपस्थिति की तपती को खबर न हो ! उसने धीरे-धीरे बन्द दरवाज़ा खटखटाकर कहा : 'तपती ? दरवाज़ा खोलो !'

तपती करवट लेकर सो रही थी। उसने उसी तरह उत्तर दिया : 'वहीं रहो !'

तपन की सारी इन्द्रियाँ विमूढ़ हो गईं। क्या उसकी शंका सत्य सिद्ध हुई थी ! तपती उसका स्वीकार नहीं करेंगी ! उसके पच्चीस वर्ष के निर्मल निष्कलंक प्रेम को तपती ने इतनी कठोरता से त्यक्त बना दिया ! लेकिन कारण क्या ? आर्थिक कठिनाइयों से वह कॉलेज में दाखिल नहीं हो सका था, फिर भी उसने अच्छा अध्ययन किया था और अब भी कर रहा है ! यही बात वह आज तपती से कहना चाहता था, किन्तु प्रारम्भ में ही उसने ऐसा बर्ताव किया की कुछ कहने का मार्ग न रहा ! वह सोचने लगा : उसे ग्रहण न करने का क्या कारण हो सकता है ? वह डिग्रीधारी नहीं था, किन्तु उसका अध्ययन अच्छा था, यह बात बतलाने का कल उसने प्रयत्न किया था। चूँकि आत्मश्लाघा करना उसके स्वभाव में नहीं था इसलिये हो सके उतनी विनय के साथ कहा था। दूसरे, उसका जन्म गाँव में हुआ था, किन्तु उसने शहर का अनुभव भी लिया था। तीसरे, ब्राह्मणत्व का अभिमान उसमें कुछ अधिक था—

ऐसा शायद तपती मान सकती है; किन्तु बी. ए. पाय युवती उसे पहिचानने का यत्न किये बिना ही विपरीत धारणा बना ले, यह क्या योग्य था ? उसका चेहरा भी कोई खराब नहीं था जो तपती को पसन्द न आये ! उलटे उमने तो आज तक अपने चेहरे को प्रशंसा ही सुनी थी। फिर हुआ क्या ?

स्निग्ध ज्योत्स्ना में तपन की आँखें सुलग उठीं ! जीवन की कितनी इच्छाएँ, कितनी आशाएँ आज चकनाचूर हो गई थीं ! उसकी अंतर्वेदना ही मानो चाँदनी से बरस रही थी। किन्तु उस गंभीर वेदना का तपती इतनी जल्दी स्वीकार कर लेगी ? नहीं, एक बार भले ही प्रयत्न करके देख लूँ ! तपन को बोलने की इच्छा हो गई : 'ओ तपती ! तूने जैसा समझ लिया है वैसा मैं नहीं हूँ ! मुझे अवसर दे, तेरे योग्य बनने के प्रयत्न में मैं अपना जीवन बिता दूँगा !'

तपन खड़ा हो गया और पलंग पर लेटी हुई तपती का कोमल शरीर देखने लगा। तपती सो गई थी। दो लम्बी वेणियाँ पीठ पर होती हुई कमर के नीचे तक चली गई थी : मानो दो काले साँप उसका पहरा दे रहे थे ! सुखद निद्रा के सुदीर्घ निःश्वासों ने तपन को बतला दिया कि वह उसकी नहीं थी; उसकी होती तो इतनी सरलता से, इतने आराम से वह कभी नहीं सो सकती थी !

यकायक तपन के मस्तिष्क में बिजली की भाँति एक विचार कौंध गया। तब तो, जिसके साथ तपती का विवाह न हो सका, उसी को वह चाहती होगी...या फिर...विचार करते-करते तपन के हृदय में उथलपुथल मच गई। प्राचीन हिन्दू संस्कारों से परिपक्व उसका हृदय मानो किसी अथाह विष-सागर में डूबने लगा। यह क्या हुआ ! उसके सुन्दर सुनिर्मल जीवन में यह किसका अभिशाप ! उसने तो ऐसी कामना नहीं की थी ! धनवान पिता की पत्नी से

विवाह करने का लोभ उसे कभी नहीं हुआ था; लेकिन... उसने निर्णय कर लिया कि वह तपती से कुछ नहीं कहेगा। उसके वाञ्छित को—यदि मेरे सिवा किसी दूसरे को वह चाहती हो तो—प्राप्त कराने में सहायता करेगा !

×

×

×

पिछली रात के समय वह उठा और अपने लिये निश्चित कमरे में जाकर सो गया। लेकिन बारह बजने पर भी उसकी आँखें न खुली। सबने सोचा कि पत्नी के साथ सारी रात जागने का ही यह परिणाम होगा; किन्तु तपती तो प्रातःकाल ही उठकर घूम रही थी; उसके शरीर या मन पर थकान का कोई चिह्न नहीं था। यह देखकर माता ने पूछा : 'बेटी, तपन कब जाकर अपने कमरे में सो गया ? अभी तक क्यों नहीं उठा ?'

'मुझे क्या पता !' कहकर तपती चली गई।

नववधू की लज्जा समझकर सब हँसने लगे। लेकिन माँ ने तपन के कमरे में जाकर देखा तो उसका शरीर खूब गर्म था और वह आँखें बन्द किये पड़ा था। सुहागरात के बाद ही दामाद को ज्वर ! आधुनिक समाज में रहने पर भी तपती की माँ ने साधारण बंगाली स्त्रियों के संस्कार से उसे अमंगल सूचक माना। व्याकुल होकर उसने तपन से पूछा : 'बुखार क्यों आ गया बेटी ? कब से आता है ?'

तपन ने आँखें खोलकर देखा तो सिरहाने ज्योतिर्मयी जननी मूर्ति ! उसका चिर स्नेह-जुधातुर हृदय रो पड़ा।

तपन सोचने लगा : यह माँ और यह उसकी लड़की ! इस से अधिक आश्चर्य की बात उसने जीवन में नहीं देखी थी। मधुर शिशुकण्ठ से उसने उत्तर दिया : 'कुछ सर्दी-सी लग गई है माँ ! चिन्ता की कोई बात नहीं ! एक दिन उपवास करने से ही मिट जायेगी !'

‘डाक्टर को बुलवाऊँ बेटा !’ जननी का प्रेमभरा हाथ तपन के के मस्तक पर फिर रहा था ।

‘नहीं माँ, मैं दवा नहीं पीता । तुम चिंता न करो, मैं कल ही अच्छा हो जाऊँगा ! तुम्हारे मंगल हस्त का स्पर्श मिलने के बाद बेचैनी कहाँ तक रहेगी ?’

पुत्रहीना जननी ने इस तरह माँ का संबोधन कभी नहीं सुना था । उस का हृदय विमल माधुर्य से छलक उठा ।

उसी क्षण तपन को अपने सगे बेटे के स्थान पर बिठाकर उसने कहा :

‘तू क्या खायेगा बेटा, साबूदाने की खीर ?’

‘नहीं माँ, मैं खीर नहीं खा पाता ।

‘अच्छा बेटा, तो थोड़ा-सा ग्लेक्सो देती हूँ ।’

‘सिर्फ थोड़ा-सा गर्म दूध देना, माँ ! इस समय और कुछ नहीं खाऊँगा । और मैं अकेला ही सोता रहूँगा, तुम्हारी पुत्री के मित्र मुझे परेशान न करें; इतना ध्यान रखना ।’

‘अच्छा, मैं उन्हें मना कर दूँगी ।’

माँ चली गई । तपन पड़ा-पड़ा सोचने लगा । अपार और अथाह विचार-सागर में मानो वह गहराई में उतर रहा था । आज किस तरह अपना बचाव किया जाये ? आज तक जिस प्रकार उसने अपने जीवन की रचना की थी, उसमें तपती से विवाह करने के बाद किसी अन्य को स्वीकार करने की वह कल्पना भी नहीं कर सकता था ! तपती को प्राप्त करने की सारी आशाओं पर ही मानो पानी फिर गया ! लेकिन माँ ? अलौकिक थी वह महिमामयी नारी ! उसके उदर से जिसने जन्म लिया था, उसे कल रात ही तपन ने देखा था ! कौन-सी

निष्ठुर नारी कड़ाके की ठण्ड में एक व्यक्ति को बाहर बिठाकर आराम से सो सकती है? या फिर तपन के देखने में भूल होगी, वह उसकी पुत्री न हो। किन्तु यही उसकी माँ और इस संसार की कर्ताहर्ता थी। इसी की पुत्री इतनी निष्ठुर कैसे हो सकती है? हिन्दू नारी होने पर भी अपने पति को पहिचानने का यत्न तक न किया? उसे कुछ कहने का अवसर तक न दिया? उसके भीतर छिपा हुआ रहस्य चाहे जितना भीतिप्रद हो, चाहे जितना कुरूप हो, फिर भी उसे ढूँढ़ निकालने का तपन ने निश्चय कर लिया। इसके बाद ही वह आगे बढ़ेगा!

सोचते-सोचते वह थरथरा उठा—उसने देख लिया कि तपती दूसरे से प्रेम करती है, अपने हृदय सिंहासन पर किसी दूसरे की मूर्ति विराजमान कर उसकी पूजा करती है—तब वह क्या करेगा? उसे लगा कि शायद यही सत्य होना चाहिये। यह आघात सहन करने के लिये उसे तैयार रहना पड़ेगा और तपती को बांझित की प्राप्ति का सुयोग देना होगा! इससमय इससे अधिक कुछ नहीं सोचना था। यदि सचमुच वह किसी दूसरे को चाहती हो, तो भले ही उसे प्राप्त कर ले! यदि नहीं, तो अवश्य ही उसका कुँवारा हृदय एक दिन तपन के पास लौट आयेगा—उस शुभ दिन की वह प्रतीक्षा करेगा। यदि ऐसा भी न हुआ तो तपन का जीवन—वह तो सदैव दुःख के गाढ़ अंधकार में ही रहा था—उसी प्रकार रहेगा!

थका हुआ तपन कुछ देर में सो गया।

शहर के बाहर एक टेढ़ेमेढ़े मार्ग पर विनायक जा रहा था। उसका हृदय विषाद से खिन्न था। उसके एक मात्र अभिन्न मित्र तपन का अंतर विषमय कंटक से बिंध गया था और वह कंटक निकालने का उपाय सरल नहीं था, क्योंकि उसे खींचते समय

तपन का हृदय घायल हो जायेगा ! विनायक विचार करते करते चला जा रहा था। इधर-उधर वसन्त की शोभा बिखर गई थी। माघ का महीना पूरा हो रहा था; सरस्वती-पूजा के दिन आ पहुँचे, किन्तु पूजा का श्रेष्ठ पुरोहित तपन नहीं आयेगा। विनायक का हृदय तपन के विरुद्ध बलवा करने को तैयार हो गया। किसलिये वह बिना जाने-देखे विवाह करने गया ? मि. चटर्जी की सम्पत्ति का तो उसे लोभ था नहीं ! उसे किसी वस्तु का लोभ नहीं था ! बारह वर्ष से वह तपन को देख रहा था। वही तपन एक बात में मि. चटर्जी की पुत्री के साथ विवाह कर बैठा ! जैसा कर्म वैसा ही फल आया था; नहीं तो सारे बंगाल में से तपन को योग्य पत्नी प्राप्त करना कठिन नहीं था।

विनायक गंभीर दुःख में आत्मवंचना की शांति प्राप्त करना चाहता था; अपनी मूर्खता पर उसे हँसी आ गई। तपन बिना कारण कभी कुछ नहीं करता था; उसका हृदय आकाश के तारे जैसा ही ज्वलंत, जागृत और ज्योतिर्मय था !

विनायक कारखाने के निकट आ पहुँचा। वह एक छोटा-सा खिलौनों का कारखाना था। तपन के मस्तिष्क ने तरह-तरह के खिलौनों का आविष्कार किया था और बालकों के मन का उत्कर्ष करने के लिये वे तैयार किये जाते थे। तपन कारखाने का संस्थापक और विनायक उसका मालिक तथा परिचालक था ! तपन अपनी आवश्यकतानुसार कुछ ले लेता था; क्योंकि वह अकेला था, उसका खर्च न कुछ जैसा था। विनायक की माँ और भाई-बहिन थे और मकान किराये से लेकर रहता था।

विनायक को अकेला देख श्रमिकों ने अधीर होकर पूछा :
'छोटे भैया कहाँ हैं ?'

थके हुए स्वर में विनायक ने उत्तर दिया: 'बीमार है ! तुम्हारे लिये मैं सरस्वती से प्रार्थना करके कविता की दो पंक्तियाँ भेजी हैं :—

वासन्ती विलसो शोभा तुम्हारे जीर्ण जीवन में,
दुःखार्त शून्य-से प्राण पुलकित हो नवयौवन में ।

‘चलो भाइयो ! पूजा प्रारम्भ करें ।’

सब झुब्ध और चिन्तातुर हो गये किन्तु पूजा का समय हो चुका था । विनायक ने पूजा प्रारम्भ की । श्रमिक हाथ जोड़कर बैठे रहे ।

पूजा समाप्त करके प्रसाद बाँटते समय विनायक बोला : ‘तुम्हारे छोटे भैया दो चार दिन नहीं आ सकेंगे; बीमारी नहीं, कोई दूसरा कारण है । तुम लोग चिन्ता मत करना ।’

‘वे कुशल तो हैं न ?’

‘हाँ, कुछ सर्दी-सी हुई है ।’

विनायक अकेला वापिस लौटा । रास्ते के दोनों ओर खड़े हुए वृक्ष सूखने लगे थे । कुछ दूरी पर एक-दो वृक्ष लाल फूलों से लद रहे थे ! वसंतागमन से मानो सब लाल हो गया था । यहाँ तक कि तपन का हृदय भी रक्त से लाल हो गया ! विनायक ने लम्बी साँस छोड़ी ।

तपन, उसके बचपन का साथी तपन ! जीवन में जिसने कभी कोई बुरा कार्य नहीं किया था, जीवन को तुच्छ मानकर दूसरों पर उपकार किया था; उसी तपन के जीवन में ऐसी अप्रिय घटना क्यों हुई ? तपन न होता तो मेरी क्या दशा होती ? एम. ए. पास करने पर भी जब कहीं चालीस रुपये की नौकरी न मिली, तब

एक दिन वह निराश होकर आत्महत्या करने के लिये तैयार हो गया था। ठीक उसी समय तपन रास्ते में खड़ी हुई मोटरों पर अपने हाथ से बनाये हुए खिलौने बेच रहा था। विनायक को निराश और हतोत्साह देखकर उसने अपने हाथ की अँगूठी बेचकर उस छोटे से कारखाने का श्रीगणेश किया। उस दिन थी तीन रुपये महीने की कोठरी और दो मजदूर—विनायक और तपन। यह आठ वर्ष पहले की बात है। आज उस कारखाने में पचास मजदूर काम कर रहे थे। वहाँ के खिलौने विदेशी खिलौनों का मुकाबिला करते थे। मासिक आमदनी दो सौ रुपये से कम नहीं थी।

लेकिन तपन ने उसमें से क्या लिया था ? हर महीने पन्द्रह रुपये भी वह नहीं लेता था; सब विनायक के गृह-संसार को दे दिया था। वही असाधारण बन्धुवत्सल तपन आज भाग्यचक्र से घायल, पीड़ित हो गया था। फिर भी विनायक उस पर कोई उपकार नहीं कर सकता था ! शायद कर सके। वह जल्दी जल्दी चलकर एक दूकान में गया और कुछ पैसे देकर तपन को फोन किया।

अस्वस्थ तपन ने फोन लेकर कहा : 'क्या कहते हो, विनायक ?'

'तुमने उसे अपनी सच्ची पहिचान क्यों नहीं कराई, तपन ? वह जरूर तुम्हें प्यार करने लगेगी !'

'नहीं, इसकी कोई आवश्यकता नहीं है ! जो मुझे कुरूप देखकर प्रेम न कर सकी, वह सुन्दर देखकर कभी प्रेम नहीं कर सकती। जिसने मूर्ख समझकर मेरा स्वीकार नहीं किया, उसे मुझे पण्डित जानकर ग्रहण करने का कोई अधिकार नहीं है ! अगर वह किसी दूसरे से प्रेम करती होगी, तो मैं उसे उसीके हाथों में सौंप दूँगा।'

'लेकिन इससे तो...'

‘रहने दो विनायक, ऐसी बातें फोन पर नहीं होतीं।’

तपन ने फोन रख दिया। विनायक थकान के मारे मानो बैठ ही गया। जब वह घर पहुँचा उस समय एक बज गया था। उसकी प्यारी माँ थाली के पास बैठी-बैठी ओके खा रही थी।

विनायक भोजन करने बैठा।

तपती चटर्जी ने सुगन्धित साबुन से स्नान किया; बालों में लाल डोरी बाँधी और हाथ में सितार लेकर कॉलेज-होस्टल में सरस्वती-पूजा के लिये जाने लगी। वहाँ जाकर वह गायेगी, नाचेगी और रूप की बिजली से सब को चकाचौंध कर देगी !

माँने कहा : 'बेटी, तपन उस कमरे में सरस्वती-पूजा कर रहा है, जाकर प्रणाम कर आ।'

नाक चढ़ाकर तपती बोली : 'तू जा, मुझे प्रणाम करने के बहुत-से स्थान हैं !'

वह गाड़ी में जाकर बैठ गई। तपती को बुलाने उसकी जो सहेलियाँ आई थीं वे एकबार तपन को देखने के लोभ का संवरण न कर सकीं। उन्होंने तपन के कमरे के पास जाकर देखा तो वह कन्धे पर उत्तरीय डाले, दरवाज़े की आर पीठ किये पूजा कर रहा था। उसके मुण्डित मस्तक पर खजूर की झाड़ू जैसी चोटी में एक फूल लगा था। युवतियों की टोली अब स्थिर न रह सकी; उन्होंने कैंची लाकर चुपके से तपन की चोटी काट ली। अट्टहास्य सुनकर जब तपन ने पीछे मुड़कर देखा तो मानो कमरे में चाँदनी का बाजार लगा था ! वह मुँह फेरकर पूजा करने लगा। कपाल में चन्दन के त्रिपुण्डवाली मुग्धाकृति आधुनिक समाज की युवतियों

को बिलकुल पसन्द न आई। और तपन ने कई दिनों से डाढ़ी नहीं बनाई थी, यह उसका दूसरा अपराध था। जिस पुस्तक पर वह पुष्प चढ़ा रहा था, उसे सबने आश्चर्य से देखा। लाल रंग की जिल्द पर नाम लिखा था : 'हारु ठाकुर रचित पाँचाली।'

वह बिलकुल अश्लील पुस्तक तपन पढ़ता था और सरस्वती की पूजा के लिये उस पर पुष्प चढ़ाता था ! इस से अधिक बुरा और क्या हो सकता था ! उसके पास दूसरी कोई पुस्तक नहीं थी, और दूसरा कुछ पढ़ने की योग्यता भी नहीं ! उसके साथ हँसी-मजाक करने से क्या लाभ ! युवतियाँ बाहर आकर मुँह दबाकर हँसने लगीं। तपती के भाग्य पर जिन्हें ईर्ष्या थी वे मन ही मन प्रसन्न हुईं। आज उन्होंने तपन की अर्वाचीनता ढूँढ़ निकाली थी।

तपती गाढ़ी में बैठा-बैठी ऊब गई थी। उसने तुनककर कहा : 'इतनी देर क्यों कर दी, मैं नहीं जाऊँगी !'

रेवा मुस्कराकर बोली : 'तेरे दूल्हे को देख आये; पाँचाली पढ़ रहे हैं; अब सोच-समझकर तुझे सचित्र प्रेमपत्र लिखेंगे : 'पंछा उनसे जाकर कहना...'

सब खिलखिलाकर हँस पड़ीं। एक युवती तपन की चोटी लाई थी, वह तपती की साड़ी के पिन में लगाकर बोली : 'तेरे दूल्हे के सिर की ध्वजा, छाती से लगा रखना !'

फिर हास्य की लहर दौड़ गई ! क्रोध के मारे मानो तपती की जबान बन्द हो गई थी। उसने ड्राइवर को धमकाया : 'जल्दी चलाओ, जल्दी !'

सहेलियों में से एक ने सहानुभूति प्रदर्शित की : 'तपु ! कैसे जीवन बिताएगी ?'

दूसरी ने कहा : 'रियली, वी आर सो सॉरी।'

तीसरी बोली : 'इसमें बुरा क्या है ? तपती का हुक्म मानेगा, हाथ-पैर दबा देगा, कभी-कभी पाँचाली पढ़कर सुनायेगा, और जरूरत पड़ने पर खानाबाना भी...'

हा...हा...हा...हँसते-हँसते एक ने कहा : 'मुँह भी लकड़ जैसा है !'

तपती सिर से पाँच तक सुलग उठी, लेकिन कोई उपाय नहीं था। जिसे वे सब देखकर आई थीं, वह सचमुच ऐसा ही था ! तपती विरोध न कर सकी; उसका सारा गुस्सा पिता पर उतरा : पिताजी ने यह क्या किया ? एक मूर्ख, सुधरे हुए समाज की छाया से भी दूर रहनेवाले असभ्य लड़के के हाथों में तपती को सौंप दिया ? आश्चर्य ! अगर ऐसा ही करना था तो उसे पढ़ाया किस लिये ? दादाजी के पास उसने जो कुछ सीखा था उतना ही बस था। उनकी मृत्यु के बाद पिता ने उसे कलकत्ता लाकर कॉलेज में दाखिल किया था, नृत्य और संगीत के शिक्षक रखे थे। पाँच-सात क्लबों में जाने की आज्ञा दी थी। तात्पर्य यह कि सम्पूर्ण आधुनिक रीति से तपती का विकास हुआ था; वह क्या उस पाँचाली पढ़नेवाले और चोटी रखनेवाले मूर्ख—बेवकूफ के लिये ?

कोई बात नहीं ! वह इसका बदला लेकर ही रहेगी !

मिसिस चटर्जी बहुत दिनों से तपती का बर्ताव देख रही थीं। आज उसके मुँह से विद्रोह के शब्द सुनकर वे शंकित होकर उसके आगमन की प्रतीक्षा कर रही थीं। काफी रात बीते तपती लौटी और अत्यंत कटु स्वर में माँ से कहा : 'मेरे मित्र तेरे दामाद के पास न जायें, समझी ? नहीं तो मैं घर छोड़कर चली जाऊँगी !'

'क्यों, बेटी ?' माँ ने स्नेह से पूछा।

‘क्यों !’ तपती के कंठ से चिनगारियाँ झरने लगीं : ‘तुझे कुछ भी मालूम नहीं है ! एक अभागे मूर्ख के गले बाँध दिया—जो चोटी रखता है, पाँचाली पढ़ता है—और पूढ़ती है क्यों ! शरम नहीं आती ?’

माँ असहाय बनकर बैठ रही । दूसरे ही क्षण अपने को सँभालकर बोली : ‘गया मैं पिण्ड देकर आया है, इसलिये चोटी रखी है; तू काट डालना !’

‘तू ही जाकर काट लेना और धो-धोकर पीना । पाँचाली सुनना हो तो वह भी सुनती रहना...’

‘पाँचाली पढ़ने के लिये उसे मना कर दूँगी, बेटी !’

‘तुझे कुछ नहीं करना है, सिर्फ इतना कर देना कि मेरे मित्र उसे न देख सकें ! यही बहुत है ।’

तपती धुआँफुआँ होकर चली गई । माँ ने एकचार तपन के कमरे में झाँककर देखा । अस्वस्थ तपन अकेला बिस्तर में पड़ा सो रहा था । उसके विशाल मस्तक पर मद्धिम प्रकाश पड़ रहा था । मानो परीकथा का राजकुमार हो और सोने की लकड़ी छुआते ही अभी हाल जाग उठेगा ! मिसिस चटर्जी ने गहरी साँस झोढ़कर विचार किया : इतना सुन्दर लड़का पढ़ा—लिखा क्यों नहीं होगा ? दूसरे ही क्षण उसके दारुण दुःखमय जीवन की बात याद आ गई । पिता की मृत्यु के बाद माँ भी परलोक सिंघार गई और असहाय बनकर उसे पुस्तकें बेच डालना पड़ी थीं ! लेकिन अभी उसकी उम्र ही क्या थी ? अब भी पढ़-लिख सकता है !

मिसिस चटर्जी पति के कमरे में गईं । मिस्टर चटर्जी उससमय भी पुत्री के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे । उन्होंने पूछा : ‘तपती आ गई ?’

‘हाँ, अभी हाल आई है ।’

मि. चटर्जी सोने की तैयारी कर रहे थे। मिसिस चटर्जी ने कुछ देर विचारकर कहा : 'लड़की को तपन बिलकुल पसन्द नहीं आता !'

आश्चर्यचकित होकर मि. चटर्जी ने कहा : 'क्यों ? पसन्द न आने का कारण ?'

'मुझे तो लड़का बहुत पसन्द आया, फिर भी लिखना-पढ़ना नहीं आता; पाँचाली और ऐसी ही पुस्तकें पढ़ता है ! लड़की इतने दिनों में एकबार भी उसके पास नहीं गई ! कई बार कहा कि बेटी तपन को बुखार चढ़ा है, जाकर उसके पास बैठ; लेकिन सुनती ही नहीं। आज आकर कह गई कि मेरे मित्र तपन के पास न जायें ! मुझे तो यह अच्छा नहीं लगता। इतनी बड़ी लड़की...!'

पत्नी का उत्तर सुनकर मि. चटर्जी ज़ोर से हँस पड़े और बोले : 'उसकी परीक्षा हो जाने दो, फिर देख लेना ! लड़के को मैं बचपन से जानता हूँ; उसके पिता को भी अच्छी तरह पहिचानता था। पिता का शतांश भी लड़के में होगा तो वह अजोड़ बन जायेगा !'

'लेकिन लड़की तो उससे बात भी नहीं करती; कहती है कि मूरख, गँवार !'

'न तो वह मूर्ख है और न गँवार है। मैंने उससे थोड़ी-बहुत बातचीत करके देख लिया है। तू चिन्ता मत करना, मैं उसे कल से ही अपने धंधे में लगा दूँगा। लड़की की परीक्षा होते ही दोनों को शिलांग के नये बँगले में भेज दूँगा—सब ठीकठाक हो जायेगा।'

'ठीक है, लेकिन वह पाँचाली किसलिये पढ़ता है ? अंग्रेजी नहीं जानता तो कोई बात नहीं; अच्छी-अच्छी बँगाली पुस्तकें और अखबार पढ़ सकता है !'

‘यह बात भूठ है कि वह अंग्रेजी बिल्कुल नहीं जानता। जितनी जानता है उससे मेरे आफिस का काम अच्छी तरह चल जायेगा; और तेरे सुधरे हुए समाज के रीतिरिवाज सीखने में उसे एक महीने से अधिक समय नहीं लगेगा। तू चिन्ता न कर, मैं उसे अप-टु-डेट बना दूँगा !’

मिसिस चटर्जी शांत होकर सो गईं।

दूसरे दिन नाश्ता कराते समय मिसिस चटर्जी ने तपन से कहा : ‘तू पाँचाली किसलिये पढ़ता है, बेटा ! तपु के बहुत-से अखबार आते हैं वे सब पढ़ा कर, अच्छी-अच्छी बंगाली पुस्तकें पढ़ना सीख, समझा !’

उत्तर में तपन हँसकर बोला : ‘पाँचाली तो बंगला का आदि-साहित्य है माँ ! उस पर इतना क्रोध किसलिये ?’

‘नहीं बेटा, वह सब आजकल नहीं चलता इसलिये कहती हूँ। सुधरे हुए समाज में उसकी कदर नहीं है।’

‘लेकिन मैं सुधरा हुआ नहीं हूँ माँ ! मैं बहुत पुराना, आपके श्वसुर जितना पुराना हूँ। और यह पाँचाली पुस्तक आपके ही श्वसुर की है—कल ही आपके घर में मिली !’

स्निग्ध मधुर हास्य के साथ मिसिस चटर्जी बोली : ‘हाँ, ऐसी बात है बेटा ! तो तू श्वसुर की ओर से आया है, क्यों ?’

तपन मृदु हास्य करके बोला : ‘हाँ, माँ ! अब लड़का बनकर आया हूँ !’

मिसिस चटर्जी के समाज में ऐसी सरलतापूर्वक बातें नहीं होती थीं। वहाँ बातचीत का प्रवाह आंतरिकताहीन कृत्रिमता के बीच बढ़ जाता था। लेकिन वे सब ऊपरी बातें हृदय को आकर्षित नहीं करती थीं; जब कि यह बातें क्षणभर में अपना बना

लेती थीं। तपन मानो धीरे-धीरे उसकी पुत्रहीनता के स्थान की पूर्ति कर रहा था। ऐसे सुन्दर लड़के को उसकी पुत्री स्वीकार नहीं करेगी? अवश्य स्वीकार करेगी। लड़की की परीक्षा हो जाने दो, फिर उस पर कड़ा प्रतिबंध रखेगी। तपन तो घर में ही था, इस-लिये घबराने की कोई बात नहीं थी।

दूसरे दिन अंग्रेजी कम्पनी का कोट-पतलून पहिनाकर मि. चटर्जी तपन को आफिस में ले गये। तपन अब उनके कामकाज में मदद करेगा।

प्रातःकाल उठकर अपनी टू-सीटर कार में थोड़ा घूमने के बाद तपती स्नानादि से निवृत्त होकर पिता के साथ चाय-नाश्ता करके पढ़ने बैठ जाती। तपन उस समय स्नान करके अपने कमरे में पूजा करने बैठता। जब वह भोजन करने आता उस समय वहाँ अकेली मिसिस चटर्जी रहती थीं।

नाश्ता करके तपन बाहर चला जाता। कई जगह उसकी कंपनी के कंट्रैक्ट के मकान बनते थे, उनकी देखरेख के लिये वह चला जाता था। जब लौटता, उस समय तपती भोजन करके अपने कमरे में आराम करने चली जाती थी। दोपहर का भोजन करके वह फिर बाहर चला जाता और शाम को साढ़े पाँच-छह बजे फिर भोजन करने आता। उसके आने से पहले ही कभी तपती अपने मित्रों के साथ घूमने चली जाती, कभी टेनिस खेलती, या फिर मित्रों के साथ नृत्य-संगीत का कार्यक्रम जमाकर अपने कमरे में बैठी रहती। तपन से साक्षात्कार करने का उसे समय नहीं था, इच्छा तो थी ही नहीं! भाग्यवशात् कभी ऐसा मौका आ भी जाता, किन्तु तपती उससे जितनी दूर रहती थी, उससे भी दूर तपन रहता था। शाम

को भोजन करके वह बाहर चला जाता और रात को साढ़े दस बजे पहुँचे वापिस नहीं लौटता।

मिस्टर और मिसिस चटर्जी उसे इतना परिश्रम करने को मना करते थे, किन्तु तपन हँसकर कह देता था : 'गरीब का लड़का जो ठहरा, माँ ! मेहनत-मजदूरी करके ही बड़ा हुआ हूँ !'

मिसिस चटर्जी गुस्से के स्वर में कहतीं : 'जब था तब था, बेटा ! अब तुझे किस बात की कमी है ? इतनी मेहनत न किया कर !'

तपन हँसकर कहता : 'पिताजी को कुछ सहायता देने के लिये मेहनत करता हूँ, माँ ! मुझ में बुद्धि कम है, इसलिये खूब सावधानी से काम करना पड़ता है; जिससे कोई भूल न हो। मुझे मेहनत करने में आनन्द आता है।'

मिसिस चटर्जी कोई उत्तर न दे पातीं। कुछ देर सोचकर उन्होंने कहा : 'तेरे लिये एक कार खरीद दूँ, बेटा !'

'क्या जरूरत है माँ ! ट्राम में मझे से जाता-आता हूँ !'

लेकिन दूसरे ही दिन मिसिस चटर्जी तपन के लिये एक गाड़ी खरीद लाईं। उस दिन तपन नई गाड़ी में बैठकर आफिस गया। शाम को लौटकर गाड़ी कम्पाउण्ड में रख दी और भोजन करने चला गया। इतने में तपती ने नई कार देखी। गाड़ी वास्तव में सुन्दर थी ! वह दूसरी सीढ़ी से नीचे उतर आई और गाड़ी लेकर घूमने चली गई। तपन ने नीचे आकर दरबान के मुँह दीदीमणि की बहादुरी सुनी और हँसने लगा। ट्राम का पास जेब में था, उसे टटोलकर वह चल दिया और ट्राम में बैठ गया।

रात को लौटने पर माँ ने कहा : 'लड़की बड़ी नटखट है बेटा, तेरी गाड़ी लेकर घूमने चल दी ! मैं नाराज हुई तो हँसने लगी !'

‘कोई बात नहीं माँ ! नादान है । नई गाड़ी उसे पसन्द आई हो तो ले लेने दो, मैं मज़े से ट्राम में आ-जा सकता हूँ ।’

‘नहीं बेटा ! तू कहाँ बूढ़ा हो गया है ? और लड़की के लिये तो दूसरी गाड़ी है । तू उसे अपनी गाड़ी मत देना !’

उत्तर में तपन मुस्कराया, किन्तु बोला कुछ नहीं । भोजन करते-करते वह सोचने लगा : तपती का यह लड़कपन था या इसमें कोई दूसरा हेतु होगा ? इन पंद्रह दिनों में एकबार भी तपन ने उसे नहीं देखा था । दोनों एक दूसरे से दूर भागते थे । फिर यकायक उसके लिये खरीदी गई गाड़ी लेकर घूमने चले जाने का क्या मतलब ? क्या वह चाहती होगी कि तपन उससे हिलेमिले, उसके साथ घूमने जाये—या फिर इस से विपरीत...! तपन कुछ निर्णय न कर सका । भोजन करके वह अपने कमरे में सोने चला गया ।

लेकिन नींद कहाँ से आती ! तपती ने उसके पच्चीस वर्ष के जीवन में आग लगा दी थी । तपन ने थोड़े ही दिनों में देख लिया था कि जिनके साथ वह घूमने जातो थी, संगीत को महफिल जमाती थी, टेनिस खेलती थी—वे सब आधुनिक समाज के युवक-युवती थे । सभ्य, सुन्दर और सर्व प्रकार से तपती के योग्य ! इतने सारे युवकों को छोड़कर किसलिये मि. चटर्जी ने उसके साथ अपनी पुत्री का विवाह किया ?—वह सोच न सका । उसके पिता के साथ मि. चटर्जी की मित्रता थी । जब वह बिलकुल छोटा था, उसी समय मि. चटर्जी की पुत्री के साथ उसके विवाह की बात तय हो गई थी । लेकिन अभी तक मि. चटर्जी यह बात क्यों भूल गये थे, और आज इतने दिनों के बाद किसलिये यह कर दिया ? लेकिन अब यह सोचना व्यर्थ था । जो होना था वह हो चुका था !

सबेरे नित्यकर्मों से निवृत्त होकर वह बाहर जाने के लिये निकला । नौकर के कहने से मालूम हुआ कि उसकी गाड़ी लेकर

तपती प्रातःकाल ही घूमने निकल गई थी और अभी तक वापिस नहीं लौटी थी ! चूँकि तपती की गाड़ी गॅरेज में थी, किन्तु उसे लेने में तपन को संकोच हुआ। सिर्फ संकोच ही नहीं, कुछ घृणा भी हुई। कई बार तपन ने देखा था कि उस गाड़ी में ड्राइवर की जगह तपती और बगल में मि. बनर्जी या मि. अधिकारी या मि. चौधरी—और कभी-कभी तीनों बैठे होते थे ! यह गाड़ी न लेना ही ठीक है। तपन ट्राम में बैठकर चला गया।

तपती ने लौटकर देखा तो उसकी टू-सीटर कार गॅरेज में थी। उसने नौकर से पूछा : 'जमाई बाबू गाड़ी नहीं ले गये ?'

'नहीं हुजूर ! ट्राम से गये हैं।'

तपती ऊपर चली आई और चुपचाप अपने कमरे में जाकर पढ़ने बैठ गई। लेकिन माँ को सारी बात मालूम थी। पुत्री को देखकर उसने कुछ ऊँचे स्वर में कहा : 'बेटी ! आज फिर तूने उसकी गाड़ी ले ली ?'

'ले ली तो क्या हो गया माँ ? वे मेरी गाड़ी क्यों नहीं ले गये ? कह देना कि मेरी गाड़ी ले जायें। नई गाड़ी देखने में अच्छी है इसलिये मैं ले गई थी और अब मैं वही गाड़ी लूँगी !'

'माँ ने आश्चर्य से पूछा : 'क्यों, तेरी गाड़ी क्या बुरी है ?'

'कुछ भी हो, मुझे नई गाड़ी पसन्द है। उसका रंग भी अच्छा है और भागती भी खूब है। लेकिन मेरी गाड़ी कोई खराब नहीं है; कह देना एकबार बैठकर देखें।'

कहकर वह मुस्कराने लगी। माँ ने सोचा : लड़की दामाद की बराबरी करती है। बड़ी हो गई, इसलिये शर्म के मारे कुछ कह नहीं पाती; और आजकल की लड़कियों को पहिचानने का तो कोई उपाय ही नहीं है ! शायद लड़की-दामाद के बीच कोई बातचीत

हुई होगी ! यह तो एक प्रकार से अच्छा ही था। माँ ने संतोष की साँस लेकर कहा : 'भले, दोनों अदलाबदली कर लो !'

'हाँ, तू उन से कह देना !'

इतना कहकर उसने पुस्तक पर आँखें गड़ा दीं। माँ लौट आई। दोपहर को जब तपन भोजन करने आया तब माँ ने कहा : 'तू तपु की गाड़ी ले जाना बेटा ! तेरी गाड़ी का नीला रंग उसे बहुत पसन्द आया, इसलिये वह लेना चाहती है।'

'कोई बात नहीं माँ ! वह भले ही ले ले, मुझे गाड़ी की क्या जरूरत है ? पहले जिस तरह जाता था उसी तरह अब भी ट्राम में चला जाऊँगा।'

'नहीं बेटा, नहीं !' माँ घबराकर बोली, 'तो मैं उससे गाड़ी ले लूँगी।'

'कैसी बात करती हो माँ ! अभी उसके पढ़ने का समय है, उसे बुरा लगेगा। भले ही दोनों गाड़ियाँ उसके पास रहें। इच्छा-नुसार दोनों गाड़ियाँ काम में लेगी।'

'और तू ट्राम में जायेगा बेटा ?'

हँसकर तपन बोला : 'माँ, मैं एक मोटर-साइकिल खरीद लूँगा।'

'वह तो बड़ी ख़तरनाक होती है बेटा, खूब डर लगता है !'

'डरने की कोई बात नहीं माँ ! मुझे कुछ नहीं होगा।'

'माँ ने कुछ संतोष के साथ कहा : 'लड़की भी खूब है !'

'तुम्हारी पुत्री का गाड़ी बिना एक दिन नहीं चल सकता और मैं तो अपनी पाँच-गाड़ी पर ही पच्चीस वर्ष तक चलता रहा ! मेरे लिये इतनी चिन्ता क्यों करती हो ! फिर मोटर-साइकिल पर बैठना मुझे खूब पसन्द है !'

‘अच्छी बात है बेटा, ऐसा करना। आज ही एक गाड़ी खरीद लेना।’

भोजन के बाद अपने कमरे में आते ही तपन को हँसी आ गई : जो सम्पत्ति के बीच रहते हैं, वे सम्पत्ति द्वारा ही मनुष्य को वश में करना चाहते हैं। लेकिन मनुष्य संपत्ति की अपेक्षा एक वस्तु अधिक चाहता है—यह वे कैसे समझें ? खैर, मोटर-साइकिल खरीदना ही पड़ेगी; नहीं तो माँ साँचेंगी कि उसे लड़की पर गुस्सा आया है।

दूसरे दिन तपन मोटर-साइकिल पर बैठकर घर आया।

तपती परीक्षा की तैयारी में इतनी संलग्न थी कि तपन उसका वास्तविक स्वरूप नहीं देख पाता था। फिर भी वह अच्छी तरह समझ गया था कि तपती के हृदय में उसके लिये स्थान न था। कदाचित् वह अपने मित्रों में से किसी को चाहती हो, या अभी तक उसे किसी से प्यार करने का सुयोग न मिला हो, किन्तु वह तपन का स्वीकार कदापि नहीं करेगी—यह मानो उसे समझा देना चाहती थी।

उस दिन भी तपन के बाहर निकलने से पूर्व ही तपती ने मोटर-साइकिल ले ली और बगीचे में घास पर घूमने लगी। तपन थोड़ी देर चुपचाप दरवाज़े के पास खड़ा रहा;—इस उद्देश से कि शायद उसे देखकर वह मोटर-साइकिल रख देगी! तपन उसकी ओर पीठ देकर खड़ा था। तपती ने साइकिल की ज़ोर से घर्घर आवाज़ की और अपने एक पुरुष-मित्र के साथ बाहर निकल गई। मानो उस घर की सारी वस्तुओं पर उसी का अधिकार था—तपन का बिलकुल नहीं! तपन कुछ दूर पैदल चलकर एक ट्राम में बैठ गया और उसके बाद हमेशा ट्राम में ही जाने-आने लगा।

एक-दो दिन में माँ को खबर पड़ते ही उन्होंने तपती से कहा: 'यह तूने क्या ऊधम मचा रखा है, तपु?'

अट्टहास से कमरे को भरकर तपती ने उत्तर दिया : 'तू जानती है माँ ! मोटर तो बहुत-सी लड़कियाँ चलाती हैं, लेकिन मोटर-साइकिल चलाना उन्हें नहीं आता ! आज मैंने सबको हरा दिया !'

माँ ने खुशी होने के बदले झुँझलाकर कहा : 'तो अपने पिताजी से कहकर दूसरी खरीद लेना; तूने उसकी गाड़ी क्यों ली ?'

'इस में बुरा क्या किया ? इसे तो तेरे दामाद अपना अहोभाग्य समझेंगे !'

कहकर वह एक अंग्रेजी गीत की पंक्ति गुनगुनाती हुई चली गई ।

लड़की का मन दामाद के अनुकूल था या प्रतिकूल ?—आज माँ स्वयं जन्म दी हुई लड़की के हृदय की बात नहीं समझ सकती थी ! उसके जमाने में यह सब नहीं था । वह धनवान् श्वसुर की पुत्रवधू बनकर आई थी । प्रथम दर्शन में ही पति को अपना मान लिया था; पति ने भी उसका उसी तरह सन्मान किया था । लेकिन इस जमाने की हवा कब किस ओर बहेगी—यह जानने की शक्ति स्वयं महाकाल में भी शायद नहीं होगी !

तपन के घर आते ही उन्होंने उत्सुक होकर पूछा : 'ट्राम में आया बेटा ?'

'हाँ, माँ ! लेकिन तुम क्यों इतनी चिन्ता करती हो ? ट्राम में भी बड़े-बड़े रईसों के लड़के बैठते हैं; वह कोई बुरी नहीं है, माँ !'

माँ कुछ देर चुप रही । यह दरिद्र लड़का अपने को दरिद्र कहने में ज़रा भी संकोच नहीं करता ! शायद अभीहाल बोल उठेगा : 'मैं तो फुटपाथ का आदमी हूँ माँ ! आपकी राजशाही मोटर में न बैठा तो भी क्या ? राजशाही तो है !' और जब उसे दी हुई वस्तु अपनी ही लड़की ने छीन ली थी तब अधिक कहना उचित नहीं था । शायद वह सोचने लगेगा कि अपनी लड़की से

तो कुछ कह नहीं सकतीं, सब मुझ से ही कहती हैं ! उसकी सज्जनता का लाभ उठाकर लड़की खूब अन्याय करती थी। कुछ विचारकर उसने कहा : 'तपु की गाड़ी तू क्यों नहीं लेता, बेटा ?'

'मुझे गाड़ी की बिलकुल जरूरत नहीं है माँ ! तुम व्यर्थ ही चिन्ता करती हो। जरूरत होगी तब ले लूँगा। हम लोग आपस में समझ लेंगे।'

माँ ने सोचा : यही योग्य है। जरूर दोनों में कोई बात हुई होगी। वह कुछ न बोली।

भोजन के बाद तपन जाने लगा, तब माँ ने कहा : 'आज तपु की वर्षगाँठ है बेटा, ज़रा जल्दी आ जाना !'

'कांशिश करूँगा, माँ !' कहकर वह चला गया।

सायंकाल 'तपती-निवास' में खूब धामधूम हो रही थी। आधुनिक समाज में विवाह से पूर्व ही लड़की की वर्षगाँठ मनाई जाती है—विवाह के बाद नहीं; क्योंकि वर्षगाँठ का उत्सव लड़के-लड़कियों की परस्पर पसन्दगी और विवाह की तैयारी के लिये होता है। लेकिन तपती इकलौती पुत्री होने से आज भी उसकी वर्षगाँठ बड़ी धामधूम से मनाई जा रही थी।

तपती के मित्रों की टोली उसे घेरकर बैठी थी। एक युवती गीत गा रही थी। बड़े-बड़े रईस आकर उसे आशीर्वाद दे गये। कुछ लोगों ने मिसिस चटर्जी से दामाद के सम्बन्ध में पूछताछ की। उन्होंने सब से कहा कि वह एक आवश्यक कार्य होने से बाहर गया है और कुछ ही देर में आ जायेगा।

मि. चटर्जी न सुन सकें इस तरह मि. अधिकारी ने कहा : 'वे ब्राह्मण देवता कहाँ गये ? डरकर भाग गये हैं क्या ?'

मि. बनर्जी ने उत्तर दिया : 'डर से नहीं, चिन्ता से; यह सोचकर कि हम लोग उनकी मूर्खता पकड़ लेंगे !'

मि. चौधरी ने कहा : 'उस दिन रेवादेवी ने उनकी चोटी काट डाली थी !'

रेवा ने कहा : 'सिर बिलकुल घुटा हुआ है, ऊपर से थोड़ा मट्टा डाल देना, तपती !'

'नहीं, नहीं, मिस चटर्जी ! मट्टा नहीं, उनके सिर पर कॉड-लीवर ऑइल डालना; विटामिन मिलने से बाल उग आयेंगे !'

सब खिलखिला पड़े। अपने को मिस चटर्जी कहलानेवाली तपती ने कहा : 'चुप भी रहो ! माँ सुनेगी तो बकवाद करेगी !'

'बकवाद करेंगी ? इसके लिये तो आपके माँ-बाप ही जिम्मेवार हैं ! आप जैसी पुत्री को एक बन्दर के गले में बाँधते समय उन्होंने ज़रा भी विचार नहीं किया ?'

तपती कुछ देर तक चुप रही। फिर बोली : 'मि. बनर्जी ने मुझे एक घड़ी दी, मि. चौधरी ने इयरिंग दिये, और मि. अधिकारी ने जो देना था वह न देकर एक बेकार-सी चीज़ दी; इसकी इन्हें सज़ा मिलनी चाहिये।'

सब एक साथ बोल उठे : 'सर्टनली (ज़रूर) !'

मि. अधिकारी ने कहा : 'अगर एक वस्तु आप स्वीकार कर लें तो मैं अपने को भाग्यशाली समझूँ।'

'ज़रूर लूँगी, दो !'

'कौन-सी चीज़ है, मि. अधिकारी ?' मि. बनर्जी ने पूछा।

'एक डायमंड-रिंग...!' तपती ने ही उत्तर दिया।

सब लोग कुछ विचार में पड़ गये। एक विवाहित युवती को अँगूठी दी जा सकती है ? लेकिन तपती सिद्ध कर देना चाहती थी कि वह विवाहित नहीं थी, और इसी लिये 'मिस चटर्जी' कहकर

बुलाने पर भी कोई विरोध नहीं करती थी। मि. अधिकारी एक रईस के लड़के थे; वे तपती के लिये हीरे की अँगूठी खरीद लाये थे। अँगूठी लेकर वे तपती की ओर आगे बढ़े और तपती ने अपना बायाँ हाथ आगे बढ़ाया।

मि. अधिकारी अँगूठी पहिना रहे थे उसी समय तपन माँ के साथ अन्दर आया। उसके हाथ में फूलों की माला थी। तपती का वह कार्य देखकर माँ चौंक उठी, किन्तु तपन की उपस्थिति में कुछ न कहकर सिर्फ इतना ही बोली : 'प्रणाम कर बेटी !'

तपती टस से मस न हुई ! क्षणभर प्रतीक्षा करके तपन बोला : 'रहने दो माँ ! मैं इसी तरह आशीर्वाद दिये देता हूँ।' कहकर वह माला तपती के हाथों में देने लगा और साथ ही साथ बोला :

'तुम्हारे जीवन में पवित्र यज्ञशिखा प्रज्वलित हो !'

तपती ने माला फेंक दी और क्रोध से बोली : 'क्या यह राम-लीला का पार्ट अदा कर रहे हो ? आशीर्वाद का ढँग तो देखो !'

मित्र हँस पड़े, किन्तु माँ कुण्ठित हो गई ! वह कुछ बोले उससे पहले ही तपन ने कहा : 'कहने दो माँ ! मुझे बुरा नहीं लगता।'

कहकर वह चला गया। माँ भी विरक्त होकर चली गई। मित्रों की टोली हँसी रोककर बोली : 'सचमुच बिलकुल अट-पटाँग है !'

दूसरे दिन सवेरे तपती की सहेली शिखा आ पहुँची। वह बोली : 'कल ही आई हूँ बहिन ! तेरे पति कहाँ गये ? कुछ बात-चीत तो कर लूँ !'

'बातचीत करने की क्या जरूरत है, वह बिलकुल नालायक है !'

‘हाय माँ ! यह क्या कहती है ! क्यों ?’

‘भाग्य में लिखा था सो हुआ; और क्या ! दादाजी ने कुछबली देखकर कहा था कि तेरा पति अद्भुत होगा; सचमुच अद्भुत है— बिलकुल रामजीला का विदूषक !’

शिखा कुछ उत्सुक होकर बोली : ‘आखिर बात क्या है, तपु ?’

‘तेरा सिर ! जा, जाकर देख आ; उस कमरे में !’

शिखा कुछ न बोली; वह चुपचाप तपन के कमरे के दरवाजे में आकर खड़ी रही। तपन पूजा समाप्त करके खड़ा हो रहा था। मुँह फेरते ही शिखा को देखा। उसका चंदनचर्चित उन्नत ललाट, उज्ज्वल देहकान्ति और शुभ्र उपवीत ने क्षणभर में शिखा को आकर्षित कर लिया ! शिखा भूल गई कि वह अपने सहेली के पति से मिलने आई थी; भूल गई कि उसके साथ अपना क्या सम्बन्ध है ! दोनों हाथ जोड़कर नमस्कार करते हुए वह तपन को साष्टांग दण्डवत् कर बैठी !

मृदु मुसकराकर तपन बोला : ‘तुम कौन हो बहिन ? इस समाज में तो तुम्हारे दर्शनों की आशा नहीं थी !’

कुछ क्षण तक शिखा बोल न सकी। फिर धीरे-धीरे बोली : ‘मैं आपकी छोटी बहिन और तपती की सहेली—जस्टिस मुकर्जी की लड़की हूँ !’

‘अरे, तुम्हीं शिखा ! लेकिन एक बात कहना है !’

‘कहिये !’

‘यहाँ तुमने मुझे किस हालत में देखा, क्या देखा,— यह एक भी बात अपनी सहेली से या किसी दूसरे से मत कहना। आज शाम को मैं तुम्हारे घर आकर सब कहूँगा। बहुत-सी बातें कहना हैं। तुम इसी समय घर चली जाओ, शिखा !’

‘जाती हूँ; लेकिन आपने मेरा नाम कैसे जान लिया ?’

‘माँ से सुना था। अब अधिक कुछ मत कहना।’

शिखा बाहर निकली और कार में बैठकर चली गई। जाते समय वह तपती से मिली भी नहीं।

तपन के आतिथ्य के लिये शिखा ने तरह-तरह के पकवान बनाये थे। थोड़ी-सी देर के परिचित तपन के सम्बन्ध में ही वह दिनभर सोचती रही थी। अद्भुत था वह पुरुष ! जो क्षणभर में सामने वाले व्यक्ति को अपना बना सकता था, उस व्यक्ति के संबंध में तपती ने ऐसी धारणा क्यों बना ली ! शिखा दिनभर सोचती रही : जरूर इसमें कोई रहस्य होना चाहिये ! जब वह भागलपुर में थी तब उसने तपती के विवाह के झगड़े की बात सुनी थी। आज उसी तपती के पति को देखकर मुग्ध हो गई थी। शिखा की एक बहिन थी, लेकिन भाई एक भी नहीं; वह सोचने लगी—कितना अच्छा हो यदि तपन उसका दादा बन जाये ! वह आनन्द से नाच उठी : ‘हाँ, जरूर बन जायेंगे !’

फिर सोचने लगी : ‘आते समय तपती से न मिली—यह ठीक नहीं हुआ; लेकिन उन्होंने मना जो किया था ! उनको बात कैसे टाल सकती था ! तपती भले ही नाराज़ हो जाये ! उसे मनाने में क्या देर ! पहले दादा के मुँह से सारी बात तो सुन लूँ !’

तपन आ पहुँचा। उसने कोट-पतलून पहिना था। आते ही शिखा से बोला : ‘पहिचानती हो बहिन ?’

‘कैसे पहिचानूँगी; तुमने तो वेश बदल दिया है !’

दोनों हँस पड़े।

शिखा आवेगमय स्वर में बोली : ‘कुछ समझ में ही नहीं आता कि कब हृदय में दादा का आसन लेकर बैठ गये !’

‘चलो, पहले माता-पिता को प्रणाम कर आयें।’

आनन्दातिरेक में शिखा तपन को अन्दर ले गई और माता-पिता से परिचय कराया। तपन ने दोनों को साष्टांग प्रणाम किया और बोला : 'मैंने स्वयं ही निमंत्रण माँगा है काकी माँ ! आपकी पुत्री ने बिलकुल नहीं कहा !'

'कहती कैसे ! कहने जितना समय भी दिया था ? पहुँचते ही निकाल दिया बेचारी को !'

जस्टिस मुकर्जी बहुत सीधेसादे और गंभीर प्रकृति के थे। उन्होंने अपना गाम्भीर्य तोड़कर कहा : 'शंकर कहता था कि दामाद तो अच्छा मिल गया; लेकिन किसे खबर थी कि इतना अच्छा होगा ! बैठ बेठा ! मालूम होता है तुम्हें तो फॉर्मेलिटी की कोई परवाह ही नहीं है ! बड़ा अच्छा लड़का है !'

'तपन बहुत अच्छे लगे पिताजी ? इतनी प्रशंसा कर दी !' शिखा ने हँसकर पिता की ओर देखा और कहा। शिखा की माँ खड़ी-खड़ी देख रही थी; बोली :

'तेरे ध्यान में कोई पात्र हो तो बनला बेठा, दोनों को बाँध देना है !'

शिखा चौंककर बोली : 'क्या ये गाय-बैल हैं जो बाँधना चाहती है ?'

'तेरी सहेली उस दिन सर रमन की पार्टी में कह रही थी कि उसे एक खूँटे से बाँध दिया था। तुम्हें भी हम खूँटे से बाँधने की खोज में हैं !'

'नहीं माँ, गाय-बैल मत कहना, यह तो मेरे दादा हैं !' शिखा धीरे-से हँसकर बोली।

'जरूर कहना काकी माँ ! मेरी माँ अन्तिम दिन तक मुझ से बैल और गधा ही कहती थी। उसके बाद मुझ से किसीने ऐसा नहीं कहा। तुम कहो, तुम्हारे मुँह से अपनी माँ की बोली एकबार सुन जूँ !' तपन की आँखें चमक उठीं।

शिखा की माँ विह्वल होकर बोली : 'तू अगर बैल हो तो आदमी कौन होगा बेटा ? मैं तो यही सोच रही हूँ। लेकिन तू तो सीधा आफिस से आ रहा है न ! चल, हाथ-मुँह धो ले, भोजन करते-करते बातचीत करना !'

भोजन करते समय तपन बोला : 'शिखा का विवाह करना चाहती हो काकी माँ ! अभीतक कोई निर्णय तो नहीं किया ?'

'नहीं बेटा ! कोई निर्णय नहीं किया। लड़की को खूब बड़ा करना भी अच्छा नहीं लगता। आजकल चारों ओर ताड़ जैसी लड़कियाँ मोटरों में बैठकर इधर-उधर भटकती हैं। उम्र काफ़ी हो जाती है, लेकिन विवाह नहीं होता। समाज में कई लड़कियाँ कुंवारी रह जाती हैं !'

'आपके समाज में तो ऐसा ही है काकी माँ ! लेकिन 'समाज पर इतना क्रोध क्यों ?'

'नहीं बेटा ! हमारे समय का समाज अच्छा ही था। विवाह करती नहीं हैं और आवारा की तरह घूमा करती हैं; फिर उम्र बढ़ जाने पर विवाह नहीं होता। आजकल ऐसा ही हो रहा है !'

'आशा ही आशा में रहती हैं काकी माँ ! ऐसा मानती हैं कि कोई बहुत अच्छा वर मिल जायेगा; इसी तरह उम्र बढ़ जाती है। हमारे समाज में आपकी तरह लड़कियों का जबरन विवाह नहीं किया जाता। जबरन विवाह करने का मैं पक्षपाती नहीं हूँ; फिर भी सोलह से बीस वर्ष की उम्र में तो लड़कियों का विवाह कर ही देना चाहिये।'

शिखा अभीतक सिर नीचा किये चाय बना रही थी; वह बोल उठी : 'तपी की उम्र तो अभी बीस की भी नहीं है; इतने में तो...'

'तू चुप रह ! बड़ों की बात में नहीं बोलते।' तपन ने कहा।

शिखा ने आनन्दमय मुद्रा में तपन की ओर देखा। शिखा के दादा का अधिकार उसने बड़ी सरलता से स्वीकार कर लिया था। इस तरह उसे किसी ने धमकाया नहीं था। इतनी मिठास से, इतनी आंतरिकता से ! हँसते हुए उसने चाय के कप आगे रख दिये और बोली : 'अच्छी बात है, बड़ों के साथ की बातचीत पूरी हो जाये तब मुझ से कहना।' कहकर वह जाने लगी; किन्तु माँ ने उसे रोककर कहा : 'जाती कहाँ है ?'

शिखा ने पीछे मुड़कर कहा : 'चिंता किसलिये करती है माँ ! यह सुधरे हुए समाज के चटर्जी, बनर्जी, मुकर्जी, घोष, बोस या मित्र नहीं हैं। मेरे न होने से इन्हें कोई आपत्ति नहीं होगी। मैं थोड़े-से फूल ले आऊँ।'

शिखा चली गई। तपन हँसकर बोला : 'काकी माँ ! इस अर्ध-विलायती शहर में आपने किस तरह लड़की को आचार-व्यवहार से शुद्ध रखा है ?'

'मैं इस पर कड़ी नज़र रखती हूँ बेटा ! मैं ठहरी भट्टाचार्य ब्राह्मण की पुत्री, एकदम मर्यादी ! यहाँ के रंगढंग देखकर ऐसा लगता है कि हमारे समाज में बहुत कुछ अच्छाई थी। बुराईयाँ नहीं थीं ऐसी बात नहीं है; लेकिन आज तो सब अच्छा छोड़कर बुरे का ही अनुसरण कर रहे हैं !'

तपन ने मुसकराकर सब सुना; फिर धीरे-धीरे बोला : 'मैं देखते ही समझ गया था, काकी माँ ! आप के सतीत्व का रक्त उसकी नस-नस में बह रहा है। अच्छा काकी माँ ! आप मुझ पर छोड़ दें तो मैं इसके योग्य और आपको पसन्द आ जाये ऐसा लड़का ढूँढ़ दूँगा। लेकिन मेरी ससुराल में खबर न पहुँचे कि मैं यहाँ आया था ! क्योंकि शिखा के साथ मेरा सम्बन्ध वे लोग जानते हैं उसकी अपेक्षा अधिक है !'

'तू उनसे कहकर नहीं आया ?'

‘नहीं, और न कभी कहकर आऊँगा। क्योंकि मैं उनका दामाद बनकर यहाँ नहीं आता, मैं तो अपनी बहिन से मिलने आता हूँ ! काकी माँ ! मैं शिखा को अपनी सगी बहिन मानता हूँ। मैं आज-कल के ‘कहलाने वाले भाइयों’ में से नहीं हूँ, और न हर किसी को ‘दादा’ कहने की अनुमति देता हूँ।’

‘भले बेटा ! तू शिखा का भाई है, यह उसके लिये गौरव की बात है !’

‘मेरा कोई नहीं है काकी माँ !—सिर्फ चचेरी बहिन है ! आज सवेरे तक वह एक ही बहिन थी, उससे चाहे जिस तरह बोलता और परेशान करता था। आज से मेरी दो बहिनें हो गई—शिखा और वह !’

शिखा एक चाँदी की तश्तरी में थोड़े-से फूल लेकर आई और बोली : ‘पाँव निकालो दादा ! तुम्हारे पैरों में सफेद फूल के सिवा कुछ नहीं रख सकती।’

माँ बोली : ‘तुम दोनों बातें करो बेटा, मैं ज़रा घर का काम-काज देखूँ।’ कहकर वह चली गई।

‘बहिन ! तुझ से एक बात पूछूँ; सच्चा उत्तर देगी ?’

‘तुम से झूठ नहीं बोलूँगी, दादा ! चूँकि मैं कई बार झूठ बोलती हूँ।’

तपन ने अपने विवाह से लेकर आजतक की बात कह सुनाई और पूछा : ‘उसका मतलब क्या होगा शिखा ! क्या वह किसी दूसरे से प्रेम करती होगी ?’

‘यह तो नहीं कह सकती दादा ! ऐसा तो मैंने कुछ नहीं देखा। उसने तुम्हें समझने में भूल की है; मैं कल ही उसे समझा दूँगी।’

‘नहीं...’ तपन के स्वर में दड़ता थी। ‘नहीं शिखा ! तो मैं तुम्हे भाई का स्नेह नहीं दे सकूँगा। अगर वह मुझे चाहती है, तो अपनेआप चाहेगी, किसी के कहने से नहीं। मैं जैसा हूँ, जिस रूप में उसने मुझे देखा है, उसी तरह मैं उसका हृदय जीतना चाहता हूँ। अगर न जीत सका तो समझ लूँगा कि वह मेरी नहीं है।’

कुछ क्षणों तक नीरवता रही। तपन फिर बोलने लगा : ‘मैंने किसी सुधरी हुई लड़की से विवाह नहीं किया था, शिखा ! सोचा था कि स्वर्गीय महात्मा श्यामसुन्दर चटर्जी की पौत्री से विवाह कर रहा हूँ।’ कहकर उसने हाथ मस्तक से लगाये और बोला : ‘और सुना कि मेरे पिता ने मि. चटर्जी को वचन दिया था; इसलिये पिता की आज्ञा का पालन और आपत्ति में फँसे हुए मि. चटर्जी की सहायता करना चाहता था। सोचा था कि अपनी जन्म-जन्म की साथिन वहीं से प्राप्त कर सकूँगा।’

व्यथा और वेदना से तपन का कण्ठस्वर म्लान हो गया। शिखा उसके मुँह की ओर ताक रही थी। उसकी आँखें डबडबा आईं। ऐसे पवित्र-हृदय व्यक्ति का तपती ने तिरस्कार किया—आश्चर्य !

‘मुझे आज्ञा दो दादा ! मैं कल ही तुम्हारी जीवनसंगिनी को ला दूँगी, उमने तुम्हें पहिचानने में भूल की है।’

‘नहीं शिखा ! यह नहीं हो सकता। अपना स्वरूप स्पष्ट करके उसका प्रेम प्राप्त करने की मुझे आकांक्षा नहीं है। मैं जानता हूँ : प्रत्येक युवती चाहती है कि उसका पति सुन्दर, ज्ञानी और धनवान हो; लेकिन दुर्भाग्य से ऐसा न हो, तो क्या इसतरह पति का हृदय तोड़ देना चाहिये ? वह हिन्दू नारी है, पवित्र वेदमंत्रों से उसका विवाह हुआ है; वह विवाह-बंधन जन्म-जन्मान्तर तक बंधा रहता है—ऐसा शास्त्र कहते हैं। उसी धर्म की संतान होने पर भी उसने पति को अपना यथार्थ स्वरूप प्रगट करने का भी अवसर नहीं दिया ? मैं जान गया शिखा, इस अहंकार के मूल में दो वस्तुएँ

हो सकती हैं—एक तो यह कि वह किसी दूसरे को चाहती हो और उसे प्राप्त न कर सकने पर उसे क्रोध आ गया हो; या फिर वह पवित्र हो और उसका किसी से प्रेम न हो। यदि दूसरा कारण सत्य है तो मैं उसे उसी प्रकार प्राप्त कर सकूँगा; और यदि पहला कारण सत्य हुआ, तो उसके हजार बार चाहने पर भी मैं उसका स्वीकार नहीं कर सकता। मेरे जीवन में पर-पुरुष को चाहनेवाली स्त्री के लिये स्थान नहीं है।'

शिखा काँप उठी। तपती यह क्या कर बैठी थी ! जो अद्भुत चारित्र्यवान पति उसे मिला था, वह तपती को अन्यासक्ता मानकर अवश्य उसका त्याग कर सकता है... गंभीर स्तब्धता में शिखा विचार करने लगी।

'बहिन ! आज मेरी माँ-जाई बहिन और तुझ में कोई अन्तर नहीं है। मेरी बात मानेगी न ?'

'जरूर, दादा ! जिस दिन तुम्हारी आज्ञा का उल्लंघन करूँगी, उस दिन तुम्हें दादा कहने का अधिकार गँवा दूँगी।'

तपती की परीक्षा हो चुकी थी। आज उसने संगीत का आयोजन किया था और उसी की तैयारी में व्यस्त थी। आमंत्रित मित्र-मंडली के सदस्य आ पहुँचे थे और बैठे-बैठे गप्पें हाँक रहे थे।

रेवा ने कहा : 'अब तपती अपने पति से हिलमिल सकेगी; अभी तक तो सब यों ही गया। आज तक उसने उन्हें देखा ही नहीं था, किन्तु देखते ही...!'

'क्या होगा ?'

'होगा क्या; पतिदेव जैसे देखने में सुन्दर हैं, वैसी ही उनकी बातचीत है। तपती काव्यप्रिय लो है ही, उनकी बातों पर मुग्ध हो जायेगी !'

'क्या कह रही हो ! वह तो एकदम मूर्खचन्द है !'

'बिलकुल झूठ ! मैं एकबार उनके पास गई थी; मालूम है उन्होंने मुझे देखकर क्या कहा ?'

'क्या कहा ?'

'कहने लगे : 'आइये ! आप किस देश की हैं ? नमस्कार करूँ या हाथ मिलाऊँ ?' मैंने कहा : 'बिलकुल स्वदेशी ! नाम है श्रीमती रेवा-देवी।' फिर क्या बोले, जानते हो ? बोले कि रेवा तो ऊँची-नीची भूमि पर बहने से क्षीण है, लेकिन आप ऐसी दिखाई नहीं देती !'

'तुमने क्या कहा ?' मि. बनर्जी ने पूछा।

‘कहा कि—मैं मोटी हूँ इस से आप को क्या, तपती तो खूद स्लिम...’

‘यह बात तुमने क्यों कही ? तपती का रूप वह न देखे यही अच्छा है।’

‘पूरी बात तो सुन लो ! तपती का नाम सुनते ही बोले : ‘सुनकर खुशी हुई। अपनी पतली देहरूपी तलवार से वे बहुतों को जीत सकेंगी, क्यों ?’ मैं तो सुनकर दंग हो गई ! मैंने कहा : ‘हाँ, हम तो बिल्कुल बिना धार के हैं।’

‘फिर क्या कहा ?’ मि. बनर्जी ने पूछा।

‘बोले कि : धार निकाल लो ! इतने पफ-पावडर और लिपस्टिक किस काम के ? मैं तो सुनकर चुप रह गई ! वे मुँह फेरकर हारू ठाकुर की ‘पाँचाली’ पढ़ने लगे। दूसरे दिन तपती की माँ ने वहाँ जाने को मना कर दिया; नहीं तो जवाब देना चाहती थी।’

‘क्यों मना कर दिया ?’

‘यह तो मालूम नहीं; शायद उन्हें बुरा लगता हो।’

‘बुरा नहीं, डरता होगा; अपनी पोल खुल जाने का भय होगा।’

‘उनकी पोल खुल जाने से तुम्हें कोई लाभ नहीं होगा, क्योंकि वे सचमुच विद्वान हैं—तुम जैसे दिखावटी नहीं !’

इतने में मि. अधिकारी आ पहुँचे। उन्हें सब लोग बहुत धूर-धूरकर देख रहे थे, क्योंकि उन्हीं के पास से तपती ने अँगूठी ली थी। अधिकारी ने ही तपती के हृदय को अधिक आकर्षित किया था। उन्हें देखकर रेवा बोली : ‘आइये मि. अधिकारी ! इस समय हमारे मेघदूत के यहाँ आप ही हैं !’

मि. अधिकारी प्रसन्न होकर हँसने लगे। उधर से तीन-चार युवक उन्हें क्रुद्ध दृष्टि से देख रहे थे। मि. अधिकारी ने विनय-पूर्वक कहा : ‘जैसी आपकी इच्छा; मैं इन्कार कैसे कर सकता हूँ !’

‘लेकिन जिससे सम्मति लेना चाहिये वह तो अभी टायलेट में

मशगूल है। अरे, यह आ पहुँची !'

तपती सीढ़ियाँ उतरकर नीचे आ गई। उसकी लम्बी वेणी सर्पाकार लटक रही थी, जिसका आधा भाग धूपछाँव रँगवाली साड़ी की किनार पर पड़ता था ! शरीर से मोहक सुगन्ध निकल रही थी।

सबने हँसकर उसका सन्मान किया। एक ने पूछा : 'परीक्षा अच्छी रही न ?'

'हाँ, आज का प्रोग्राम क्या है ? इसी तरह बैठे रहने का ?'

'जी, नहीं ! हम आज ही निर्णय करेंगे कि आगामी मेघदूत के उत्सव में कौन-कौन भाग लेगा ! पहले एक-दो गीत हों; और आपका नृत्य हो जाये तब तो कहना ही क्या है !'

हास्य-विद्युत चमकाकर तपती ने कहा : 'नृत्य आज नहीं; खूब थक गई हूँ ! चलो, परसों एक स्टीमर लेकर घूम आयें !'

सब एकसाथ बोल उठे : 'दुर्दुर्रे ! थ्रि चीयर्स फोर मिस चटर्जी !'

तपती कुछ बोले उससे पहले ही मि. बनर्जी ने कहा : 'उन भद्र पुरुष के क्या समाचार हैं, घेठ गुड ओल्ड उडिया !'

मृदु स्मित करके तपती बोली : 'जाने भी दो, उनका क्या काम है ? उनकी ईर्ष्या किसलिये करें ? वे हमारे मार्ग में बाधक नहीं होंगे !'

'गुड ! बस इतना ही चाहते हैं !'

तपती और दूसरों के गीत हो जाने के बाद आगामी कार्यक्रम तैयार किया गया और कल का कार्यक्रम भी निश्चित हो गया। रात काफ़ी बीत चुकी थी, इसलिये सब विदा हुए।

मित्रों को विदा करके तपती ने ऊपर आकर देखा तो तपन भोजन करने बैठा था। माँ पास बैठी परोस रही थी। तपती को देखकर माँ ने कहा : 'आ बेटी ! खा ले।' तपन ने मुँह फेरकर इतना झुका लिया कि वह दिखता ही नहीं था। यह देखकर माँ ने कहा : 'जा बेटा, इतना क्यों शरमाता है ?'

तपन तपती की ओर पीठ करके बैठा था। उसने उसी तरह जवाब दिया : 'शरमाता नहीं हूँ माँ, आदत नहीं है। मैं खा चुका; अब जाता हूँ।'।

'दूध तो नहीं पिया बेटा !'

'आज दूध नहीं पिऊँगा माँ ! खूब नींद आ रही है।' कहकर वह चला गया।

मिसिस चटर्जी ने तपती से कहा : 'खाने के बाद आज तू उसके कमरे में जाकर सोना, बेटी !'

तपती अत्यंत विरक्त और क्रुद्ध होकर बोली : 'तू भी बिलकुल पागल हो गई है माँ ! किस कमरे में सोना या न सोना यह मैं अच्छी तरह जानती हूँ। मैं अब बच्ची नहीं रही !'

मिसिस चटर्जी ने शंकित होकर कहा : 'यह क्या कहती है बेटो ! तेरा मतलब क्या है ?'

बात आगे बढ़ रही है—यह देखकर तपती सावधान हो गई। उसने कहा : 'तू व्यर्थ ही दूतनी चिन्ता करती है, माँ ! दिन क्या भाग गये हैं ?' और वह हँसने लगी।

माँ ने आर्जवतापूर्वक कहा : 'लेकिन आज जाने में क्या हर्ज है बेटो !'

'नहीं माँ, नहीं ! कोई अच्छा दिन निश्चित करो ! तुम्हारे ब्राह्मण दामाद के पास कृष्णपक्ष में नहीं जाऊँगी !'

माँ को कुछ संतोष हुआ। वे लोग अच्छे-बुरे दिन का विचार नहीं करते; लेकिन तपन तो करता था। हाँ, यही योग्य था। पंचांग देखकर कोई अच्छा दिन निश्चित करना पड़ेगा !

उधर अपने कमरे में हँसते-हँसते तपती के पेट में बल पड़ गये थे। माँ को कितनी आसानी से समझा दिया ! लेकिन पंचांग में शुभ दिनों का अभाव नहीं था और माँ कल ही ढूँढ़ निकालेगी। कोई बात नहीं; उस समय वह कोई दूसरी तरकीब ढूँढ़ायेगी। तपती निश्चित होकर सो गई।

एक मोटर कारखाने के दरवाज़े पर आकर खड़ी हो गई। तपन और शिखा ने उतरकर अन्दर प्रवेश किया। विनायक स्वागत करने के लिये आगे बढ़ा, किन्तु ठिठक गया। कर्मचारी खड़े रह गये। मीरा के सिवा कभी कोई स्त्री अतिथि नहीं आया था। विनायक ने अपने को सँभालकर नमस्कार किया। दूसरों ने भी उसका अनुकरण किया। लेकिन शिखा ने सरलता से हँसकर सबको चौंका दिया : 'क्या कुछ आश्चर्य हो रहा है विनायक बाबू ! चलो, पहले आपका आफिस देख लूँ !'

कौन होगी यह ? जिससे तपन ने विवाह किया था वह तो है नहीं ! तो क्या किसी दूसरे को लाया होगा ? कुछ कहा भी नहीं !—विनायक सोच रहा था।

तपन बोला : 'तू इन के साथ जाकर देख शिखा बहिन ! तब-तक मैं कुछ नये खिलौनों के नकशे बनाऊँ, ठीक है न ?' कहकर वह अन्दर चला गया।

'अच्छी बात है; चलो विनायक बाबू !'

निरुपाय होकर वह शिखा को कारखाना दिखलाने ले गया। छोटे-छोटे यंत्र हाथ से ही चलाये जा रहे थे। सिर्फ एक बिजली की मशीन थी। शिखा ने अधिक से अधिक समझने का प्रयत्न किया। विनायक ने धीरे-धीरे कारखाने का सारा इतिहास बतलाया; अपने

दरिद्र जीवन की कहानी सुनाई। वह सिर झुकाकर ही बोल रहा था। शिखा को वह सब खूब पसन्द आया। किसी प्रकार का आडम्बर नहीं था। विनायक कहने लगा : 'तपन न मिलता तो आज मैं इस दुनिया में न होता, शिखादेवी ! लेकिन उसके लिये मैं कुछ न कर सका।'

'क्यों नहीं कर सके ? प्रयत्न किया था ?'

'कैसे करूँ ? तपन ने तो हाथ-पैर बाँध दिये हैं।'

शिखा भी चुप हो गई। वह कुछ ही दिनों में तपन को अच्छी तरह जान गई थी।

कुछ देर बाद विनायक ने पूछा : 'आप उसे जानती हैं ? इतना अहंकार उसमें क्यों है ?'

'मैं उसे अच्छी तरह पहिचानती हूँ, विनायक बाबू ! और तपन तो मेरे दादा हैं; लेकिन आपकी तरह उन्होंने मेरे भी हाथ-पैर बाँध दिये हैं।'

विनायक ने इतना ही कहा : 'हँ !'

शिखा बोली : 'लेकिन आप चिन्ता न करें; तपती निष्कलंक है। एक दिन वह अपनी भूल समझ लेगी !'

विनायक कुछ न बोला।

एक कर्मचारी ने आकर कहा : 'बड़े भैया ! छोटे भैया आपको बुलाते हैं।'

'आता हूँ !' कहकर दोनों खड़े हो गये। चलते-चलते शिखा बोली : 'क्या सब लोग आप से बड़े भैया कहते हैं ?'

'हाँ, यहाँ कोई नौकर नहीं है, सब भाई-भाई हैं; सब सामे-दार हैं।'

'सारे नियम आप दोनों ने बनाये हैं ?'

'यह सब काम तपन का है, मेरा दिमाग नहीं चलता। वह जैसा कहता है वैसा करता हूँ।'

अजब था वह आदमी ! बंधु के प्रति इतना अगाध स्नेह और श्रद्धा रखनेवाला कोई दूसरा व्यक्ति शिखा ने नहीं देखा था । स्वयं कैसा था—यह बतलाने का उसने प्रयत्न भी नहीं किया ! श्रद्धा-भरी दृष्टि से विनायक की ओर देखकर वह बोली : 'सब उन्हीं का बतलाते हो; आप का कुछ नहीं है ?'

'है, मेरे पास अपार सम्पत्ति है, वह है मेरा बंधु तपन !'

शिखा अभिभूत हो गई । दोनों आफिस में आ गये । आफिस देखकर शिखा स्तब्ध हो गई । दीवार पर लगी हुई शिशु-मूर्तियाँ मानो जीवित मालूम होती थीं ! धरती पर बने हुए रंग-बिरंगे चौक किसी भूतकालीन युग के साथ वर्तमान को खड़ा करते थे । कमरे में भूप की सुगन्ध फैल रही थी । चारों ओर शांत वातावरण था । एक भी मेज़ या कुर्सी वहाँ नहीं थी; होती तो शायद विचित्र लगती !

शिखा निःसंकोच, तपन की छोटी बहिन की भाँति पलाश-पत्र खींचकर चबाने लगी । चबाते-चबाते बोली : 'आपके यहाँ तो शायद रोज दावत होती है ! किसी दिन मेरा भी हिस्सा रखना !'

विनायक बोला : 'रोज आपका हिस्सा रहेगा ।'

शिखा बोली : 'तो आपका हिस्सा कम हो जायेगा ! भाई-बहिन दोनों आयेंगे तो आपके हिस्से में क्या रहेगा ?'

'सते-हँसते विनायक बोला : 'मैं तो हारकर ही जीतूँगा !'

'क्या मतलब ?' शिखा देखती रह गई ।

उसकी ओर देखकर विनायक बोला : 'मतलब—इतना अधिक हारूँगा कि हारने में पहला आऊँगा !'

तीनों हँस पड़े ।

तपती ने माँ से कहा : 'सबेरे तीन बार फोन किया, लेकिन शिखा नहीं आती, माँ ! हमारी पार्टी में आने से इन्कार करती है ।'

‘क्यों? क्या हो गया उसे! क्यों नहीं आयेगी?’ माँ ने सरल भाव से कहा।

‘कौन जाने! तेरे दामाद ने कुछ कहा होगा! उस दिन उनसे मिलने के बाद फिर आई ही नहीं!’

‘दामाद क्या कहेगा बेटी! उसका नाम किसलिये बदनाम करती है?’

माँ चुप हो गई थी; लेकिन तपती ने झुँझलाकर कहा: ‘सब कह सकते हैं; अच्छे घर की लड़की से बातचीत करते समय जो मन में आया कह दिया होगा!’

‘वह अधिक बोलता ही कहाँ है? उसे पार्टी में ले जायेंगी न!’

उनका क्या काम है वहाँ? बड़े-बड़े आदमी आनेवाले हैं; कोई असभ्यता कर बैठे तो मैं शर्म से मर जाऊँगी।’

‘क्या कहती है बेटी! उसे नहीं ले जायेगी तो वह क्या सोचेगा? लोग क्या कहेंगे?’

निरुपाय होकर तपती को स्वीकार करना पड़ा; नहीं तो माँ कोई नया झूझट खड़ा करती।

एक लिस्ट माँ के हाथ में देकर वह बोली: इतनी चीज़ें खरीद लाने को उनसे कह देना।’

मित्र-मंडली के साथ तपती स्टीमर में जा बैठी । माता के आदेशानुसार तपन भी वहाँ पहुँच गया और एक नौकर के हाथ सारी चीजें तपती के पास भेजकर निचले खण्ड में बैठा रहा । समय होते ही स्टीमर चल दी ।

ऊपर से संगीत के मधुर स्वर आ रहे थे । तपन को संगीत से प्रेम था; वह कान लगाकर सुनता रहा । उसे विचार आया कि उस मंडली में एक गीत गाकर ही वह तपती को आकर्षित कर सकता है; लेकिन जो स्त्री दूसरे पर आसक्त हो, उससे क्या प्रयोजन ! उसकी जीवन-संगिनी के स्थान पर वह नहीं बैठ सकती !

तपती के मित्रों की संख्या सौ से अधिक थी और लगभग सभी आये थे । सब मिलकर इधर-उधर की गप्पें हाँक रहे थे । जिनके साथ तपती का विवाह होनेवाला था, वे मि. घोषाल भी आये थे । उन्हें देखकर तपती बोल उठी : 'आओ, पिता के आज्ञाकारी पुत्र ! मजे में तो हो न ?' इस कटाक्ष से सब हँस पड़े; लेकिन मि. घोषाल के शरीर में एक आनन्द की लहर दौड़ गई । पिता का कहना मानकर विवाह-मण्डप से चला जाना महान मूर्खता थी; लेकिन उनका उद्देश ऐसा नहीं था । तपती के पिता ने ही सब बिगाड़ा था ! रुपये दे
जी. ४

दिये होते तो काम बन जाता। मि. घोषाल अपने जीवन की व्यर्थता कभी नहीं भूल सकते थे; फिर भी ऐसा मानकर कि तपती के कटाक्ष में प्रेम का संकेत था—वे आनन्दित हो गये। उस दिन तपती उन्हें चाहती थी और आज भी उस घटना से दुःखी हो रही थी। मि. घोषाल बोले : 'मेरा क्या दोष है तपतीदेवी ? पिता के आदेश का जीवन में एक ही बार पालन किया है और वही अन्तिम बार ! लेकिन अब तो...'

'हाँ, अब तो भोलेभाले बनकर चुपचाप बैठे रहो !'

मि. घोषाल को स्वाभाविक ही अपने मुँह का कौर छीन लेने-वाले को देखने की इच्छा हो आई। उन्होंने पूछा : 'आपके पति-देव नहीं आये ?'

'पति' शब्द सुनते ही तपती का मुँह लज्जा से लाल हो गया।

'कौन जाने, आये तो हैं...' कहकर वह ऑर्गन पर जा बैठी। नौकर से पूछने पर मालूम हुआ कि जमाईराज नीचे अकेले ही बैठे थे। चपल युवतियों का दल फौरन नीचे पहुँच गया और तपन को जबरन ऊपर खींच लाया। मेहमानों ने देखा तो उसकी आँखों पर गहरे नीले रँग का चश्मा और मस्तक पर त्रिपुण्ड था। उसने कोट, पेन्ट और हॅट धारण किया था। वह अद्भुत वेश देखकर सब को आश्चर्य, विरक्ति और विजयोत्सास का अनुभव हुआ। तपती का अहंकार चूरचूर हो गया था। उसने पति की ओर कभी देखा नहीं था; आज भी उसे देखकर मुँह फेर लिया। युवतियों ने तपन को एक जगह बिठाकर कहा : 'स्वदेशी और विदेशी का अन्धका समन्वय किया है ! लेकिन हॅट उतार दो; हम वचन देते हैं कि चोटी नहीं काटेंगे।'

तपन शांत स्वर में बोला : 'विश्वास नहीं आता; चोटी के बदले अगर सिर ही...'

हँसते-हँसते एक युवती बोली : 'अच्छा, तो आपका सिर भी है ? हम तो समझते थे कि तपती ने फिरा दिया होगा !'

तपन ने बिलकुल भोलेपन से कहा : 'चोटी न होने से उसे फिराने में कठिनाई आती है !'

रेवा ने निकट आकर कहा : 'मैंने चांटी काटी थी, मेरा नाम श्रीमती रेवा...'

'आपने मुझ पर बड़ा उपकार किया है, रेवादेवी ! चोटी के साथ ही सिर का जोखिम चला गया ! अब शायद सिर बच जायेगा !'

'नहीं बच सकता, आज उसे तपती के चरणों में समर्पित करेंगे !'

अत्यन्त करुण कंठ से तपन बोला : 'उनके चरण दब न जायें !'

उधर से तपती का क्रुद्ध स्वर सुनाई दिया : 'क्या कर रही हो तुम सब ? चलो, इधर आओ !'

'तेरे पतिदेव नहीं आते !' कहकर उन्होंने तपन को खींचा और एक स्टूल पर बिठा दिया । उसका अद्भुत वेश सब का ध्यान आकर्षित कर रहा था । मंडली में कानाफूसी होने लगी थी । कुछ शब्द तपती के कानों तक पहुँचे, लेकिन वह कर ही क्या सकती थी ! अत्यन्त विरक्ति के साथ उसने एकबार तपन पर दृष्टि डाली । उसके विशाल मस्तक पर त्रिपुण्ड था, किन्तु यह खबर न पड़ी कि रंग काला था या गोरा ! सिर ढँका होने से बाल भी दिखाई नहीं देते थे । गंगा के वच पर वह मूर्ति देखकर हँसी ही आती, किन्तु तपती को याद आया कि वह उसका पति था ! उसे रोना आ गया । अपने को संभाल लेने के लिये वह कठहरे के पास जाकर खड़ी हो गई ।

छुपचाप चाय पीकर तपन बोला : 'नमस्कार ! मैं नोचे जाकर बैठता हूँ !'

उसका रूप, आचार, व्यवहार देखकर सब को लगा कि वह वहाँ बैठने योग्य न था । कोई कुछ न बोला । तपती ने संतोष की

साँस ली। तपन के जाने के बाद मि. घोषाल ने कहा : 'यही व्यक्ति आपका पति था ? आश्चर्य ! धन्य है आपके पिता की बुद्धि को !'

तपती की मनोदशा देखकर सब ने वह चर्चा छोड़ दी। तपती कुछ न बोली। अपमान से उसका सारा शरीर सुलग रहा था। स्टीमर किनारे आते ही वह चार-पाँच मित्रों के साथ स्वयं गाड़ी चलाकर चली गई।

तपन एक ओर खड़ा था। तपती को जाते देख वह हँसा। उन सबको उसने निष्ठुरता से ठगा था। धीरे-धीरे चलकर वह एक ट्राम में बैठ गया।

घर पहुँचकर तपती बिस्तर में पड़ी-पड़ी काफी देर तक रोती रही। आज उसे दादाजी की बात याद आ गई थी। वे कहा करते थे : 'तेरे पति की बराबरी कोई नहीं कर सकता माँ !'—उनकी भविष्यवाणी विधि के ऐसे निष्ठुर विधानरूप से सत्य सिद्ध होगी यह कौन जानता था ! तपती ने उस जंगली को घर से निकाल देने का निश्चय कर लिया। जीवनभर वह अकेली ही रहेगी ! उसके साथ एक घर में रहना असम्भव था।

सारी रात तपती ने बुरे-बुरे स्वप्न देखकर बिताई। सवेरे उस के हाथ-पैरों में दर्द था। वह बिस्तर में पड़ी रही। माँ ने आकर पूछा : 'तबियत ठीक नहीं है बेटी ! अभी तक क्यों सो रही है ?'

तपती बड़ी मेहनत से गुस्से को रोक सकी। बेचारी माँ ! उस का क्या दोष ? दामाद पर स्नेह-ममता रखना सास का कर्तव्य था।

वह उठकर बैठ गई। जब नहा-धोकर चाय पीने आई तो देखा कि रविवार हाने से तपन बाहर नहीं गया था; वह चाय पी रहा था। तपती की आवाज़ सुनते ही उसने सिर नीचा कर लिया, ताकि वह उसे देख न सके !

तपती उसे देखते ही सुलग उठी। कठोर स्वर में बोली : 'पहले इन वैरागी को चाय पी लेने दो, फिर मैं पिऊँगी।'

माँ गुस्सा होकर बोली : 'छिः छिः बेटी ! क्या बकवाद करती है !'

तपन हँसकर बोला : 'ठीक ही कहती हैं माँ ! वैरागी हो सकूँ, तो फिर क्या चाहिये !'

गुस्से में तपती बोली : 'बस रहने दो, बहुत हो चुका !' कहकर वह चली गई।

माँ ने कहा : 'क्या है यह सब ! क्यों झगड़ते हो बेटा ?'

'कुछ नहीं माँ ! मैं झगड़ा नहीं करता। मेरा चंदन-तिलक इन्हें पसन्द नहीं है, बोला क्या किया जाये ! किसी के प्रेम की खातिर मैं चंदन-तिलक नहीं छोड़ सकता।'

तपन के मुँह पर हास्य देखकर माँ को कुछ संतोष हुआ। यह तो चलता ही रहता है, दम्पति-कलह के सम्बन्ध में चिन्ता की आवश्यकता नहीं थी।

तपन के जाने पर तपती चाय पीने आई। उसके मुँह पर गम्भीरता थी। माँ ने हँसकर कहा : 'झगड़ना मत बेटी, लड़का बड़ा अच्छा है !'

'इतना अच्छा होना ठीक नहीं है माँ ! अधिक अच्छा होने से उन्हें रोक देना !'

'तू ही मना कर देना, मुझे क्या पड़ी है !'

तपती बोल उठी : 'उस मूर्ख को शंख बजाकर घर में घुसाते समय कुछ नहीं सोचा ! सब बिलकुल...'

लेकिन तपती ने अपने को सँभाल लिया। माँ ने हैरान होकर कहा : 'चुप रह बेटी, पति से ऐसा नहीं कहा जाता।'

माँ को साफ-साफ सुना देने की तपती को इच्छा हो आई : 'तुमने जिसे मेरा पति बनाया है, वह मेरे पैर दबाने लायक भी नहीं है; मुझे उसकी कोई जरूरत नहीं; तुम्हें जो कुछ करना

है करो।' लेकिन पिता के कानों में पहुँचते ही बात बद जायेगी—
इस डर से वह चुप रही।

माँ बोली : 'मैंने दिन निश्चित कर लिया है—वैशाख शुक्ला
एकम के दिन तेरी सुहागरात होगी !'

'उस दिन की बात उस दिन !' कहकर तपती चली गई।

कल शिखा क्यों नहीं आई ? तपती को उसकी कितनी आव-
श्यकता थी ! उसने फिर फोन किया। शिखा ने फोन पर आकर
कहा : 'क्या कहती है, तपु ?'

'मुसीबत के समय तू हमेशा मेरी मदद करती आई है, शिखा !
आजकल क्यों दूर-दूर रहती है ?'

शिखा ने स्नेहभरे स्वर में कहा : 'दूर नहीं रहती, तपु ! मुझे
एक संन्यासी दादा मिले हैं; उन्हीं के पास अधिकांश समय चला
जाता है। वे आने ही वाले हैं।'।

'अच्छा, तो उन्हें यहाँ भी ले आना !'

'वे नहीं आयेंगे; बिना जान-पहिचान कैसे आ सकते हैं ?'

'तो मैं तेरे घर आऊँ ?'

'तेरी इच्छा, लेकिन तू मेरे दादा को नहीं देख सकेगी !'

'क्यों ?'

'वे एकदम किसी से बातचीत नहीं करते ! तूने आर्यनारी
होकर पति को स्वीकार नहीं किया—यह सुनकर उन्हें क्रोध आ जायेगा।'

उसी क्षण तपती के हृदय में क्रोधाग्नि भड़क उठी। उसने कहा :
'रहने दे, उन आर्यपुत्र के साथ मैं बात नहीं करना चाहती ! तो
बधा तू नहीं आयेगी ?'

'नहीं; मुझे माफ करना !'

'ठीक है, अब तुझे नहीं बुलाऊँगी !'

तपती ने फोन रख दिया। उधर शिखा हाथ में फोन लिये
वेदनातुर बैठी रही।

प्रातःकालीन शीतल वायु के झोंके आ रहे थे। एक चंपावृक्ष के नीचे बेत को कुर्पी पर बैठी-बैठी शिखा प्रतीक्षा कर रही थी। एक महीने से तपन के साथ उसका परिचय हुआ था; किन्तु इतने ही समय में कैसा कल्पनातीत परिवर्तन हो गया ! उस पारस-मणि के स्पर्श से शिखा का अन्तर मानो स्वर्ण का हो गया था। किन्तु जिसका वह मणि था उसने तो उसे पत्थर समझकर दूर फेंक दिया था। कौन होगी उस जैसी अभागिनी ! शिखा के हृदय में तपती के प्रति करुणा छलक उठी।

तपन और विनायक आ पहुँचे। शिखा प्रणाम करके बोली :
'एक बात सुनो दादा ! एक प्रार्थना...'

'कहो ! बहिन की प्रार्थना पूरी करना दादा के लिये गौरव की बात है।'

'जानती हूँ; अनुचित कुछ नहीं माँगूँगी दादा ! तुम तपती के साथ कुछ ऐसी बातें करो जिस से वह तुम्हें पहिचान सके; कम से कम पहिचानने को आतुर हो जाये !'

'इस से क्या लाभ होगा, शिखा ?'

'लाभ अवश्य होगा। मुझे विश्वास है कि तपती अभी तक तुम्हारे लिये अयोग्य नहीं बनी है। उसके बचपन का जीवन बहुत अच्छा

था; उसके दादाजी ने उसमें अच्छे-अच्छे संस्कार डाले थे; किन्तु इस सोसायटी के मोह में पड़कर वह नष्ट हो रही है; तुम उसे बचा लो दादा ! अभी वह नष्ट नहीं हुई !'

'मृत्यु से बचाने का अधिकार मेरा नहीं है; शिखा ! फिर भी यदि वह अभी तक परपुरुष के प्रति आसक्त नहीं हुई होगी, पवित्र होगी तो मैं उसे अवश्य प्राप्त करूँगा ! उसके लिये कुछ करने की आवश्यकता नहीं है। जहाँ तक हो सका मैं अवश्य तेरी बात मानूँगा।'

शिखा चुपचाप सिर झुकाए भोजन परोसने लगी। विनायक खिले हुए चंपा के फूलों की ओर देख रहा था। फूल इतनी ऊँचाई पर थे कि हाथ से तोड़ना कठिन था। विनायक ने एक छल्लाँग लगाई। शिखा का मुँह हास्य से उज्ज्वल हो गया। वह बोली: 'अकेला कारखाने का हिसाब ही नहीं, फूलों का शौक भी रखते हो !'

हँसते हुए विनायक बोला : 'रखता हूँ, लेकिन अपने लिये नहीं; मीरा को फूलों का बड़ा शौक है।'

'मेरे लिये भी एक गिरा देना।'

विनायक ने तुरन्त उत्तर दिया : 'क्यों, अपने दादा से कहो न, वे गिरा देंगे।'

मुँह फुलाकर शिखा बोली : 'दादा तो हैं ही; आप क्या कोई नहीं हैं ?' इतना कहने के बाद वह खूब लज्जित हो गई। उसने देखा तो तपन थोड़ी दूरी पर एक पेड़ के नीचे खड़ा था। शिखा ने आवाज़ दी : 'दादा ! भोजन कर लो !'

किन्तु विनायक ने बात न छोड़ी। बोला : 'अच्छा, तो मेरे साथ भी आपका कोई एक सम्बन्ध होना जरूरी है ! आपको कौन-सा सम्बन्ध पसन्द है ?'

'मित्र का !' उत्तर देकर शिखा शरबत् बनाने लगी।

उस एक ही शब्द में सन्निहित भविष्य का विचार करके, विनायक ने शिखा के चेहरे पर दृष्टि डाली। उसे लगा कि कदाचित् शिखा को प्राप्त करना कठिन न भी हो; किन्तु वह डरता था। तपन के भाग्य-विपर्यय की बात उसे आतंकित कर रही थी। उस सोसायटी में दरिद्र विनायक प्रविष्ट हो सकेगा? शिखा उसकी आकांक्षा का धन थी। शिखा को पाकर वह अपने को भाग्यशाली मानेगा, किन्तु उसे रखेगा कहाँ?

‘क्या सोच रहा है, विनु?’ तपन ने निकट आकर पूछा।

‘सोच रहे हैं कि मेरे साथ कौन-सा सम्बन्ध रखा जाये!’ कहकर शिखा गिलास का शरबत हिलाने लगी। उसके मुँह पर हास्य थिरकने लगा। तपन ने उस पर एक फूल फेंककर कहा: ‘शरारती! मेरे मित्र को हैरान करती है?’

‘तुम्हीं कहो दादा, क्या करूँ? तुम्हारे मित्र जब एक सम्बन्ध-रहित स्त्री को फूल नहीं दे सकते, तो फिर सम्बन्ध निश्चित करना ही पड़ेगा न! मीरा ने बड़ी देर कर दी दादा!’

‘क्या करे! उसका पति है, सास-ससुर हैं, और काम भी रहता है! अरे, वह आ गई...’

एक गाड़ी दरवाजे में आते ही शिखा दौड़कर मीरा से लिपट गई: ‘आओ, आओ बहिन! इतनी देर क्यों हुई?’

‘चुप, चुप, धिनुदा मारेंगे! उनके कारखाने में नियमितता और शांति का सङ्गती से पालन होता है। लेकिन विनुदा का मुँह ऐसा क्यों है...क्या बात है विनुदा?’ मीरा विनायक के बालों में उँगलियाँ डालकर सहलाने लगी।

‘कुछ नहीं बहिन! कोई बात नहीं है। लो, तुम्हारे लिये फूल तोड़कर रखे हैं।’ एक फूल वेणी में लगाते-लगाते मीरा बोली: ‘तेरे फूल कहाँ हैं, शिखा?’

शिखा ने उदासभाव से उत्तर दिया : 'मुझे दादा ने नहीं दिये। तेरे विनुदा ने भी नहीं !'

'वाह रे...विनुदा ! फूल गिरा दो, उठो !' विनायक को उठते देख शिखा बोली : 'नहीं, नहीं, पहले भोजन कर लो !'

मीरा मानों नाराज हुई हो इसतरह बोली : 'ओहो, तुम्हें इन पर बड़ी दया आती है ! अच्छा, तुम्हें इसके हाथ में सौंप दिया, विनुदा ! अब जैसा यह कहे वैसा करना !'

मीरा तपन के पास पहुँची और उसके घुटनों से चिबुक लगाकर बोली : 'क्या हुआ दादा ! क्या सारी रात रोते रहे ?'

'नहीं बहिन ! रोऊँगा किसलिये ? तेरा दादा क्या इतना दुर्बल है ?'

कहकर तपन ने मीरा की वेणी में लगा हुआ फूल ले लिया और हँसते हँसते बोला :

“ खिलना बसन्त के अन्तिम निःश्वासों में....

में हूँ चंपा का फूल ! ”

वातावरण मधुर हो गया था, किन्तु तपन की काव्यपंक्ति ने सब को चौंका दिया। यहाँ एक जन था कि जिसकी वेदना सागर की भाँति अंतहीन थी, जिसका कोई किनारा न था।—यह बात शिखा और विनायक भूले न थे, फिर भी बराबर याद न रख सके।

तपन के उन शब्दों ने शिखा के नारी-हृदय को झकझोर दिया। वह तिरस्कार के स्वर में बोली : 'तुम खूब कठोर होगे दादा ! किन्तु इस तरह बोलते हो कि पत्थर भी रो उठे !' शिखा की आँखें डब-डब आईं। मीरा ने शिखा के पास आकर स्नेह से कहा : 'हमारे दादा तो आकाश के तरन-सूर्य की भाँति स्वयं जलकर पृथ्वी को प्रकाशित करेंगे; यह उनकी साधना है।'

‘तुम भाई-बहिन दोनों एक-से हो, मीरा ! तुम्हारी हँसी की बातें सुनकर खण्डहर भी रो उठेंगे !’

मीरा और तपन चुप हो गये । वातावरण को शांत बनाने के लिये विनायक बोला : ‘रुदन तो मानव की प्रथम अभिव्यक्ति है ।’

‘इसीलिये तो ऐसे मित्र मिले हैं कि प्रत्येक शब्द पर रुलायें !’

विनायक बोला : ‘रुदन से ही हमें प्रेरणा मिलती है, शिखादेवी !’

‘रहने दो अपनी दार्शनिकता ! प्रेरणा के सम्बन्ध में हम एकमत न भी हों !’

‘कदाचित् हो भी सकते हैं !’ तपन बोला ।

‘रहने दो दादा ! तुम्हारे मित्र के कथनानुसार यदि रोने से ही प्रेरणा मिलती हो तो हमें नहीं चाहिये !’

‘हम क्या चाहते हैं, वह हम स्वयं नहीं जानते, शिखादेवी !’ विनायक बोला ।

‘बस, बस, यह कोई तुम्हारे कॉलेज का क्लास नहीं है ! मुझे क्या चाहिये, वह मैं अच्छी तरह जानती हूँ ।’

मीरा हँस पड़ी और बोली : ‘जानती हो तो ले ले न बहिन !’

रोष भरे नयनों से शिखा बोली : ‘मीरा, अब बहुत हो गया !’

ऊपर से शिखा की माँ बोली : ‘धूप तेज़ हो गई है, तपन ! तुम लोग अन्दर आ जाओ !’

तपन और मीरा तुरन्त अन्दर चले गये । वह जाने का हेतु इतना स्पष्ट था कि शिखा लज्जा से सिर झुकाकर बर्तन इकट्ठे करने लगी । विनायक ने एक फूल तोड़कर शिखा के हाथ में देते हुए कहा : ‘अच्छी बात है, मित्र ही सही । अब तो संतोष हुआ ?’

‘संतोष !’ शिखा ने सिर झुकाकर उत्तर दिया ।

इच्छा होने पर भी अधिक देर तक विनायक के पास रहने में शिखा को लज्जा आ रही थी । दोनों अन्दर चले गये ।

वैशाखी प्रतिपदा के प्रातःकाल उठते ही तपती को याद आया कि नूतन वर्ष के अभिनन्दन-कार्ड नहीं खरीदे गये थे। आज ही मित्रों को भेजना चाहिये ! नूतन वर्ष का प्रथम दिवस होने से तपती का मन प्रफुल्लित था। तपन पर भी वह प्रसन्न थी।

उसने माँ को बुलाकर कहा : 'नूतन वर्ष के अभिनन्दन-कार्ड नहीं आये माँ, इसी समय जाना पड़ेगा। दूकान तो ठेठ कॉलेज स्ट्रीट में है; इधर नहीं मिल सकते।'।

'तो कॉलेज स्ट्रीट में जाकर ले आ !'

'अकेली कैसे जाऊँ ? उधर जाने का काम भी नहीं पड़ा।'।

माँ ने क्षणभर कुछ सोचा, फिर हँसकर बोली : 'अकेली किस-लिये, तपन को ले जा ! बेटा तपन, साथ जाकर नये वर्ष के कार्ड खरीद ला !'

तपती को माँ की बात पसन्द न आई। उस अभद्र वैरागी के साथ बाज़ार में जाने की उसकी इच्छा न थी। किन्तु वह इन्कार न कर सकी। संमतिसूचक सिर हिलाकर बोली : 'अच्छी बात है, गाड़ी बाहर निकालो !'

तपन चुपचाप चाय पीकर खड़ा हुआ और गॅरेज से गाड़ी निकालकर तपती की प्रतीक्षा करने लगा।

एक सुन्दर हलके रंग की साड़ी पहिनकर तपती नीचे आई। वह सोचने लगी कि इस तिलकधारी वैरागी के पास बैठा देखकर लोग क्या कहेंगे? थोड़ी देर विचार करके वह पिछली सीट पर जा बैठी; तपन ने गाड़ी चलाई।

कॉलेज स्ट्रीट की एक बड़ी दूकान के सामने आकर गाड़ी रुक गई। तपती नीचे उतरकर दूकान में गई। सुन्दर युवती को देखकर दूकान के कर्मचारी चंचल हो उठे और इधर-उधर से दौड़ आये : 'क्या चाहिये? क्या दिखाऊँ?'

तपती ने कार्ड देखने की इच्छा व्यक्त की और मुड़कर देखा तो तपन गाड़ी में बैठा-बैठा रास्ते के दूसरी ओर फूलों की दूकानों पर रखे हुए फूल देख रहा था। दूकान के एक नौकर से तपती ने कहा : 'उनसे कहो कि दो रुपये के फूल खरीद लायें।' नौकर ने दूकान के अन्दर से ही आवाज़ दी : 'अरे ओ झाइवर! दो रुपये के फूल ले आओ!'

तपन चुपचाप नीचे उतरकर दूकान की ओर चला गया। 'झाइवर' के सम्बोधन से तपती को कुछ लज्जा का अनुभव हुआ; किन्तु उसने सोचा कि इसमें दूकानदार का दोष न था। मुसकराकर उसने कार्ड ले लिये और अगली सीट पर झाइवर की जगह आ बैठी।

ढेरभर फूल लेकर तपन वापिस आया। अपने पास ही जगह बतलाकर तपती बोली : 'रख दो!'

तपन ने फूल रखकर देखा तो तपती के पास बैठने की जगह न थी। वह पिछली सीट पर बैठ गया। तपती ने गाड़ी चलाई।

मेडीकल कॉलेज के पास एक व्यक्ति को देखकर तपती ने गाड़ी रोक दी और पूछा : 'कहाँ जा रहे हो इस समय?'

'एक मरीज़ को देखकर लौट रहा हूँ।'

‘अन्दर आ जाओ!’ कहकर तपती ने अपने हाथ से फूल हटाकर बैठने की जगह कर दी। वह भद्र पुरुष तपन को नहीं पहिचानता था, और न तपती ने ही कोई परिचय कराया; इसलिये एकबार तपन की ओर देखकर उसने मुँह फेर लिया।

तपन चुपचाप बैठा रहा। इसतरह अपमान करने के लिये ही वह उसे साथ लाई थी! उसके अंतर में वेदना जागृत हुई, किन्तु उस की सहनशीलता अपार थी।

तपती गाड़ी चलाते चलाते कह रही थी: ‘शाम को जरूर आइये, निमंत्रण दे रही हूँ!’

जरूर आऊँगा; आपका अभिनन्दन न मिला तो सारा वर्ष ही बिगड़ जायेगा!’

‘खुशामद करना खूब जानते हो! आजकल किसकी सेवा कर रहे हो?’

‘सेवा करने योग्य स्त्रियाँ बहुत कम होती हैं, मिस चटर्जी!’

‘जैसे कि एक मैं...’ कहकर तपती हँस पड़ी।

भद्र पुरुष कुछ झिझक गये, किन्तु अपने को सँभालकर बोले: ‘हाँ, सच है।’

‘यहीं उतरना है न? अच्छा, नमस्ते!’

भद्र पुरुष अपने घर के पास उतर गये। तपती ने गाड़ी चला दी। तपन का आज उसने अच्छी तरह अपमान किया था। अगर उसने माँ से कह दिया तो? तपती के मन में चिन्ता उत्पन्न हुई। उसने पीछे मुड़कर देखा तो तपन खिड़की पर सिर टिकाये बैठा था। उसके काले घुँघराले बाल हवा में झधर-उधर उड़ रहे थे। तपती ने उसका मुँडित मस्तक देखा था; आज घुँघराले बाल देखे। उसके हृदय में ममता जागृत हो उठी। गाड़ी घर के निकट आगई थी। अन्दर जाते समय तपती ने सुना—तपन दरबान से कह रहा था: ‘माँ से कह देना कि मैं बारह बजे लौटूँगा।’

तरह-तरह के विचार करती हुई तपती ऊपर चली गई।

सायंकाल स्नान करके जब तपन भोजन करने आया, उससमय तपती के मित्र पार्टी उड़ा रहे थे। एक-दो ने तपन को देखकर मुँह बिगाड़ा—अधिकांश मित्र उसे पहिचानते भी न थे।

तपन सीधा रसोईघर में चला गया और माँ से बोला : ‘माँ, खाना खाऊँगा।’

‘वहाँ सबके साथ नहीं बैठेगा, बेटा?’

‘नहीं माँ, यह सब मुझे अच्छा नहीं लगता ! मैं उनकी मंडली का नहीं हूँ !’

तपन माँ के साथ क्या बातचीत कर रहा है वह सुनने के लिये तपती कान लगाये खड़ी थी। तपन के प्रति उसे जो सहानु-भूति जागृत हुई थी वह क्षणभर में अदृश्य हो गई। वह उनकी मंडली का नहीं था इसमें क्या बहादुरी ! तो क्या उसके लिये तपती को भद्र समाज का त्याग करना पड़ेगा ? क्रोध के मारे उसे चले जाने की इच्छा हो गई, किन्तु बातें सुनने के लिये खड़ी रही।

माँ ने हँसकर कहा : ‘अच्छा बेटा, तो यहीं बैठ जा !’ कहकर उन्होंने एक ‘चॉप और एक ‘कटलेट’ तपन को दिया।

तपन ने विनयपूर्वक कहा : ‘मुझे यह खाना पसन्द नहीं है, माँ ! माँस-मछली तो मैं शायद ही खाता हूँ; मुझे रोटी, मक्खन और मुरब्बा दो।’

अधिक सुनने के लिये तपती खड़ी न रही। इसी वैरागी के साथ उसे सारा जीवन बिताना पड़ेगा ! इससे तो वह मर जाना पसन्द करेगी। भले ही माँ को खबर पड़ जाये, किन्तु वह उसे घर से निकाल कर रहेगी !

उसका अंतर मानो जल रहा था; जिसकी प्रतिक्रिया मित्र-वर्ग के प्रति स्नेह में दृष्टिगोचर होती थी। सबने आनन्दपूर्वक

भोजन-समारम्भ पूर्ण किया; तपती की प्रशंसा की और नये फील्ड में टेनिस खेलने चल दिये। तपन को एक अपमान का चाबुक लगाने के लिये तपती ज़ोर से बोली : 'मैं खेलने जा रही हूँ माँ ! यहीं से खड़े-खड़े देखना मैं कैसा खेलती हूँ !'

माँ ने तपन से कहा : 'तू टेनिस नहीं खेलता बेटा ?'

'यह खेल मैं नहीं खेलता, माँ ! यह बड़े आदमियों का खेल है !'

'इससे क्या हुआ ? जा, थोड़ी देर खेल आ !'

'नहीं माँ ! मैं थोड़ी देर घूमने जाता हूँ !'

कहकर वह बाहर चला गया।

माता का मन सदैव सन्तान की कल्याण-कामना में ही लगा रहता है। पुत्री का बर्ताव देखकर मिसिस चटर्जी खूब चिन्तित हो गई थीं। पति से सारी बात कहने में भी उन्हें डर लगता था; क्योंकि उस सबका मूल-कारण पति ही थे। तपती तपन को देखना भी पसन्द नहीं करती, यह बात सुनकर उन्हें कितनी वेदना होगी ! और उनके आपसो सम्बन्धों से भी वे अनजान थीं। आजकल के लड़के-लड़कियों का भला पूछो ! कुछ भी हो, उन्होंने सुहागरात की तैयारी कर रखी थी। आज उन्होंने तपती के कमरे में तपन को भेजने का निश्चय किया था।

रात्रि-भोजन समाप्त हो जाने पर उन्होंने स्नेहभरे स्वर में कहा : 'अब तो तपती पर पढ़ने-लिखने का भार नहीं है बेटा ! आज उसके पास जाना !'

तपन चौंक उठा, किन्तु अपने को सँभालकर बोला : 'उसके मन पर दबाव किसलिये डालती हो माँ ! आजकल की लड़कियाँ ऐसा दबाव सहन नहीं करतीं !'

'लेकिन बेटा...'

उन्हें रोककर तपन बोला : 'तुम यह सब नहीं समझ सकती माँ ! और न मैं कह सकता हूँ। फिर भी जब तुमने अपनी पुत्री

मुझे सौंप दी है, तब मेरे ही ऊपर छोड़ दो कि मैं उसके साथ कैसा बर्ताव करूँ! तुम व्यर्थ ही चिन्ता करती हो; अभी कुछ दिन और बीतने दो !'

तपन की बात सुनकर माँ क्षणभर के लिये स्तब्ध हो गई; फिर करुण स्वर में बोली : 'लड़की के मित्रों का मुझे बहुत डर लगता है, बेटा !'

'तुम घबराओ नहीं माँ ! तुम्हारी पुत्री बड़ी होशियार है ! अगर उसे ऐसी कोई हानि होने की सम्भावना हो तो बहुत दिनों पहले हो जामा चाहिये !'

'यह क्या बेटा ?' माँ काँप उठी ।

'तुम चिन्ता न करो माँ ! तुम्हारी पुत्री को पहिचानने में मुझे समय लगेगा; फिर भी जितना पहिचाना है, उस पर से कह सकता हूँ कि वह अपनी सुरक्षा में शक्तिमान है । मुझे नींद आ रही है, अब सो जाऊँगा !'

माँ अधिक कुछ न बोली : बोल भी नहीं सकती थी । अपने ही दामाद के साथ अपनी पुत्री के सम्बन्ध में कहाँ तक चर्चा की जा सकती है ! तपन के जाने पर उसने तपती के कमरे में जाकर देखा तो वह सो गई थी । माँ एक गहरी साँस छोड़कर लौट आई ।

लेकिन वह निश्चित न हो सकी । आजकल की पढ़ी-लिखी लड़की से कितना कहा जा सकता है ? फिर भी उसने खूब-खूब कहा था । उस समाज में कोई उतना भी नहीं कहता था । उसे एक बात का आश्चर्य हो रहा था—लड़की यह जानते हुए भी कि तपन आज उसके कमरे में आनेवाला है—किस तरह आराम से सो गई ? तपन के लिये उसके हृदय में इतनी भी उत्कंठा, इतना भी उद्वेग न हुआ ? मिसिस चटर्जी कुछ न समझ सकीं ।

तपन ने ऐसा क्यों कहा ?—जो उसने कहा था वही सच होगा। लड़की पर जबरदस्ती किसलिये की जाये ? आज दो-दो महीने से वह तपन को देख रही थी; उस जैसा सुन्दर लड़का उसने एक भी नहीं देखा था। लड़की उसे अभद्र और 'इडियट' मानती हो, तो उसकी बड़ी भूल थी। पुत्री की वह भूल सुधारना ही पड़ेगी। मिसिस चटर्जी पुत्री के भविष्य की चिन्ता में पड़ गईं।

उधर लौटने की पगध्वनि सुनते ही तपती ने आँखें खोलकर देखा तो वह तपन नहीं किन्तु माँ थी ! तपन आ रहा है, यह जानकर वह नौद का अभिनय कर रही थी; किन्तु उसके बदले माँ को देखकर वह कुछ निश्चित हुई। शायद तपन नहीं आयेगा, या फिर थोड़ी देर बाद आयेगा। रात के ग्यारह तो बज चुके !

द्वार खुला रखकर तपती काफी देर तक जागती रही; किन्तु तपन न आया। उसने छुटकारे की माँस ली। तपन आता तो उसे एक क्रूर आघात करने के लिये वह तैयार थी। अच्छा हुआ जो नहीं आया। लेकिन क्या सचमुच नहीं आयेगा ?

वह दबे पाँवों बाहर निकली और तपन के शयनकक्ष के बन्द दरवाज़े के पास आकर खड़ी हो गई। अन्दर से नाक के स्वर स्पष्ट सुनाई दे रहे थे। उसे विश्वास हो गया कि तपन सो गया है। लेकिन क्यों ? तपती ने माँ को न तो सम्मति दी थी और न इन्कार ही किया था ! जाने दो, जो हुआ वह अच्छा ही हुआ। तपन को विश्वास हो गया है कि मैं उसे नहीं चाहती। वह निश्चित हो गई। किन्तु बिल्कुल निश्चित हो गई थी ऐसा नहीं कहा जा सकता। हाँ, आधुनिक युग का विकृत शिक्षण उसकी निराशा को निश्चितता का रूप दे रहा था ! वह विस्तर में आकर लेट गई, किन्तु नौद न आई।

दूसरे दिन प्रातःकाल तपती का थका हुआ चेहरा देखकर माँ ने स्नेह से कहा : 'पति के साथ हिलमिलकर रहना बेटी ! बड़ा अच्छा लड़का है !'

तपती झुंझलाकर बोली : 'रहने दे माँ ! तू व्यर्थ पंचायत करती है !'

माँ स्तब्ध हो गई। जरूर कोई भयंकर बात हो गई थी, लेकिन क्या ? वह न सोच सकी। माँ की चिन्तातुर मुद्रा देखकर तपती अपने शब्दों से चौंक गई। वह धीरे से हँसकर बोली : 'इतनी बड़ी लड़की को कुछ मिखलाना नहीं पड़ेगा माँ ! तू किसलिये इतनी चिन्ता करती है ? हिल-मिलकर ही तो रहती हूँ; क्या एक ही कमरे में रहने से हिलना-मिलना कहलायेगा ?'

तपती के मुँह पर हास्य देखकर माँ को खूब संतोष हुआ। आजकल के चालाक लड़के ! जरूर माँ के आने पर मिले होंगे। तपती के थके चेहरे ने माँ को खूब संतोष दिया। स्नेहाद्र कंठ से वह बोली : 'अच्छी बात है बेटी ! मेरा मन जरा उतावला है इसलिये कह दिया ! अब मुझे संतोष हुआ !'

मुसकराकर तपती बोली : 'तू आराम से रह; चिन्ता की कोई बात नहीं है !'

तपन अन्दर आ रहा था; किन्तु तपती को देखकर दरवाज़े पर ही खड़ा रह गया। माँ ने कहा: 'आ बेटा! खाना खाले।' तपती की बगल में होकर वह एक कुर्सी पर जा बैठा। तपती की आँखें उसे सिर से पाँव तक देख लेने का प्रयत्न कर रही थीं, किन्तु वह देख न सकी। कोट पतलून से तपन का सारा शरीर ढँका था। इस तरह मुँह छिपाने का क्या मतलब? तपती को आश्चर्य हुआ। उसने सोचा : जरूर उसका चेहरा बेढंगा होगा इसलिये दिखाना नहीं चाहता! कदाचित् शर्म का भी कारण हो! वह तपन के बाल ही देख सकती थी। घुँघराले बाल कंधों पर फैल रहे थे; कुछ ही देर पहले स्नान करने से एक पतली सी जलरेखा गरदन पर बह रही थी। गरदन और कंधों के बीच एक काला तिल था। पिछला भाग खूब सुन्दर दिखाई देता था; देह-सौष्ठव भी अच्छा था—छुरहरा और बलिष्ठ।

कदाचित् सब कुछ अच्छा हो, लेकिन था असभ्य! और उसके टीके-टपके, निरामिष आहार, पाँचाली का पाठ—नहीं, यह सब उससे सहन नहीं होगा। भोजन पूरा करके तपती चली गई, किन्तु तपन के साथ माँ की बातें सुनने के लिये बाहर खड़ी रही। माँ कह रही थी : कल तेरी बात पर मैंने खूब विचार किया बेटा! तू ठीक ही कहता है। फिर भी तुम दोनों हमारे सर्वस्व हो; तुम्हारी भलाई की चिन्ता रात-दिन बनी रहती है !'

तपन ने हँसकर कहा : 'ठीक है माँ! मुझसे तुम्हारी पुत्री का अनिष्ट होगा ऐसा क्यों मानती हो ?'

सुनते-सुनते तपती विरक्त हो गई। वह उसका भला कर देगा ?—कैसी हिम्मत ! माँ की आवाज़ सुनाई दी : 'तुम दोनों को सुखी देखने की अभिलाषा है बेटा !'

माँ के कण्ठ से कल्याणकारी आशीर्वाद भर रहा था। उस अपार्थिव मातृमूर्ति के निकट बैठकर तपन छलपूर्ण बात कहने

का साहस न कर सका। वह चुपचाप खाता रहा। तपती ने फिर अन्दर आकर कहा : 'माँ, मेरे लिये एक कप कढ़क चाय बना दे !'

माँ प्रसन्न हो गई। अवश्य ही वे लोग कल मिले होंगे। रात्रि-जागरण के कारण ही लड़की को कढ़क चाय पीने की इच्छा हुई है। उसने कहा : 'थोड़ी देर सो जा तपी ! शरीर हलका हो जायेगा !'

तपन खाना खा चुका था। वह वहाँ से चल दिया। उसे लगा कि तपती ने अच्छा नाटक किया था। माँ एकदम सुग्ध हो गई थी। मातृत्व का वह व्याकुल आवेदन तपन के हृदय को व्यथित कर रहा था; लेकिन वह विवश था। जब उसकी पुत्री ही नाटक कर रही है, तब वह क्या करता ?

खिन्न हृदय से वह बाहर चला गया। तपती भी कढ़क चाय पीकर अपने कमरे में आई और हँसी। फिर एक नोटबुक उठाकर 'स्थिरता की वेदना' काव्य लिखने बैठी।

शिखा कुछ गरीब स्त्रियों को साथ लेकर कारखाने में आ पहुँची। विनायक एक ओर चुपचाप खड़ा था। तपन अभी आया नहीं था। शिखा बोली : 'मिता ! शायद दादा के आने में देर हो, तो हम शुरू कर दें !'

'अच्छी बात है...' विनायक ने धीरे-से हँसकर कहा।

शिखा बोलने लगी : 'बहिनो ! हमारी आवश्यकताएँ इतनी अधिक हैं कि उन्हें पूरा नहीं किया जा सकता। लेकिन डरने से नहीं चलेगा। उन आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये हमें तन-मन से काम में जुट जाना पड़ेगा !'

'मेरे कहने का मतलब यह है कि आप लोग कुछ दिनों तक इस कारखाने में खिखौनों पर रंग करना सीखें; छोटे-छोटे हिस्सों

को जोड़ना सीखें; जिनके हाथ में सफाई हो वे कुछ और सीखें। इसके बाद पूरा साज सरंजाम लेकर आप लोग अभावग्रस्त क्षेत्रों में जाएँगी और वहाँ की स्त्रियों को यह काम सिखला देंगी। उन्हें कच्चा माल देकर खिलौने बनाने के लिये उत्साहित करना होगा। तैयार माल बेचने का भार हमारे ऊपर रहेगा। उन्हें अच्छी मज़दूरी मिलेगी। बेकारी के समय घर बैठे-बैठे यह काम अच्छी तरह हो सकता है।

‘खिलौनों के साथ-साथ हम खाली डिब्बे और तरह-तरह की आयुर्वेदिक औषधियाँ तथा विदेशी ऐसनस-साबुन-स्नो-पावडर आदि से टक्कर लें ऐसी चीजें बनाना भी सिखलायेंगे। उन चीजों की कीमत विदेशी चीजों से आधी होगी और उनकी सारी साधन-सामग्री यहाँ से मिलेगी। आप लोग सिर्फ काम करें। छह महीने तक काम करके देख, पसन्द न आये तो छोड़ देना !’

‘सिर्फ मौज-शौक की चीजों से देश का उद्धार नहीं होगा। वे सब चीजें तो शाकभाजी जैसी हैं। भोजन में शाकभाजी आवश्यक है, लेकिन पहले रोटी और दाल-भात चाहिये !’

‘अगर इस काम में हमें सफलता मिल गई तो इसके बाद का काम बहुत बड़ा है और वह छंद देशवासियों को तैयार करना। हम में से हर एक ऐसे दो-दो, चार-चार आदमी तैयार करेंगी कि जो देशनेता की पुकार सुनकर आगे आ जाये ! मैं आपकी नेतागिरी नहीं करना चाहती, किन्तु आप जैसी हो एक कार्यकर्त्री रहना चाहती हूँ !’

इतने में तपन आ पहुँचा। मृदु हास्य के साथ उसका सन्मान करते हुए शिखा बोली : ‘यह हमारे दादा ! ये और विनायक बाबू हमारी सहायता करेंगे और हमें किसी तरह का नुकसान न हो इस बात का ध्यान रखेंगे। इन्हीं लोगों ने सारा कारखाना तैयार किया है; इनमें अच्छे व्यापार की सूरू है—ऐसा हम मान सकते हैं। यह लोग हमें वचन देते हैं कि नुकसान होगा तो इनका और

नफा होगा तो हमारा। लेकिन नुकसान होगा ही क्यों? आओ, हम आज से ही काम शुरू कर दें !'

छियाँ गरीब थीं, इसलिये सारी योजना सुनकर उन्हें विश्वास हो गया कि सचमुच बेकारी के समय में इस कार्य से थोड़ा-बहुत कमाया जा सकता है। वे सब काम में लग गईं।

तपन ने शिखा को बुलाकर कहा : 'क्या हमेशा यही काम करती रहेगी ? विवाह नहीं करना है ?'

'तुम्हारे होते हुए मैं क्यों उसकी चिन्ता करूँ ! और यह तो आवश्यक कार्य है ! तुम्हारी बहिन तुम्हारे योग्य बनना चाहती है।'

हँसकर तपन बोला : 'अच्छी बात है, इसी महीने में विवाह कर दूँगा।'

'क्यों ? क्या बूढ़ी हो गई हूँ, दादा ?'

'यह सब हमें देखना है, तू अपना काम कर !'

तपन आफिस में चला गया। थोड़ी देर बाद विनायक ने आकर कहा : 'शिखा ! तुम्हारे दादा मुझे बहुत हैरान करते हैं !'

'मरे दादा किसी को हैरान नहीं कर सकते !' शिखा ने विरोध किया।

विनायक ने सिर खुजलाते हुए कहा : 'लेकिन मुझे जो हैरान कर रहे हैं !'

'किसलिये ?'

'मैं सब काम कर सकता हूँ, लेकिन...का काम नहीं कर सकता।'

शिखा हँसकर बोली : 'दादा तो सब कुछ कर सकते हैं...'

'लेकिन मैं नहीं कर सकता उसका क्या !' विनायक ने करुण आकृति बनाकर कहा।

शिखा का नारी हृदय स्नेह से छलक उठा। वह बोली : 'तो क्या मुझे आपका काम कर देना पड़ेगा ? चलो, मैं आती हूँ।'

शिखा एक वनस्पति का छूँदा बनाने लगी। तपन ने मुँह पर गंभीरता लाकर कहा : 'इसका काम तू किसलिये करती है ? तेरा इससे क्या सम्बन्ध ?'

'मित्र !' शिखा ने हँसकर कहा।

'हँ, तब तो...' तपन हँसकर चुप हो गया।

'तब तो क्या ?' शिखा ने पूछा।

'फूलों की डोरी से वह बँधन दृढ़ कर देना पड़ेगा।'

'जाओ दादा, तुम्हारी बातें अच्छी नहीं लगती !'

शिखा मुँह फेरकर पत्ते छूँदने लगी। उसका मुँह लज्जा से लाल हो गया था। विनायक सोचने लगा : तपन की इच्छा शिखा के अन्तर में प्रगट हुई थी; शिखा ने विनायक को ग्रहण कर लिया था, किन्तु क्या सम्बन्ध इतनी योग्यता उसमें थी ? वह सदैव तपन की इच्छानुसार आचरण करता था; आज भी उसने कुछ न बोलने का निश्चय किया।

उस दिन बौद्ध-पूर्णिमा थी ।

एक दुःस्वप्न देखकर तपन जाग उठा । दक्षिणी भाग की चौड़ी दालान से लगे हुए कमरे में तपन और उसी दालान के पश्चिमी भाग के कमरे में तपती रहती थी । बीच में आने वाली दालान मानो नदी जैसी थी—जिसे कभी पार न किया जा सके ! प्रातःकाल का सूर्य तपन के कमरे में अपनी किरणें बिछा देता था और सायंकाल अस्ताचल की ओर जाते समय तपती के कमरे में झँक लेता था । उसमें भी मानो दैव का कोई सूक्ष्म संकेत था ।

माँ बिलकुल शांत और निश्चित हो गई थी । लड़की-दामाद पर पहले जितना ध्यान रखना भी उसने छोड़ दिया था ! वह समझती थी कि दालान पार करके दोनों एक-दूसरे से अच्छी तरह मिलते हैं । अब चिन्ता की कोई आवश्यकता नहीं ।

तपन बोला : 'क्या सोच रही हो, माँ !'

'कुछ नहीं बेटा, खा ले ! तुझ जैसा पुत्र मिलने के बाद मैं और क्या सोचूंगी ?' तपन के हृदय में उथल-पुथल मच गई । उस परम स्नेहमयी जननी को वह जानबूझकर धोखा दे रहा था ! एक-बार उसके मन में आया कि माँ को सारी बात बतला दे । कह दे कि एक डिग्री रहित आर्यधर्म के भक्त तपन को उसकी पुत्री स्वीकार नहीं करेगी । लेकिन इससे क्या लाभ ? निरर्थक क्लेश होगा, तपती

पर दबाव डाला जायेगा। नहीं, ऐसा वह कदापि नहीं करेगा। तपती किसे चाहती है यह जानने का उसने निश्चय किया। उसी के हाथ में उसे सौंपकर वह चला जायेगा। इस घर में उसे जो महान स्नेह प्राप्त हुआ था उसका ऋण भी भविष्य में चुकाने का उसने निश्चय कर लिया।

स्नान किये बिना ही तपती ने बाहर से कहा : 'माँ ! आज़ 'लेक-क्लब' में तैराकी प्रतियोगिता के लिये जाना है। खुद गाड़ी चलाने से हाथ थक जायेंगे; ड्राइवर आया नहीं है; बतला मैं क्या करूँ... !'

माँ ने हँसकर कहा : 'तपन को क्यों नहीं ले जाती ? जा बेटा ! और तपी, पहले तू खाना खा ले।'

'अच्छी बात है माँ, जाता हूँ।' कहकर तपन नीचे उतरा और गाड़ी निकालकर तपती की प्रतीक्षा करने लगा।

थोड़ी देर बाद आकर तपती पिछली सीट पर बैठ गई—तपन के पास बैठना उसे ठीक न लगा। तपन ने निश्चितता से गाड़ी चलाई। क्लब के सदस्य तपती का स्वागत करने के लिये गाड़ी के पास आ पहुँचे। सुन्दर युवा तपती ! कौन उसे देखने की इच्छा रोक सकता था !

'आइये, आइये ! हम आपकी ही प्रतीक्षा कर रहे थे !'

तपती नीचे उतरी। तपन गाड़ी घुमाकर स्टेन्ड पर ले जा रहा रहा था; इतने में एक ने आवाज दी : 'ओ.. ड्राइवर ! स्वीमिंग कॉस्च्युम (तैरने की पोशाक) दे जा !'

तपती ड्रेस लेना भूल गई थी या जानबूझकर मोटर में रख गई थी—कौन जाने ! तपन लापरवाही से उस आदमी को पोशाक दे गया।

बराबर दो घण्टे तक तपन गाड़ी में बैठा रहा। यकायक उसने देखा तो बहुत से युवक-युवतियाँ तपती को घेरे खड़े थे ! तपती की

भीगी हुई लम्बी वेणी सर्पाकार झूल रही थी। भीगी हुई पोशाक पर उसने एक पतली-सी साड़ी पहिन ली थी। उसके हाथ में एक चाँदी का 'कप' था। शायद इनाम में मिला होगा। तपन ने आज तक तपती को टक बाँधकर नहीं देखा था; आज भी उसे देखने की इच्छा न हुई। वह सिर झुकाकर गाड़ी पास ले गया और तपती के पिछली सीट पर बैठते ही ज़ोर से दौड़ा दी।

तपती सोच रही थी : यह गँवार भले ही तपती का सन्मान और उसका साहस देख ले ! समझ ले कि तपती को प्राप्त करने की उसमें ज़रा भी योग्यता नहीं है ! लेकिन तपन ने पीछे मुड़कर भी न देखा। तपती सोचने लगी : वह सब यह जंगली कैसे समझ सकता है ! टीके-टपकों में ही ज़िम्मे के दिन बीत रहे हों उसे तो कान पकड़कर समझा देना चाहिये कि तपती का मूल्य क्या है !

घर पहुँचकर तपती ने इनाम में मिला हुआ 'कप' दूसरे इनामों के साथ रख दिया।

दिनभर वह आत्मगौरव के आनन्द में मग्न रही। तैराकी प्रतियोगिता में आज उसे पहला इनाम मिला था। आज उसने कितनी प्रशंसा, कितना धन्यवाद प्राप्त किया था ! वह उत्साह, वह आवेग मानो उसके सारे शरीर के स्नायुओं को झनझना रहा था। शाम होते ही वह मित्रों के साथ संगीत की महफिल जमाकर बैठ गई।

सामान्यतः तपन रात को साढ़े दस के पहले नहीं आता था; किन्तु आज वह नौ बजे ही लौट आया। जिस कमरे में तपती की महफिल लगी थी उसी के सामने होकर सीढ़ियों तक जाना पड़ता था। तपन चुपचाप ऊपर जा रहा था; किन्तु तपती के मित्रों की दृष्टि उसपर पड़ गई और एक-दो बोल उठे : 'अरे मिस्टर गुसाई ! कहाँ गये थे ?'

तपन पहली ही सीढ़ी पर खड़ा हो गया। उसीसे प्रश्न किया गया था—यह जानकर उसने शांत स्वर में कहा : 'बौद्ध-विहार में गया था।'

'बाप रे बाप ! बौद्ध-विहार में तुम क्या समझो ! किसलिये गये थे वहाँ ?' प्रश्न में स्पष्ट व्यंग था।

तपन क्षणभर स्तब्ध हो गया; फिर शांत स्वर में बोला : 'लड़कियों से चुकटीभर प्रसाद की भीख माँगने की अपेक्षा वह अधिक अच्छा है, कुछ समझ में न आये फिर भी...!'

तपन चला गया। एक युवती तपन की बात सुनकर बोली : 'वे सच कहते हैं; तुम तो लड़कियों से भीख ही माँग रहे हो।'

मि. बनर्जी ने कहा : 'माँगते हैं, लेकिन भीख ले लेने की योग्यता है इसलिये ! उसे कौन भीख देगा ?'

'उन्होंने कभी भीख नहीं माँगी है, वे कभी यहाँ नहीं आये !' एक युवती ने उत्तर दिया।

'क्या खूब कहा ! आये नहीं ! अरे, आने की योग्यता हो तब न ? बौद्ध-विहार में जाने की बात तो बनावटी है। उसने सोचा होगा कि यह सुनकर हम उसे बौद्धधर्म का ज्ञाता मान लेंगे ! लेकिन हम मूर्ख नहीं हैं !'

मि. अधिकारी बोले : 'हाँ, हाँ, वह बेचारा और कर ही क्या सकता है ? यहाँ आने को योग्यता नहीं है, इसलिये बातें बनाकर अपने को महान पण्डित कहलाना चाहता है !'

तपती खड़ी हो गई; उसे यह सब अच्छा नहीं लगता था। मानो उसे काँटे की तरह कुछ चुभ रहा था। तपन क्या सचमुच किसी स्त्री से भीख नहीं माँगता होगा ? क्या वह सचमुच बौद्ध-विहार में गया था ?

उसे शिखा की बात याद आ गई : 'आर्यनारी होकर तूने अपने पति को स्वीकार नहीं किया...' तपती ऊपर चली गई।

उस समय तपन के भोजन का समय नहीं हुआ था। रात के दस बजे थे। वह सामान्यतः साढ़े दस के पहले नहीं आता था। तपती ने देखा तो माँ रसोईघर में एक मेज़ पर बैठी-बैठी कुछ सी रही थी। वह अन्दर न जाकर बाहर ही एक सोफे में लेटकर प्रतीक्षा करने लगी। थोड़ी देर बाद धोती, कुरता और पैरों में चट्टियों के साथ तपन अन्दर आया। उसके हाथ में एक श्वेत कमल था। तपती ने देखा कि वह नजर बचाकर जा रहा है। मुँह न दिखने से तरती ने उसके पैरों को आँर देखा। सुन्दर सुगठित पैर मानो सुनहरे मालूम होते थे—इतना सुन्दर रंग !

‘आ बेटा ! फूल कहाँ से लाया ?’ माँ ने स्नेहपूर्वक कहा।

तपन क्या उत्तर देता है वह सुनने के लिये तपती अधीर हो उठी और कान लगाकर सुनने लगी।

तपन बोला : ‘आज बुद्धदेव की जयंती है, माँ ! देखने गया था; वहीं से यह फूल लाया हूँ।’

माँ ने हँसकर कहा : ‘तुम्हें देखते ही मुझे बुद्ध भगवान की मुखाकृति का स्मरण हो आता है बेटा ! तू ही मेरा बुद्धदेव है।’

तपन तुरन्त बोल उठा : ‘ऐसा न बोलो माँ ! वे तो मानव-देवता हैं; मैं तो उनका दासानुदास होने योग्य भी नहीं हूँ।’

माँ ने चकित होकर कहा : ‘मालूम होता है बुद्धदेव के प्रति तुम्हें बड़ी श्रद्धा है !’

‘क्या श्रद्धा रखना योग्य नहीं है ? श्रद्धेय पर श्रद्धा रखने से हम अपने को ही श्रद्धा-भाजन बनाते हैं। श्रद्धा न रखने से बुद्धदेव का कुछ नहीं बिगड़ेगा माँ, अपने मनुष्यत्व का ही अपमान होगा !’

माँ मुग्ध हो गई; तपती विस्मित-विह्वल हो गई ! यह व्यक्ति इडियट ? उस से अधिक मानवता के गौरव से दीप्तिमान व्यक्ति

तपती ने अपने जीवन में नहीं देखा था। वह एकदम अन्दर चली गई।

‘आ बेटा, खाना खा ले !’ माँ ने कहा।

तपन का लाया हुआ फूल वेणी में लगाते-लगाते तपती बोली :
‘मैंने अभी कपड़े नहीं बदले, माँ !’

‘तो जल्दी जाकर बदल आ !’

फिर भी तपती खड़ी रही। आज उसे इच्छा हो रही थी कि उसके संध्याकालीन वस्त्रों से सुसज्जित शरीर को तपन एकबार देख ले ! किन्तु तपन सिर झुकाये ही बैठा रहा। कुछ देर प्रतीक्षा करने के बाद तपती निराश होकर चली गई।

अर्धरात्रि के समय बिस्तर में लेटी-लेटी तपती सोच रही थी : तपन तो पास वाले कमरे में ही सो रहा है ! वह निराभिमानी व्यक्ति कम खाता है, कम बोलता है और अपने को बिल्कुल तुच्छ रूप में प्रगट करता है। ढँढ़ने पर भी उसका पता नहीं लगता। जो कुछ बोलता है वह माँ के ही साथ। तपती ने इतने दिनों तक उसकी सँभाल नहीं की थी; उलटे, कठोरभाव से आघात ही पहुँचाये थे; उसे जो सम्मान प्राप्त होना चाहिये, उससे वंचित रखा था; फिर भी वह कुछ न बोला; निर्विकार भाव से सब सहता रहा। विचार-सागर में डूबते-उतराते वह कब सो गई इसकी उसे खबर न पड़ी। नींद खुलने पर उसने देखा तो दिन काफी चढ़ चुका था। शरीर में थकावट थी; किन्तु उस ओर ध्यान न देकर वह स्नानगृह में गई। स्नान करके एक पतली आसमानी रंग की साड़ी पहिनी, बालों को खोलकर पीठ पर बिखेर दिया और बाहर आकर खड़ी हो गई। तपन से मिलने की आशा प्रबल हो उठी थी। तपन के बन्द दरवाजे की ओर देखने से मालूम हुआ कि वह कहीं बाहर गया था। रसोई घर के पास आते ही माँ की आवाज़ सुनाई दी। वह कह रही थी :

‘दो लाख रुपये ! इतने रुपयों का वह क्या करेगा ?’

‘कुछ कहा नहीं, जी में आये वह करे ! रुपये की कहाँ कमी है, नीला ?’

पिता जा रहे थे। माँ ने उनसे कहा : ‘अच्छा हुआ, लड़के को कुछ भी लेने की इच्छा नहीं थी ! इतने ले लिये यही अच्छा है !’

‘लेगा, लेगा, चिन्ता किसलिये करती हो ? शिलोंग कब भेजना है ?’

‘रहने भी दो, दोनों बिलकुल नादान हैं ! अकेला कहाँ भेजूँ ? इससे तो मेरी आँखों के सामने रहें यही अच्छा है ! पूजा के त्योहार में सब साथ चलेंगे !’

बात तपन के ही सम्बन्ध में थी। लणभर तपती स्तब्ध खड़ी रही। उसने पिताजी से दो लाख रुपये लिये थे ! इतने रुपयों का वह क्या करेगा ? क्या रुपयों के लिये ही वह तपती का अत्याचार चुपचाप सहन कर लेता था ? यह तो बड़ी धोखेबाजी है ! इसीलिये वह उसके दुर्व्यवहार की बात माता-पिता से नहीं कहता था ? खूब नाटक रचा ! कोई बात नहीं, देख लूँगी !’

तपती रसोई-घर में जाकर चाय पीने बैठी। माँ ने स्नेहपूर्वक कहा : ‘रसोई बनाना तो बिलकुल छोड़ ही दिया, बेटी ! पसन्द नहीं आता ?’

माँ का संकेत बिलकुल स्पष्ट था। तपती ने बड़ी मुश्किल से क्रोध दबाकर कहा : ‘शाकभाजी बनाने की मुझे इच्छा नहीं होती !’

माँ बोली : ‘क्या करूँ बेटी ! माँस-मछली खाना उसे पसन्द नहीं है ! लेकिन ऐसा भी नहीं है कि बिलकुल न खाता हो। तू क्यों उस से खाने के लिये नहीं कहती ?’

‘मेरी बला से ! जिसे जो खाना हो खाये, मुझे क्या ?’

तपती चली गई। माँ ने सोचा कि लड़की को दामाद पर अभिमान है ! मधुर हास्य से उसका मुँह उज्ज्वल हो गया। उसने

तपन से माँसादि खाने को कहने का स्वयं ही निर्णय किया। उसे विश्वास था कि वह जरूर उसकी बात मानेगा।

तपती अपने कमरे में जाकर काफी देर तक सोचती रही : पिताजी से रुपये लेने की उसने अच्छी तरकीब निकाल ली थी ! कोई बात नहीं, भले ही वह रुपये लेकर चला जाये। उसने न तो उसका मुँह देखा है और न देखेगी !

उसके अंतर में विद्रोह की अग्नि भड़क उठी। सिर्फ पचास हजार रुपयों के कारण वह मि. घोषाल जैसे सुपात्र के साथ विवाह न कर सकी, और उनका स्थान लेकर उस मूर्ख ने दो लाख रुपये ले लिये ! तपती को रुपयों का मोह बिलकुल नहीं था, किन्तु वह धोखेबाजी उसे असह्य लग रही थी। उसने जरूर माता-पिता को समझा दिया होगा कि तपती उसे हृदय से चाहती है, इसीलिये तो दो लाख रुपये मिल गये ! तपती के निर्बोध स्नेहमय माता-पिता ने निश्चित होकर उसे संतुष्ट करने के लिये दो लाख रुपये दे दिये ! कोई बात नहीं, तपती भी देख लेगी कि वह कितना धूर्त है !

लेकिन वह मूर्ख तो कदापि नहीं है। शिक्षित न होने पर भी बुद्धिमान अशरय है। रामलीला-नाटकों में पार्ट लेकर उसने बहुत-से अच्छे-अच्छे वाक्य रट लिये होंगे, जिनका समय देखकर उपयोग करता है ! माँ तो माँ है, बेचारी उसके शब्दजाल में फँस गई ! वह उसे बुद्धदेव जैसा सुन्दर कहती थी ! सुन्दर नहीं है इसीलिये माँ ऐसा कहती होगी ? खैर ! सुन्दर हो या कुरूप, तपती का उससे कोई सम्बन्ध नहीं !

तपती गम्भीर मुद्रा में भोजन करने चली गई।

शिखा ने अन्दर जाकर करुण कोमल स्वर में कहा : 'ऐसे दादा किसी के नहीं होंगे माँ ! दादा तो अद्भुत हैं ! मनुष्यों से

इसप्रकार स्नेह करनेवाला कोई नहीं देखा ! लेकिन माँ, मुझे अभी अस्पताल जाना पड़ेगा !'

‘क्यों, कोई बीमार है क्या ?’ माँ ने चिन्तातुर स्वर में पूछा।

‘एक क्लर्क बीमार है; उसके शरीर में खून नहीं है; इसलिये दादा उसे अपना खून देने वाले हैं। किसी की बात नहीं मानी माँ ! हमने तो बहुत समझाया कि किसी को रुपये देकर खून ले लो। लेकिन बोले कि उस आदमी का खून भी उसकी बहिन की दृष्टि में इतना ही कीमती होगा ! फिर क्या कहती ?’

माँ सुनकर कॉप उठी। तपन एक अनजान व्यक्ति को अपना खून दे रहा था ! व्यग्र कंठ से बोली : ‘नहीं, नहीं, शिखा ! तुम उसे किसी भी तरह रोक दो !’

‘वे किसी की नहीं मानेंगे माँ ! दलीलों से उन्हें कोई नहीं समझा सकता। उनके मित्र विनायक बाबू सवेरे से प्रयत्न कर रहे हैं। मेरे लिये थोड़ा-सा गरम दूध और निब्बू का रस तैयार कर दे माँ !’

निरुपाय माता ने निब्बू का रस तैयार करते-करते कहा : ‘उसकी ससुराल में किसी को खबर नहीं है !’

‘नहीं, उन लोगों को पता नहीं है। तू कुछ मत कहना !’

ग्यारह बजे शिखा और विनायक तपन को लेकर वापिस लौटे। शिखा ने तपन को अपने शयनकक्ष में लिटा दिया। विनायक ने फोन से तपती की माँ को खबर दे दी कि आज तपन को किसी दूसरी जगह भोजन करना है इसलिये उसकी प्रतीक्षा न करें।

शिखा की माँ ने आकर कहा : ‘यह क्या बेटा ! अपना खून तूने क्यों दिया ?’

‘इस में क्या हुआ माँ, मैं तो ज्यों का त्यों हूँ !’

‘लेकिन बेटा ! तेरा जीवन हमारे लिये कितना अमूल्य है।’

‘उस आदमी का जीवन भी इतना ही मूल्यवान था माँ ! उसके भी माँ, भाई बहिन, पत्नी, छोटे-छोटे बच्चे—सब हैं। उन सब का पालन-पोषण वह अकेला ही करता है !’

माँ कुछ न बोली। तपन थोड़ा-सा दूध पीकर बोला : ‘डरने की कोई बात नहीं है बहिन ! शाम को चलने-फिरने लगूँगा; अब थोड़ी नींद ले लूँ !’

शिखा बैठी-बैठी हवा कर रही थी। उस की आँखें डबडबा आईं। तपन ने उसे देखकर कहा : ‘क्या हुआ ? रोती क्यों है शिखा ?’

‘मुझे यह सब अच्छा नहीं लगता दादा ! तुम सब को खून ही देते रहोगे !’

‘मेरे अकेले के खून से क्या होगा शिखा ? फिर भी इस स्वार्थी और नपुंसक पशुजाति को खून देकर ही जिलाना पड़ेगा; नहीं तो आर्यगौरव का लोप हो जायेगा।’

तपन करवट लेकर सो गया। विनायक ने शिखा को अधिक न बोलने का संकेत किया।

स्नेह के जिस सामान्य सूत्र को पकड़कर तपती तपन के अंतर में प्रवेश कर सकती थी, वह तपती के मनोवैज्ञानिक मन की दाहक विचारधारा में भस्म हो गया। एक अर्थलोलुपी नौकर के सिवा अन्य किसी रूप में वह तपन की कल्पना नहीं कर सकती थी। एक बार उसने सोचा : तपन में ऐसा कौन-सा गुण है कि माता-पिता इतने मुग्ध हो गये ! दूसरे ही क्षण विचार आया कि उस चतुर व्यक्ति में अभिनय का ही गुण था। तपती ने उस की कठिन परीक्षा करने का निश्चय किया।

उस दिन तपती चमकते हुए लाल रंग की साड़ी पहिनकर बाहर आई। देखने में वह अग्निशिखा-सी लगती थी। माँ ने देखते ही हँसकर कहा : 'धूमने जा रही है बेटी ?'

'नहीं, मि. अभिनव ब्रोस बैरिस्टर हांकर आये हैं, इसलिये उन्हें चाय का निमंत्रण दिया है। लेकिन माँ, फूल तो अभीतक नहीं आये ! फोन पर अपने दामाद से लाने को कह दे न !'

माँ ने हँसकर कहा : 'खुद नहीं कह सकती ? शर्मिली लड़की !'

'मेरे लिये नहीं माँ, एक मेहमान के लिये लाना हैं, इसलिये शर्म आती है !'

माँ कुछ न समझी; उस ने तपन को फोन किया। विजयिनी के आनन्द से तपती सोचने लगी : भोली माँ नहीं समझती कि उसी के द्वारा मैंने उस के स्नेहपात्र का कैसा अपमान किया है ! जब वह फूल लेकर आयेगा तब उसी के सामने वह मि. बोस को भेंट देगी। तपती बैठी-बैठी प्रतीक्षा करने लगी।

मि. बोस आ पहुँचे, किन्तु फूल अभी तक नहीं आये थे ! तपती क्रोधित होकर विरक्त भाव से उन्हें दूसरी मंज़िल पर बैठाकर चाय दे रही थी। ठीक साढ़े पाँच बजे एक कागज़ में बँधे हुए फूल लेकर तपन ऊपर आ रहा था। यह देखकर तपती एकदम उसके निकट जा पहुँची और बोली : 'बड़ी देर हो गई, लाओ !' उस ने फूल लेने के लिये हाथ बढ़ाया, किन्तु तपन ने पास ही पड़ी हुई टिपाई पर फूल रख दिये और जाने लगा। क्रोध से धुआँफुआँ होकर तपती बोल उठी : 'हाथ में नहीं दे सकते ? इतनी देर क्यों लगाई ?'

तपन ने मुड़कर भी न देखा; वह चुपचाप चला गया।

मि. बोस ने पूछा : 'कौन है ये ?'

'मेरी माँ ने पालन-पोषण किया है !' तपती ने क्रोध में उत्तर दिया। शब्द तपन के कानों तक पहुँच गये थे; फिर भी वह चला गया। तपती सिर से पाँव तक सुलग उठी। फूलों का पुड़ा खोलकर झल्लाती हुई रसोई घर में पहुँची और माँ से बोली : 'तेरे दामाद फूल खरीद लाये हैं, देख ले ! कितने बासी, सड़े हुए और कुम्हलाये... एक हार भी न ला सके !'

माँ ने देखा तो ताज़े फूल तपती के हाथ से मसलकर म्लान हो गये थे। उसने क्रोधित होकर कहा : 'हार लाने को तूने कब कहा था, बेटी ? और फूल तो ताज़े ही मालूम होते हैं !'

'तेरा सिर ! यह फूल क्या विलायत से आनेवाले बैरिस्टर को दिये जा सकते हैं ?' कहकर वह चली गई।

माँ विह्वल दृष्टि से देखती रही, फिर बोली : 'लड़की बहुत क्रोधी है, बेटा ! तू बुरा मत मानना ! फूल तेरे कमरे में ही रखे आती हूँ !'

मधुर हास्य बिखेरकर तपन बोला : 'यह फूल तुम्हारे चरणों में रख दूँ माँ ! मेरा लाना सार्थक हो जायेगा !'

माँ क्या कहती है—वह सुनने के लिये तपती बाहर खड़ी थी। तपन के शब्द सुनकर वह मात्र विस्मित ही नहीं, विमूढ़ हो गई। ऐसा घोर अपमान करने पर भी उसे कुछ न हुआ !

उसी के सामने वह एक पुरुष को एकान्त में बैठाकर मञ्जे से खिला रही थी; इस पर माँ ने भी बहुत कहा था। लेकिन विलायत से आनेवाले व्यक्ति के साथ तपन एक टेबल पर बैठकर खाना नहीं खायेगा,—इस बहाने तपती ने अपना बचाव कर लिया था ! उसी पुरुष के लिये वह फूल ले आया, और अपमान करने पर वे फूल माँ को अर्पित कर दिये ! इतना महान आश्चर्य तपती ने अपने जीवन में नहीं देखा था। या तो वह महा धूर्त होना चाहिये, या फिर अद्भुत सहनशील संन्यासी !

तपती को यकायक दादाजी की बात याद आ गई : 'तेरे पति की बराबरी कोई नहीं कर सकेगा !' सचमुच, कोई उस की बराबरी नहीं कर सकता। लेकिन उस ने रुपये क्यों लिये ? दो लाख रुपये का वह क्या करेगा ? कंगाल का लड़का ठहरा ! दो लाख रुपये चतुराई से ले लिये; और अधिक लेने का प्रयत्न कर रहा है, इसी लिये तो यह सब सह लेता है ! यहाँ से निकाले जाने पर भी मञ्जे से रह सके—ऐसी व्यवस्था कर रहा था !

तपती का क्रोध कम हो गया, किन्तु चिन्ता जागृत हुई। तपती देख लेगी कि वह कितना अपमान सहन कर सकता है ! अन्त में चौदहवें रत्न का परिचय देकर तपती ने उसे निकाल देने का निर्णय किया।

मि. बोस के साथ चाय पीकर तपती उन्हीं के साथ कार में घूमने चली गई। तपन कभी तपती के साथ घूमने नहीं जाता था। शाम का नारता करके वह पुनः मकान के कार्य का निरीक्षण करने या फिर अकेला ही घूमने निकल जाता था। तपती रोज़ अपने मित्रों के साथ टेनिस खेलती या घूमने जाती। आज मि. बोस के साथ तपती का अकेला जाना माँ को अच्छा न लगा। मि. बोस और तपन की उपस्थिति में तो उस ने कुछ न कहा, किन्तु निश्चय कर लिया कि लोटते ही वह तपती को अच्छी तरह फटकारेगी और ऐसी व्यवस्था करेगी कि फिर न जाये।

मि. बोस के साथ गाड़ी में बैठी-बैठी तपती सोच रही थी—कैसे उस व्यक्ति का अपमान किया जाये ? मि. बोस ने कहा : 'क्या सोच रही है मिस चटर्जी ?'

तपती बोली : 'हाँ।'

'हँ का क्या मतलब ? इतने गहरे विचार में हो कि बात ही नहीं सुन सकती ?'

लज्जित होकर तपती बोली : 'हाँ हाँ, एक बात सोच रही थी। चलो, कोई सिनेमा देखें !'

गाड़ी एक विशाल सिनेमा-हॉल के पास आकर रुक गई। दोनों टिकट लेकर अन्दर पहुँचे। तपती ने सोचा था कि अँधेरे में तरकीब ढूँढ़ निकालना आसान होगा। वह चुपचाप कुर्सी पर बैठी थी; किन्तु मि. बोस को सिनेमा की अपेक्षा तपती का मनोहर रूप देखने और उस की बातचीत सुनने की अधिक इच्छा थी। वे बोले : 'सिनेमा तो सैकड़ों देख आया-छाया और काया दोनों; अब छाया देखने की इच्छा नहीं होती !'

'काया तो बहुत-सी देखी होंगी-श्वेत, शुभ्र,—उस ओर अरुचि नहीं हुई ?'

'हुई है, इसी लिये तो कंचनकान्ति देखने आया !'

यहाँ तो सब 'तन्वीश्यामा' हैं; कंचनकान्ति देखना हो तो कान्यकुब्ज जाओ ।'

'यह कौन-सा देश है ?' मि. बोस हँस पड़े ।

'भूगोल देखना पड़ेगी, क्योंकि मैं भी नहीं जानती ।'

'जानने की क्या जरूरत ? यहीं कंचनकान्ति मिल गई है ।'

'निकट ही ?'

तपती ने अपना ही संकेत किया ! तो क्या मि. बोस का स्वप्न सत्य सिद्ध होगा ? तपती, तपस्या का धन तपती ! मि. बोस ने तपती का हाथ पकड़कर कहा : 'रियली आइ देव नेवर सीन सच ए ब्यूटीफुल गर्ल लाइक यू!—सचमुच, तुम जैसी सुन्दर युवती मैंने दूसरी नहीं देखी !'

तपती ने कहा : 'यह बात तो कई लोगों के मुँह से सुनी है !'

'चिर पुरातन ही हमेशा सुन्दर होता है, मिस चटर्जी !'

ऐसा नहीं है; चिर सुन्दर ही हमेशा पुरातन होता है; क्योंकि पुरातन होने पर भी वह सुन्दर न भी हो; किन्तु सुन्दर होने से पुरातन नहीं होता । जैसे यह पृथ्वी, यह आकाश, यह सब ग्रह नक्षत्र !—यह सब पुरातन होने से सुन्दर नहीं है, किन्तु सुन्दर होने से ही सदैव नूतन है !'

मि. बोस अपनी विलायती विद्या का उपयोग न कर सके । कुछ देर सोचकर बोले : 'प्रेम की बात पुरातन नहीं है ?'

'प्रेम की बात सुन्दर होने से ही पुरातन नहीं है, पुरातन होती ही नहीं !'

'तो फिर मेरी बात को आप ने पुरातन कैसे कहा ?'

'यह क्या आप के प्रेम की बात है ? यह तो रूपमुग्ध पुरुषचित्त की खुशामद है ! प्रेम की बात ऐसी नहीं होती ।'

'तो फिर कैसी होती है ?'

‘यह मैं नहीं जानती, और न किसी से सुनी है।’ सिनेमा खत्म हो गया था। तपती फिर बोली : ‘सारा समय बातचीत में ही निकल गया, कुछ देख नहीं पाया।’

‘कल फिर आयेंगी?’

‘देखा जायेगा.....’ कहकर तपती गाड़ी में बैठ गई।

तपती के आने पर उसे डाँट-फटकार बतलाने से पहले ही माँ ने देखा तो वह बिस्तर में बैठी-बैठी आँसू बहा रहा थी। माँ ने ब्याकुल भाव से पूछा : ‘क्या हुआ बेटी?’

‘कुछ नहीं, जा!’ कहकर वह बिस्तर में औंधी लेट गई और फूट-फूटकर रोने लगी। विस्मय और वेदना से माँ कुछ देर उस के सिर पर हाथ फेरती रही और फिर बोली : ‘क्या हुआ बेटी! मुझ से कहने में क्या शर्म!’

‘कुछ नहीं माँ! दादाजी की बात याद आ गई थी। बुड्ढे ने मुझे खूब धोखा दिया!’

‘छि: बेटा, स्वर्गवासी महापुरुष से ऐसा नहीं कहा जाता! तुझे हुआ क्या है?’

रोने से तपती का हृदय-भार कम हो गया था। बैठते हुए बोली : ‘तेरे ससुर तेरी दृष्टि में महापुरुष होंगे, किन्तु मेरे तो दादाजी थे, जो जी में आयेगा कहूँगी!’

कहकर वह कपड़े बदलने चली गई। माँ कह आई : ‘कपड़े बदलकर खाना खाने चल बेटी, कितनी रात हो चुकी है!’

तपती कपड़े बदलते-बदलते सोचने लगी : दादाजी कहते थे कि उसका पति अद्वितीय प्रेमी, अद्वितीय मनुष्य होगा! तपती आज तक हज़ारों प्रलोभनों से परे रही थी। वह क्या उस धूर्त अर्थलोलुपी के लिये? ज्योतिष कभी सत्य सिद्ध नहीं होता।

मनुष्य के मन का निर्माण इसप्रकार का हुआ है कि वह अपनी समालोचना करते हुए डरता है। वह अपने दुष्कर्मों की ओर दृष्टि नहीं डालता और अपनी दुर्बलता से अपने कार्य का समर्थन करता है। तपती ने एकबार भी तपन के प्रति किये गये व्यवहार के सम्बन्ध में विचार किया होता तो वह तुरन्त समझ जाती कि सारा दोष तपन का नहीं था। अत्यन्त आधुनिक बनते हुए उस ने अपनी पूर्व संस्कृति को हृदय से अलग कर दिया था। उसके सुषुप्त हृदय में वंशपरम्परागत संस्कारों की ज्योति जल रही थी। इन दो परस्पर विरोधी संस्कारों के संघात से तपती अनजाने ही उद्दाम, उच्छृंखल बन गई थी। तपन में कोई अच्छा अंश हो सकता है—उस का वह विचार भी नहीं कर सकती थी। अच्छा अंश न हो तभी वह मानो सन्तुष्ट हो सकती थी। माता-पिता उसे इतना स्नेह करते हैं यह विचार आते ही वह ईर्ष्या से सुलग उठती थी। उस से स्नेह करने का कारण ही क्या था ? दो-चार बार 'माँ-माँ' कहकर बुलाने से, और नाटकीय ढंग के वाहवाह जैसे शब्दों से किसी का स्नेह प्राप्त करने की योग्यता नहीं आ जाती। उसे बातचीत करने योग्य पात्र एक माँ ही थी; किन्तु माँ के साथ भी कहाँ तक

बातचीत हो सकती है ? कहने जैसा था भी क्या ? कदाचित् तो, तो भी वह घर में कुल आठ घंटे से अधिक नहीं रहता था—रविवार को भी नहीं ! उस में से छह घंटे तो सोने में चले जाते थे !

किसी को मालूम नहीं था कि रुपये लेकर उस ने क्या किया ! बैंक में जमा कर दिये होंगे, और क्या ! कल पिताजी कह रहे थे : 'यह जानने की क्या जरूरत है कि रुपयों का उस ने क्या किया ? वह कहीं शराब या गाँजा तो पीता नहीं है !' शराब-गाँजे के सिवा रुपये खर्च करने के दूसरे रास्ते नहीं हैं ? लेकिन खर्च करेगा ही किसलिये ? भविष्य के लिये इकट्ठे कर रखे होंगे। वह तो समझ ही गया होगा कि तपती उसे घर से निकाल देगी; इसी लिये पहले से व्यवस्था कर ली थी !

तपती तंग आ गई थी। उस निराशाजनक परिस्थिति से मुक्त होने की उसे तीव्र इच्छा थी। तपन को निकाल देने से ही सब ठीक हो सकता था; किन्तु निकाल देने का उपाय ढूँढ़ निकालना सरल न था।

तपन भोजन कर रहा था। वह क्या बातचीत करता है वह सुनने के लिये तपती भी खाने बैठ गई। तपन सिर झुकाये बैठा था। माँ समझती थी कि अब भी तपन की लज्जा दूर नहीं हुई थी। उस ने तपती से कहा : 'तू थोड़ी देर बाद खा लेना बेटी !'

'क्यों ? मैं कहाँ तेरे दामाद के हाथ से छुड़ाकर खाये लेती हूँ ! मुझे खूब भूख लगी है !'

संतान को भूख लगी है—यह जानकर कोई माता स्थिर नहीं रह सकती, फिर भी माँ आनाकानी कर रही थी। तपती ने हठ पकड़ी : 'बिता खाये नहीं जाऊँगी !' आखिर माँ ने उसे थाली परोस दी।

तपन खाते-खाते बोला : 'शाम को नाश्ता करने नहीं आऊँगा माँ !'

'क्यों बेटा ? कहाँ जाना है ?' माँ ने पूछा।

'अपनी छोटी बहिन के घर, आज उसे सिनेमा ले जाना है।'

माँ कुछ देर चुप रहकर बोली : 'तपी को भी ले जा, बेटा !'
तपती इन्कार करके बैठी रही ।

तपन बोला : 'यह कैसे हो सकता है माँ ? मेरी बहिन के घर तुम्हारी पुत्री कैसे जा सकती है ? रिश्तेदारों के घर निमंत्रण के बिना कोई नहीं जाता !'

माँ अपनी भूल समझकर बोली : 'हाँ, बेटा । यह तो मुझे याद ही नहीं रहा ! कौन-सा खेल देखना है ? जाते समय इसे रास्ते में बिठा लेना !'

'मैं ट्राम में जाऊँगा, और वहाँ से उसी तरफ ..इस रास्ते से नहीं जाना है !'

तपन चला गया । खाने के बाद तपती ने अखबार हाथ में लिया । ज्योति गोस्वामी नामक एक लेखक की कहानी पर बनाई गई फिल्म का उस दिन उद्घाटन होना था । तपती ने भी वह फिल्म देखने का निश्चय कर लिया ।

शाम को तीन-चार पुरुषमित्रों और सहेलियों के साथ तपती ने सिनेमागृह के पास आकर देखा तो 'हाउस फुल !' टिकट न मिलने से वे लांग वापिस लौट रहे थे कि उसी समय मि. बनर्जी ने आवाज़ दी : 'अरे तपनबाबू !'

तपन ने मुँह फेरकर कहा : 'क्या कहते हैं ?'

तपती ने आश्चर्य के साथ देखा तो तपन के पास ही एक सुन्दर युवती खड़ी थी । तपती सिर से पाँव तक सुलग उठी— ईर्ष्या से !

मि. बनर्जी ने कहा : 'हमें टिकट नहीं मिलती, आप ने ले ली ?'

तपन ने दृष्टा : 'आप लोग कितने आदमी हैं ?'

'पाँच...' कहकर मि. बनर्जी लौटने ही वाले थे कि तपन बोला : 'आप एक मिनट ठहरिये, मैं अभी आता हूँ !'

सब अवाक् बनकर खड़े रहे। तपन उस युवती का हाथ पकड़कर अन्दर चला गया। दो मिनट बाद एक सुन्दर युवक ने आकर कहा : 'अन्दर चलिये !'

'टिकट मिल गई ?'

'जी हाँ !'

'उन सब को विनायक ने बॉक्स में ले जाकर बिठा दिया !'

तपती को आश्चर्य हो रहा था : तपन को कैसे टिकट मिल गई ? शायद रिश्वत देकर तपती के सन्मान की रक्षा की होगी। रुपये तो उसके पिता के ही थे। लेकिन वह कहाँ बैठा है ? अपनी ही टिकटें तो नहीं दे दी होंगी ! चारों ओर दृष्टि डालने पर भी उसे तपन और वह युवती दिखाई न दी। क्या तपती के भय से उसे लेकर भाग गया होगा ! मि. बनर्जी बोले : 'शायद भाग ही गया है !'

तपती इतना ही बोली : 'हाँ !'

चित्र शुरू हुआ। चित्र में एक नारी-जीवन का इतिहास था। वह अभागिन नारी प्रतिदिन पति की प्रतीक्षा करती थी। सेज विछाती आँगन में चौक पूरती, मार्ग की दूब को चूमकर कहती : 'जिस दिन मेरा प्रियतम तेरी कोमल छाती पर चरण रखकर आयेगा, उस दिन मैं तुझे सौ-सौ बार चूमूँगी !' लेकिन उसका प्रियतम न आया— आया उसका संदेशा : 'प्रिये ! हम दोनों के बीच आँसुओं की सरिता बह रही है ! हम दोनों के सिर पर एक ही गगन उस नीर का प्रतिबिम्ब झेलता है। ऐसा लगता है जैसे तू आई हो, सिर्फ आँसुओं का ही अंतर शेष है ! इतना भले ही रहे; तुझे प्राप्त करने की आशा सदैव मेरे अंतर में बनी रहेगी !'

तपती मुग्ध होकर देखती रही। उस का रसग्राही हृदय स्तब्ध होकर पृष्ठ रहा था : 'इस रूढ़ की परख करनेवाला कवि कौन है ?'

कोई उसके प्रश्न का उत्तर न दे सका; क्योंकि चित्र में लेखक का कोई परिचय नहीं दिया गया था। किसलिये उस अद्भुत नाट्य-

कार ने अपने को छिपा रखा था—यह तपती न समझ सकी।

घर आकर उस ने तपन के कमरे की ओर दृष्टि डाली। वह अभी तक नहीं आया था। उस युवती को लेकर कहाँ गया होगा ? खाते-खाते वह चित्र की बात सोचने लगी। कुछ देर बाद बाहर से ही आकर तपन ने कहा : 'मैं खाकर आया हूँ माँ ! अब कुछ नहीं खाऊँगा !' तपती का क्रोध बढ़ गया। वहाँ रात को जीमकर ही आया ! तपन के जाने पर तरनी ने माँ से पूछा : 'इन की कैसी बहिन है—सगी या मानी हुई ?'

'नहीं, चचेरी बहिन ! लड़की बचपन से ही उसे खूब प्यारी है।'

'ऐसा !' तपती कटाक्षसूचक मुँह मटकाकर चली गई।

तपती के जीवन का निर्माण इसप्रकार हुआ था कि आधुनिक समाज के किपी युवक को उसका हृदय जीत लेना आसान न था । उसी में प्राचीन समाज के पक्षपाती का तो उसे मुग्ध करना असम्भव था । उस के जीवन में प्राचीन और आधुनिक संस्कारों का सिंचन हुआ था; किन्तु उनका समन्वय नहीं । उस के दादाजी की शिक्षण-पद्धति थी एकदम प्राचीन, जबकि पिता की बिल्कुल आधुनिक । दोनों शिक्षणों के समन्वय का तपती की माता ने निर्बल प्रयास किया था, किन्तु प्रगतिवाद की भयंकर बाढ़ के सामने बाँध बाँधने का निर्बल प्रयास उस में बह गया । उस ने जो किया था, उसका परिणाम रोके हुए बाढ़ के पानी की भाँति भयंकर आया । तपती पिछले कुछ दिनों से विचार-सागर में गोते खा रही थी । कभी वह तपन को घर से निकाल देने के उपाय सोचती थी तो कभी विचार करती थी कि उसे निकाल देने की क्या आवश्यकता है ? वह उसे कोई हानि नहीं पहुँचाता !

किन्तु उस दिन सिनेमा में तपन को एक सुन्दर युवती के साथ देखने के पश्चात् तपती के हृदय में क्रोध की ज्वाला भड़क उठी थी । वह युवती उसकी सगी बहिन नहीं थी, शायद बहिन भी नहीं होगी; वह अवश्य झूठ बोला होगा । लेकिन कोई बात

नहीं, उस से वह ईर्ष्या नहीं करेगी, ईर्ष्या करने जैसा कारण भी नहीं था। उसे जहाँ जाना हो, जाये; किन्तु अपने ही घर में, अपने ही पिता के टुकड़ों पर जीनेवाला नौकर उस का अपमान करे इसे वह कदापि सहन नहीं करेगी। उस का प्रतिकार करने के लिये उस ने तपन का भयंकर अपमान करने का निश्चय किया।

इतना सब कुछ होने पर भी वह किसलिये वहाँ रहता था?—यह समझना तपती की बुद्धि से परे था; लेकिन इतना तो वह अवश्य जानती थी कि वह महान स्वार्थी है। रुपये तो उस ने प्राप्त कर लिये थे; अब किसी भी समय निकल भागेगा! अवश्य ही अधिक रुपये लेने के लोभ में वह यहाँ पड़ा होगा! या फिर धीरे धीरे उस का हृदय जीतना चाहता है? अगर यही उस का हेतु हो तो तपती किसी भी तरह उसे निष्फल कर देगी! तपती ने संकल्प कर लिया। उस ने मि. बोस को फोन किया। उसे आज उन्हीं के साथ घूमने जाना था। कुछ ही देर में मि. बोस आ पहुँचे। तपती ने उन्हें सम्मानपूर्वक बिठाया। तपती की इच्छा थी कि थोड़ी देर बाद तपन नाश्ता करने आयेगा और उसे एकान्त में मि. बोस के साथ एक ही सोफे पर बैठा देखकर खूब अपमानित होगा। लेकिन काफी देर तक बैठे रहने पर भी तपन न आया और वह मि. बोस के साथ मोटर में घूमने निकल गई।

रात को करीब दस बजे तपती मि. बोस की गाड़ी चलाती हुई बैंगले के कम्पाउण्ड में आई। मि. बोस बगल में बैठे थे। उसी समय दरवाजे पर खड़े हुए दरबान से बातें करते हुए तपन पर तपती की दृष्टि पड़ी। हॉर्न बजाये बिना ही उसने गाड़ी अन्दर ले ली; किन्तु तपन मुँह फेरकर खड़ा था इसलिये देख न सका। मि. बोस ने तपन को धमकाकर कहा : 'बीच रास्ते में क्यों खड़ा है? इडियट !'

तपन ने आश्चर्यचकित होकर देखा और फिर तुरन्त एक ओर हटकर खड़ा हो गया। उसे इस तरह अपमानित हुआ देखकर दरबान भी अचम्भे में पड़ गये, किन्तु तपती गाड़ी चलाते-चलाते बोली : 'वह इडियट का अर्थ ही नहीं जानता, मि. बोस !'

तपन कुछ देर चुपचाप सिर झुकाए मूर्तिवत् खड़ा रहा; मानो उस में हलन-चलन की शक्ति ही न हो। एक कप कॉफी पीने का आग्रह करके तपती मि. बोस को अन्दर ले गई। वह भी तपन ने देखा और धीरे-धीरे ऊपर चढ़ा।

तपती ने मि. बोस को कॉफी पीलाकर विदा किया और माँ के पास गई। उसे देखते ही माँ बोली : 'तपन अभी तक क्यों नहीं आया बेटा ?'

'आ तो गये हैं !' कहकर तपती ने हँसते हुए माँ की ओर देखा। माँ ने सोचा शायद दोनों एक साथ घूमने गये होंगे। उस ने तपन के दरवाज़े में आकर आवाज़ दी : 'चल बेटा खाना खा ले !'

'आज कुछ नहीं खाऊँगा, माँ ! तुम ज़िद मत करना; खूब थक गया हूँ इसलिये सो जाऊँगा।' तपन ने उत्तर दिया।

'यह क्या बेटा ? थोड़ा दूध तो...' माँ ने अत्यन्त ग्याकुल भाव से कहा।

'नहीं माँ, नहीं-आज कुछ नहीं-मुझे कुछ देर सोने दो !' तपन के स्वर में करुणता थी। माँ ने भयभीत होकर तपती से पूछा : 'क्या झगडा-बगड़ा किया है, बेटा ?'

'मैं किसलिये झगडूँगी ?' कहकर चलते-चलते बोली : 'मैं क्लब में जीमकर आई हूँ, इसलिये कुछ नहीं खाऊँगी।' माँ की समझ में कुछ न आया, वह उलझन में पड़ गई। अन्त में उस ने अपने मन को मनाया कि तपन कहीं खाकर आया होगा। आज उस ने 'सावित्री-व्रत' करने को कहकर उपवास किया था; रात को फल और मिठाई खायेगा-ऐसा सोचकर माँ ने सब तैयार किया

था; लेकिन शायद तपती ने उसे क्लब में फल और मिठाई खिलाई होगी, इसलिये तो वह चुप थी !

तपती सोच रही थी कि आज उसने तपन का भयंकर अपमान किया है। इतने पर भी अगर उसने घर न छोड़ा तो वह क्या कर सकती है ! मि. बोस को खबर न थी कि तपन का उस घर के साथ क्या सम्बन्ध था। उसे एक नौकर समझकर और तपती उसका तिरस्कार करती हैं यह जानकर ही उन्होंने उसे खुश करने के लिये 'इडियट' शब्द का उपयोग किया था। तपन का उस घर के साथ क्या सम्बन्ध था—यह जाननेवाला कोई भी ऐसा साहस नहीं कर सकता था। तपती को विश्वास हो गया कि अब वह अवश्य घर छोड़कर चला जायेगा।

लेकिन तपन के साथ माँ की कुछ बातचीत तपती ने सुन ली थी। उसने मि. बोस से मिलकर उसका जो अपमान किया था, क्या उसी के लिये वह उपवास कर रहा था ? ऐसा भी हो सकता है। तपन ने दिनभर कुछ नहीं खाया—यह तपती जानती थी। उसने उपवास प्रारम्भ करके मानो तपती को सूचित कर दिया था कि उसका अपमान हुआ है। वह ढोंगी-धूर्त समझता होगा कि तपती उससे डर जायेगी ! नहीं, वह कदापि नहीं डरेगी। भले ही सारी बात उसके माता-पिता से कह दे, फिर भी नहीं ! उलटा इस से तो अच्छा ही होगा ! माता-पिता को तपती उसका सच्चा स्वरूप बतला देगी।

बहुत देर तक सोचने के बाद तपती को विचार आया—जब मि. बोस को मालूम होगा कि तपन के साथ उसका क्या नाता है, तब वे क्या सोचेंगे ?—उचित ही मानेंगे—बिल्कुल अयोग्य मानकर ही तपती ने उसका अपमान किया था। अगर माता-पिता खूब

नाराज़ हो गये तो ? माँ तो जरूर नाराज़ होगी । आज ही तपन ने न खाने का कारण बतला दिया होता तो माँ आसमान सिर पर उठा लेती ! लेकिन वह कुछ बोला क्यों नहीं ? अब भी वह यहाँ रहना चाहता था ? —तरह-तरह की दुश्चिन्ताओं के कारण तपती को नींद न आई ।

रातभर अपने दुर्भाग्य का विचार करते-करते सवेरे तपन नहा-धोकर पूजा करने बैठा । भयंकर अपमान से उसका हृदय व्याकुल हो उठा था; पूजा में उसका मन न लगा । थोड़ी देर में पूजा समाप्त कर दी, और बाहर जाने के कपड़े पहिने बिना दरवाज़ा खोला । आश्चर्य के साथ उसने देखा तो तपती भीगे हुए बाल पीठ पर बिखराये दालान में खड़ी थी । वह कभी तपन के कमरे के दूतने निकट नहीं आई थी । तपन आश्चर्यचकित होकर उसके शब्दों की प्रतीक्षा करने लगा । उसके हृदय में आशा और उमंग का घमसान चल रहा था ।

‘देखो, महाशय !’ तपती ने रोष के साथ कहा । ‘इस घर में यह ‘हंगर-स्ट्राइक फाइक’ नहीं चल सकती । ऐसा करना हो तो यहाँ से चले जाओ !’

तपन दो मिनट तक हतबुद्धि होकर खड़ा रहा; फिर कुछ उत्तर दिये बिना भोजन करने चला गया । अपनी बात की इस तरह अवहेलना देखकर तपती का हृदय तपाये हुए लोहे की भाँति अग्निमय हो गया; किन्तु तपन को रसोई-गृह की ओर जाते देखकर उसने सोचा कि वहाँ जाकर वह सारी बात माँ से कहेगा—या चुपचाप खा लेगा ? क्या करता है वह देखने के लिये तपती एकदम रसोई-गृह के पास पहुँच गई । तपन सिर झुकाए एक कुर्सी पर बैठ गया । माँ बोली : ‘बैठ बेटा ! कल किसलिये उपवास किया ?’

‘कुछ फल-मिठाई खाने को दो माँ !’ तपन ने निर्जिप्त भाव से

कहा। फल-मिठाई देते हुए माँ ने हँसकर कहा: 'सावित्री-व्रत तो स्त्रियाँ करती हैं बेटा! तू किसलिये करता है?'

'मेरी माँ वह व्रत करती थी; किन्तु पूरा होने से पहले ही उसका स्वर्गवास हो गया, इसलिये मैं उसे पूरा किये देता हूँ। शास्त्र में ऐसा विधान है!'

'यह बात है! आज चावल नहीं खायेगा, बेटा?'

'नहीं माँ! थोड़े-से फल और मिठाई ही खाऊँगा।'

तपती बैठी-बैठी चाय पी रही थी; तपन की बात सुनकर वह अवाक् हो गई!—उसने अपमानित होकर नहीं, किन्तु अपना व्रत पालने के लिये ही उपवास किया था! लेकिन कल रात को भोजन करने के लिये उसने जरूर माँ से कहा होगा, नहीं तो वह बुलाने क्यों जाती? कल रात को गुस्से के कारण ही उसने भोजन नहीं किया होगा। लेकिन यह बात तो वह माँ से भी कह सकता था!—न कहने में अवश्य कोई स्वार्थ होना चाहिये। रुपये लेना हैं इसी लिये मुझे नाराज़ नहीं कर सकता, घर छोड़कर नहीं जा सकता, और माता-पिता से भी नहीं कह सकता कि तपती मुझे स्वीकार नहीं करती! लेकिन कोई बात नहीं—तपती ने स्वयं ही माता-पिता से कह देने का निश्चय कर लिया। उस अर्थलोलुपी, स्वार्थी धूर्त को वह कभी अपना पति नहीं मान सकती!

उसी समय तपती यह कार्य कर सकती थी, किन्तु कल तपन ने उपवास किया था, इसलिये भोजन के समय झगड़ना ठीक न मानकर उसने जबरन अपनी इच्छा को दबा दिया और अपने कमरे में चली गई।

‘अच्छा दादा, अब तुम हमारे नेता बन सकते हो !’

‘नहीं शिखा, नेता बनना आसान नहीं है;—इच्छा होते ही नेता नहीं बना जा सकता ।’

‘तब फिर नेता के लक्षण क्या हैं—उसे कैसे पहिचाना जा सकता है ?’

‘नेता का आदेश अमान्य नहीं किया जा सकता । जिस तरह श्रीकृष्ण की मुरली सुनकर वृज की गोपियाँ घरबार छोड़कर दौड़ जाती थीं, वही नेता के आदेश के सम्बन्ध में है ।’

‘ऐसा नेता कहाँ मिलेगा, दादा ?’

‘इसके लिये चिन्ता की आवश्यकता नहीं है, बहिन ! जिसदिन तुम सब मानव बन जाओगे, उसदिन नेता भी मिल जायेगा । ‘आज जो मनुष्य की नीति को कुचल रहे हैं, जो स्वेच्छाचार में जंगली पशुओं को भी परास्त कर रहे हैं, उनके लिये धरती पर पाशव-शक्ति का आविर्भाव अवश्य होगा । युग-युगान्तरों से जन्म धारण करने पर भी मानव अभी तक पशुधर्म नहीं छोड़ सका । जो उस पशुधर्म पर विजय प्राप्त कर लेगा वही सच्चा नेता बनेगा ।’

‘पशुधर्म को एकदम कैसे छोड़ा जा सकता है, दादा ! मानव भी एक पशु है न ?’

‘नहीं शिखा, उसे प्राणी कह सकते हैं । उससे प्राणीधर्म छोड़ने को नहीं कहा जाता—प्राणी को महान, विशाल बनने को कहा

जाता है। मैं कुछ कठोर नियमों का पालन करता हूँ, उन्हें देखकर तुम मुझे पवित्र मान बैठो; (किन्तु क्या पशुओं में ऐसे नियम नहीं हैं? उदर-पालन का प्रयोजन ही उनकी नीति है—कोई उनसे अधिक नीति पालन कर सके तो वह मानव! 'सत्य अश्वय बोलूँगा,' यह प्रतिज्ञा मानव ही कर सकता है; 'हिंसा नहीं करूँगा,' इस नीति का पालन भी वही कर सकता है। ईश्वर का अस्तित्व हो या न हो किन्तु प्रकृति ने मानव को जो अच्छे-बुरे विचार करने की शक्ति प्रदान की है, जो कल्याणकारी बुद्धि दी है—उसका उपयोग मानव क्यों नहीं करता?)

शिखा बहुत देर तक स्तब्ध होकर बैठी रही। इतने में विनायक ने आकर कहा : 'तुम भाई-बहिन की बातें कभी पूरी नहीं हो सकतीं; उधर खाना ठंडा हो रहा है और पेट में चूहे दौड़ रहे हैं!'

शिखा की आँखों में सहानुभूति चमक उठी : 'ऐसा ! आप को इतनी भूख लगी है ? हमें न बुलाया होता तो भी कोई आपत्ति नहीं थी ! चलो, चलें !'

तपन हँसकर बोला : 'बिना कहे वेदना की बात न समझ सकी ?'

'जाओ दादा !' कहकर शिखा भागने लगी, किन्तु तपन ने उसकी वेणी पकड़ ली और बोला : 'भागती कहाँ है ? मालूम नहीं, भोजन का समय है !'

शिखा का मुँह लज्जा से लाल हो गया। विनायक एकदम गम्भीर हो गया और तपन सब को परोसने लगा।

भोजन समाप्त होने पर शिखा बोली : 'तुम दिल्ली किसलिये जा रहे हो, दादा ? वहाँ कितने दिन रहोगे ?'

'सिर्फ दस दिन। किसलिये जा रहा हूँ—वह न बतलाऊँ तो ?'

'तुम सारी बातें खूब छिपाकर रखते हो, दादा ! हम जान लें इस में तुम्हारा क्या नुकसान है ?'

‘मैं नहीं चाहता कि सब को वह बात मालूम हो। कार्य में सफलता प्राप्त होने के बाद सब के मुँह से प्रशंसा सुनना मैं ठीक समझता हूँ। फिर भी इतना कह देता हूँ कि मिस्टर और मिस चटर्जी के स्नेह का ऋण चुकाने जा रहा हूँ।’

शिखा ने अधिक पूछताछ करना ठीक न समझा; वह उदास होकर बैठी रही। यह देखकर तपन ने उसे अपने पास बुलाया और स्नेह से कहा : ‘मैं न होऊँ, फिर भी जिसके हाथों में तुम्हें सौंपता हूँ वह अयोग्य नहीं है।’

‘लेकिन उसदिन मैं तुम्हारा आशीर्वाद प्राप्त नहीं कर सकूँगी, दादा ! दूसरों के आशीर्वाद से मुझे संतोष नहीं होगा।’

‘आशीर्वाद तो आज भी दे रहा हूँ और आकर भी दूँगा। तेरी कल्याण-कामना ही मेरे जीवन का वत है ! इस विशाल पृथ्वी पर तू, मीरा और विनायक—तीन के सिवा कोई मेरा आत्मीय नहीं है।’

तपन चुप हो गया; असहनीय वेदना से उसका कंठस्वर काँप रहा था। संयमी तपन ने आत्मसंवरण कर लिया; किन्तु शिखा का नारी-हृदय वह वेदना सहन न कर सका, उसकी आँखों से आँसू गिरने लगे। विनायक पहले भी ऐसे शोकातुर दृश्य देख चुका था—और आज भी चुपचाप देखता रहा।

अपने को सँभालकर शिखा बोली : ‘तो क्या तुमने तपती की आशा छोड़ दी है, दादा?’

‘ऐसा ही समझ लो। मैं नहीं जानता कि वह किसी दूसरे को चाहती है या नहीं; लेकिन मुझे कभी स्वीकार नहीं करेगी—यह बात मैंने कई बार और कई तरह से समझ ली है !’

‘लेकिन दादा, जिस हालत में तुम वहाँ रहते हो, जिसने तुम्हें गुप्त वेश में ही देखा है, उस पढ़ी-लिखी युवती के लिये तुम्हें पतिरूप में स्वीकार करना कठिन है—ऐसा नहीं लगता?’

‘सरल है ऐसा मैंने कब कहा, शिखा ! कठिन अवश्य है, और शायद वह दूसरे को न भी चाहती हो।—यह देखने के लिये ही मैं इतने धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा कर रहा हूँ और अपमान सहन करता हूँ। अपने आप को प्रगट कर दूँ तो वह अवश्य मेरा स्वीकार करेगी, लेकिन उस से मुझे यह मालूम नहीं हो सकेगा कि वह किसी दूसरे को चाहती है या नहीं !’

‘मान लो कि वह किसी दूसरे को चाहती है, तो क्या फिर तुम उसे स्वीकार नहीं करोगे ?’

‘कदापि नहीं ! पर पुरुष को चाहनेवाली स्त्री के लिये मेरे जीवन में स्थान नहीं है। शिखा, मैं अपने जीवन में एक नारी को सहधर्मिणी के आसन पर बिठा सकता हूँ, किन्तु ऐसी स्त्री को नहीं !—यदि मुझे सौ जन्म तक अकेला रहना पड़े तो भी नहीं !’

शिखा चुपचाप तपन की ओर देख रही थी। धीरे-धीरे बोली : ‘मि. बोस से तुम्हारा अपमान करा देने पर भी तुम्हें शंका है, दादा ? वह घर छोड़कर यहाँ आ जाओ !’

‘अभी देर है बहिन ! मि. बोस से मेरा अपमान कराने में कोई दूसरा कारण भी हो सकता है। शायद आज तक वह पवित्र होगी, और यही उसका बड़ा भारी प्रमाण हो !’

‘तो अब कौन-सी परीक्षा करोगे ?’

‘मैं कुछ नहीं करूँगा, शिखा ! जो कुछ करना है वही करेगी ! मैं सिर्फ इतना ही जानना चाहता हूँ कि वह किसे चाहती है। यदि न जान सका तो उसके माता-पिता से प्राप्त हुए स्नेह का हो सका उतना ऋण चुकाकर चला जाऊँगा ! इसी लिये दिल्ली जा रहा हूँ।’

कुछ देर तक चुप रहकर बोला : ‘शिखा, इसी देश की नारी ने पति की निन्दा सुनकर हँसते-हँसते मृत्यु स्वीकार कर ली थी; मृत पति के शरीर को लेकर देश-देशान्तर में भटकी थी, कोढ़ी

पति को कन्धे पर रखकर जगह-जगह फिरी थी ! आज वह आधुनिक है। दुर्भाग्य से किसी को निर्बोध-मूर्ख पति मिले, तो क्या उससे स्नेह के स्वर में एक बात भी नहीं कही जा सकती ? क्या उसे मित्रों से अपमान कराके निकाल देना चाहिये ? क्या इसकी अपेक्षा यह कहना उचित नहीं है कि—‘तुम चले जाओ, मैं तुम्हें नहीं चाहती !’ अगर तपती ने मुझ से कहा होता कि वह किसी दूसरे को चाहती है, तो मैं खुशी से उसे उसके प्रियतम को सौंप देता। आज भी मैं इसके लिये तैयार हूँ, शिखा ! किन्तु उसके हृदय की बात जानने का अवसर ही मुझे नहीं मिल पाता। उसके माता-पिता से यह बात कहने पर उन्हें अपार वेदना होगी, इसलिये मैं सब कुछ सहता हूँ। मैंने तो बहुत कष्ट उठाये हैं बहिन, इसलिये आदी हो गया हूँ। वह सुखी रहे !’

तपन चला गया। शिखा अनिमेष दृष्टि से उसके मार्ग की ओर देखती रही।

तपती अवाक् होकर एकटक कार्ड की ओर देख रही थी। वह शिखा के विवाह का आमन्त्रण-पत्र था। तपती और तपन दोनों को एक ही साथ निमंत्रण दिया गया था। उस सामान्य व्यक्ति के साथ अपना नाम जुड़ जाने से वह मन ही मन सुलग रही थी, लेकिन करती क्या? अच्छा था कि उस दिन उसे वहाँ नहीं रहना था; वह अखिल भारतीय संगीत प्रतियोगिता में सम्मिलित होने के लिये दिल्ली जा रही थी।

तपती नीचे आकर मित्रों की प्रतीक्षा करने लगी। थोड़ी देर में मि. बनर्जी, मि. अधिकारी, मि. सन्याल, रेवा, सिकता, शैलजा आदि आ पहुँचे।

रेवा बोली : 'तू शिखा के विवाह में सम्मिलित नहीं होगी? लड़का कैसा है?'

तपती अत्यन्त तिरस्कारपूर्वक बोली : 'मुझे क्या मालूम ! जब वह मुझे छोड़ना चाहती है, तो मैं भी क्यों उससे लिपटी रहूँ ?'

'बात ठीक है, लेकिन लड़का कैसा है—यह जानने की बड़ी इच्छा है !'

'तो जाकर पूछ ले ! नाम तो लिखा है—विनायक बन्धोपाध्याय।' कहकर तपती ने एक दीर्घ निःश्वास छोड़ी। मि. बनर्जी ने

बात की डोर पकड़कर पूछा : 'क्या विलायत हो आया है ? काम क्या करता है ?'

'मालूम नहीं...' कहकर तपती ने मुँह फिरा लिया। उसका दुर्भाग्य आज दूसरे के सौभाग्य की ईर्ष्या कर रहा था। तपती समझती थी कि वह अन्याय था; लेकिन वह अपने मन पर काबू न रख सकी। मन की उस शोचनीय अधोगति ने उसे व्यथित न किया, किन्तु विषाक्त बना दिया। वह ज्वाला यदि तपन के सर्वोप पर ढोल सके, तो उसे शांति प्राप्त हो सकती थी।

मि. अधिकारी ने कहा : 'वह है कौन ?—ब्राह्म, हिन्दू या ख्रिस्ती ?'

'हिन्दू ही होना चाहिये। शिखा अन्य धर्मावलम्बी से विवाह कर सकती है ? वह पक्की हिन्दू है और माँ-बाप तो उससे भी बढ़ जायें ऐसे हैं !' रेवा ने कहा।

उसकी बात सुनकर सब हँस पड़े, सिर्फ तपती न हँसी। वह गम्भीर होकर बोली : 'ठीक ही है—शिखा आर्यनारी है !'

'हम भी तो आर्यनारी हैं—हम क्या सती से कम हैं ?' रेवा ने कहा।

'व्यर्थ की बातें क्यों करती है, रेवा ! तू सतीत्व का अर्थ नहीं समझ सकती !'

तपती का मुँहतोड़ उत्तर सुनकर सब चुप हो गये।

मि. बनर्जी ने कहा : 'हम भी सतीत्व का अर्थ नहीं जानते, आप समझा दें तो आभार होगा !'

'मैं नहीं मालती कि किसी ज़माने में कोई सती होगी !'

'क्यों ? सीता, सावित्री, बेहुला...' रेवा एकदम बोल उठी और तपती के मुँह की ओर देखा।

अट्टहास से वातावरण को भरकर तपती बोली : 'जा, जा, सीता जैसी मूर्ख लड़की धरती पर दूसरी कोई नहीं होगी ! और

सावित्री तो अश्वल दर्जे की पोलिटिसियन और निर्लज्ज ! बेहुला का तो नाम लेने की भी इच्छा नहीं होती, एक फर्स्ट क्लास कॉकेट ! नाज़-नखरों से अपना काम बना लिया !'

सब ज़ोर से हँस पड़े ।

मि. बनर्जी ने पूछा : 'सीता मूर्ख थी, इसका प्रमाण ?'

'सब से पहला तब यही कि—इतना रूप और गुण होने पर भी रावण जैसे एक पशु-स्वभावी मनुष्य को न बना सकी; अशोक-वाटिका में पड़ी-गड़ी मार खाती रही। फिर सुलगती अग्नि में कूदकर परीक्षा दी और अपने आत्मा का अपमान किया। अरे, रानी न बन सकी तो परीक्षा देने किमलिये गई ? तीसरी मूर्खता यह कि दूसरों के कहने से निष्ठुर पति ने वनवास का आदेश दिया और वह एकदम चल दी ! किमलिये ? वह भी प्रजा थी, बिना अपराध के उसने दंड क्यों स्वीकार कर लिया ? क्यों न्याय की माँग न की ? ऐसा किया होता तो पति की शान भी ठिकाने ला सकती थी ! सती होने के लालच में उसने नारीत्व का भयंकर अपमान कराया था। चौथी बार उसने किया पाताल-प्रवेश ! मालूम नहीं उस ज़माने में आत्महत्या का उससे अधिक अच्छा साधन था या नहीं—पोटा-शियम साइनाइड की उस समय शोध नहीं हुई थी; किन्तु उसने आत्महत्या क्यों की ? वह कापुरुष-आइ मोन-कानारीत्व...' सब ज़ोर से हँस पड़े। तपती ने धमकाकर कहा : 'चुप रहो ! इतना क्यों हँसते हो ? उस कानारीत्व का मैं किसी प्रकार समर्थन नहीं कर सकती। सीता में ज़रा भी बुद्धि होती तो उसी रात को घड़ी गई अपनी सुवर्ण-मूर्ति के टुकड़े टुकड़े करके कह देती : 'मैं परीक्षा भी नहीं दूँगी और आत्महत्या भी नहीं करूँगी ! तुमने मेरे साथ विवाह किया है; वन में जाना ही पड़े तो चलो दोनों चलें। तुम्हारी मूर्खता के लिये मैं अकेली दंड क्यों भोगूँ ? तुम क्यों सुवर्ण-मृग पकड़ने गये

थे ? जब मैं रावण की लंका में थी, तब मुझ से आत्महत्या करने को क्यों नहीं कहा ? यहीं आकर अग्नि-परीक्षा क्यों न की ? बिना न्याय के मुझे किसलिये वन में भेज रहे हो ? तुमने एक बुद्धी की बात मानकर वन में जाने की जो मूर्खता की थी, उसी प्रकार सब मूर्ख नहीं हैं ! लेकिन सीता इतनी मूर्ख थी और सतीत्व की इतनी लालची थी कि उसे यह विचार तक न आये !

चर्चा खूब दिलचस्प थी,—ऐसा मानकर मि. अधिकारी ने कहा : 'ठीक है, सावित्री के सम्बन्ध में आपकी क्या धारणा है ?'

'श्री बॉज़ ए ग्रेट पोलिटिसियन—वह जबरदस्त राजनीतिज्ञ थी। मैं नहीं कह सकती कि सावित्री सती थी या नहीं; किन्तु वह सीता की अपेक्षा हजार दर्जे बुद्धिमान थी। यमराज जैसों को भी उसने चकमा दे दिया ! उसने नारीत्व का कुछ सन्मान किया था, इसलिये उसके प्रति मुझे मान है। राजा की पुत्री थी इसलिये सुन्दर तो थी ही। यमराज आये कि उसने राजनीतिक चाल चली। पुरुषों को बनाने में क्या देर ! अन्त में जब उसने सौ पुत्रों की माँग की, तब यमराज ने सोचा कि बेचारी को इस उम्र में इतनी इच्छा का होना स्वाभाविक है; इसलिये वरदान दे दिया। सावित्री ने चतुराई से प्रार्थना में 'सत्यवान द्वारा' इस वाक्य का समावेश कर दिया था, उस और रूपमुग्ध यमराज का ध्यान न गया ! बोलो, कितनी चतुराई से काम बना लिया ? प्रति वर्ष एक पुत्र हो तो भी सौ वर्ष तक जिये ! उसे पुत्रों की इतनी इच्छा थी ऐसा नहीं लगता, लेकिन जिसकी आवश्यकता थी वह प्राप्त कर लिया ऐसी कुशाग्र बुद्धि स्त्री को सती कहा जा सकता हो तो सावित्री वास्तव में सती थी !'

मि. सन्याल बोले : 'अब बेहुला के सम्बन्ध में भी कहो !'

'यह कहने की आवश्यकता नहीं है। जब उसने देखा कि देवता उसके पति को जीवित कर सकते हैं, तब वहाँ जाकर नाच-गान कर

आई और इसप्रकार पति का जीवन बचा लिया ! जिसप्रकार आन-कल स्त्रियों को चन्दा उगाने के लिये भेजते हैं,—यही बात बेहुला के सम्बन्ध में है !'

तपती की प्रत्येक बात हास्यप्रेरक होने पर भी उसकी विचार-शीलता और गम्भीरता सब को प्रभावित कर रही थी। तपती सोचती थी कि भारत की प्रातःस्मरणीय महासतियों के चरित्र की वह जो चर्चा कर रही थी, उसे सुनकर शायद उसके दादाजी मूर्छित हो जाते। किन्तु उसके मन में किसी तीव्र सुरा का नशा था। दादाजी का मृत आत्मा हो तो वह भी सुन ले !

मि. सन्याल ने ज़ोर से हँसकर कहा : 'तो आप के शब्दकोष में 'सती' नाम का कोई शब्द नहीं है, क्यों ?'

'है क्यों नहीं ? 'सत्' शब्द का स्त्रीलिंग सती; किन्तु 'सत्' किसे कहते हैं,—यह जानने के लिये शब्दकोष की आवश्यकता है। दादाजी कहा करते थे कि सत् शाश्वत है, वह कभी परिवर्तित नहीं हो सकता, किन्तु मुझे ऐसा नहीं लगता ! यदि भगवान हो, तो वह भी देश-काल-पात्रानुसार परिवर्तित होता है; यानी वह नहीं है; है मात्र मानव की कल्पना ! और उसका परिवर्तन होता रहता है।'

'भगवान न हो यही अच्छा है; सारी माथापच्ची दूर हो जाये। और हो तो भी वह हमारा क्या करता है ?' कहकर मि. बनर्जी हँसने लगे।

'वह होना ही चाहिये, नहीं तो मानव अपनी हार्दिक श्रद्धांजलि किसे अर्पित करेगा ? मानव का रात-दिन का रोना वह निर्विकार भगवान ही सुन सकता है। वह ताण्डव किसी मानव पर किया जाये तो वह भी निर्विकार पत्थर बन जायेगा !'

तपती की बात सुनकर सब हँस पड़े।

यकायक दादाजी द्वारा डाले गये संस्कारों से परिपुष्ट तपती का हृदय चीत्कार कर उठा : यह सत्य नहीं है; वह मानो स्वयं को धोखा दे रही थी। वह बोल उठी : 'वे निर्विकार भगवान हों तो अच्छा है; उनकी मानव को बड़ी आनन्दयुक्तता है। जो बात अपने से कहने में भी मानव कुण्ठित होता है, वही बात उनसे कहकर हृदय का भार कुछ हलका कर लेता है। जीवन में जब सुख-दुःख आते हैं तब ऐसे अचेतन को चेतन मानकर उससे अपने हृदय की बात कहने में शान्ति का अनुभव होता है। अपनी छुदता को मानव अपनी ही कल्पना द्वारा विशाल मानना चाहता है।'

'तब तो आपने भगवान का अस्तित्व स्वीकार कर लिया ?' मि. बनर्जी ने पूछा।

मानने—न मानने में कुछ बिगड़ नहीं जाता। जरूरत पड़ने पर उसे बुलायेंगे, वरना कोई आवश्यकता नहीं। ऐसी सुविधाजनक वस्तु को न छोड़ना ही अच्छा है ! चलो, अभी सारी तैयारी करना है।'

तपती खड़ी हो गई, दूसरों की भी अनिच्छापूर्वक उठना पड़ा।

दूसरे दिन सवेरे तपती का दल—मि. बनर्जी और मि. सन्याल हावड़ा स्टेशन जा पहुँचे और फर्स्ट क्लास का एक डिब्बा रिज़र्व करा लिया। गाड़ी छूटने ही वाली थी कि तपन एक कुली के सिर पर सूटकेस और बिस्तर के साथ तपती के पास से निकल गया। मि. बनर्जी ने पूछा : 'क्या तपन बाबू भी आ रहे हैं ?'

उधर तपती का ध्यान न था। मि. बनर्जी के कहने पर उसने सिर निकालकर देखा तो तपन जिस डिब्बे में चढ़ रहा था वह थर्ड क्लास का था !

मि. बनर्जी ने पूछा : 'यह क्या ! थर्ड क्लास में मुसाफिरी करेंगे ?'

तपती कुछ न बोली। विस्मय और लज्जा से उसका सिर झुक गया। कुछ देर बाद वह बोली : 'उससे मेरा कोई सम्बन्ध है—

यह बात किसी दूसरे से मत कहना, समझे ? मैं शर्म से गड़ी जा रही हूँ !'

मि. बनर्जी ने कहा : 'मैं इतना बेवकूफ नहीं हूँ, मिस चटर्जी ! लेकिन यह बड़ा चालाक मालूम होता है। आपके पिता से उसने फर्स्ट क्लास का ही किराया लिया होगा, बाकी रुपये जेब में डालेगा ।'

इसके सिवा और क्या कारण हो सकता था ? तपती का पिता अपने दामाद को थर्ड क्लास में कदापि नहीं भेजेगा। करोड़ाधिपति का दामाद तपन थर्ड क्लास में मुसाफिरी करता है—यह सुनकर लोग क्या सोचेंगे ? क्रोध और दुःख से तपती रुआँसी हो गई। उसने वापिस आने पर पिता से सारी बात कहने का निश्चय कर लिया। उससमय तपती ने बात बदलने की चेष्टा की, किन्तु उसके हृदय में एक ज्वालामुखी भड़क उठा था, जिसके धुएँ के साथ निकलती हुई ज्वाला से तपती की आँखें तिलमिला उठीं। उस कंजूस की अर्थलोलुपता तपती के पिता का भी अपमान कर रही थी। श्रीमंतदुलारी, कुलीनता का गर्व रखने वाली तपती का पति थर्ड क्लास में मुसाफिरी करे यह बात उसके लिये असहनीय थी। और वही था उसके पिता की सम्पत्ति का एकमात्र उत्तराधिकारी !

तपती के हार्दिक भावों को समझकर मि बनर्जी ने कहा : 'अब देर करने में क्या लाभ है, मिस चटर्जी ! अपने पिता से कहकर उसे निकलवा दो !'

'हूँ ।'

'आप जैसी सुशिक्षित सन्नारी को प्राप्त करना किसी भी युवक के लिये गर्व की बात है ।'

'हूँ ।'

'पहले तलाक की अर्जी रजिस्टर कराना पड़ेगी ।'

तपती ने इसबार भी 'हूँ' कहा और खिड़की से बाहर भाँकने लगी ।

अखिल भारत संगीत प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार प्राप्त करने के हर्ष के पश्चात् तपती का मन विषाद से भर गया। उसका गीत कौन सुनेगा ? किसके लिये है उसकी यह साधना ? क्या एक मूर्ख के लिये ? उसके अन्तर की विषबाण्ण मानो तपन को सुलगाने का प्रयत्न कर रही थी।

मि. बनर्जी और मि. सन्याल तपती की मनोगति पर निरन्तर ध्यान रखते थे। अपने कार्य में सफलता प्राप्त करने का उनके लिये यही अवसर था। उन्होंने ने तपती के पास आकर कहा : 'चलो, थोड़ा घूम आयें—हुमायूँ का मकबरा देख आयें !'

तपती ने विरोध न किया। उसे भी घूम-फिरकर अपने मानसिक उद्वेग को शान्त करने की इच्छा हो रही थी। टेक्सी लेकर सब घूमने निकल पड़े। गाड़ी पृथ्वीराज रोड पर जा रही थी; दोनों ओर हरी-भरी घास से ढँकी हुई धरती थी—मानो वे भूतकालीन पगडंडी पर होकर पृथ्वीराज के राज्य में जा रहे थे !

यकायक तपती बोली : 'मुझे संयुक्ता का स्मरण हो रहा है। योग्य पति प्राप्त करने के लिये माँ-बाप को छोड़ते हुए भी उसे संकोच न हुआ—अद्भुत स्त्री !'

मि. बनर्जी ने कहा : 'आपकी मानसिक शक्ति कम नहीं है। आप सात-सात महीने से निरन्तर माँ के साथ लड़ रही हैं !'

एक निःश्वास छोड़कर तपती धीरे-धीरे बोली : 'अभी लड़ाई शुरू नहीं हुई, मि. बनर्जी ! यह तो लड़ाई की तैयारी हो रही है। लेकिन मेरा भाग्य कहाँ संयुक्ता जैसा है—कोई पृथ्वीराज अभी तक नहीं आया !'

मि. बनर्जी और सन्याल चौंक पड़े।—तपती के हृदय को वे अभी तक आकर्षित नहीं कर पाये थे ! तो फिर कौन प्राप्त करेगा उसे !—यह जान लेना आवश्यक था।

'आपके पृथ्वीराज कहाँ से आयेंगे—यह बतला सकेंगी, मिस चटर्जी ?'

'नहीं ! जिस दिन आयेंगे उसी दिन कह सकूँगी। आज तो इतना ही जानती हूँ कि जो आज तक आये हैं उन में कोई पृथ्वीराज नहीं है। गोरी बहुत है, लेकिन पृथ्वीराज एक भी नहीं !'

तपती के व्यंग का मि. बनर्जी पर बराबर असर हुआ; फिर भी वे बोले : 'गोरी ने पृथ्वीराज को पराजित कर दिया था—वह भी कम बहादुर नहीं था, मिस चटर्जी !'

'वह तो संयुक्ता का दुर्भाग्य था कि उसका पिता जयचन्द्र था। और सौभाग्य यह कि उसका पति मृत्युञ्जयी था ! गोरी की बहादुरी देश जीतने में समर्थ थी—नारी-हृदय जीतने में नहीं ! क्योंकि नारी छलनामयी होने से वह छल-कपट के प्रति घृणा करती है। वह तो निश्चितता और निर्भयता से अपने को उसी के हवाले कर सकती है जो उससे छल-कपट न करे। नारी भयंकर कपटी होने से वह दूसरे का कपट आसानी से समझ लेती है।'

'क्या आप यह कहना चाहती हैं कि हम आपके साथ छल-कपट करते हैं ?'

'हाँ, यही ! इसका प्रमाण आपका प्रश्न है। कपट न होता तो यह प्रश्न ही आपके मन में उत्पन्न न होता। मैंने तो किसी

जी. ८

बात की चर्चा नहीं की—आप स्वयं ही पकड़े गये !’ कहकर तपती ने मोहक स्मित किया ।

मि. बनर्जी और सन्याल उत्तर न दे सके । मि. सन्याल ने मि. बनर्जी के कान में कहा : ‘आधुनिक मानवशास्त्र के अनुसार स्त्रियाँ जिसे चाहती हैं उसी पर आक्रमण करती हैं; इसलिये चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है ।’

यह बात सुनकर मि. बनर्जी बोले : ‘कपट को कपट द्वारा ही जीता जा सकता है ।’

मधुर हास्य के साथ तपती बोली : ‘विजेता का लक्षण पराजित की इच्छा पूर्ण करना है; कर सकोगे ?’

‘अवश्य ! आपकी क्या इच्छा है ?’ मि. बनर्जी ने तपती पर दृष्टि डाली ।

‘घिलकुल सामान्य ! वहाँ जो आदमी बैठा है उसके बाल पीछे से हूबहू तपन बाबू जैसे मालूम होते हैं; जाकर देखो तो मही कौन है ? मुझे विश्वास है कि वह आपको पहिचान नहीं सकेंगे ।’

‘शायद न भी पहिचान सके...’ कहकर मि. बनर्जी गाड़ी से उतर गये ।

हुमायूँ के मकबरे के पास हरी दूब पर तपन निश्चल भाव से बैठा था । मि. बनर्जी ने निकट जाकर देखा और नमस्कार करके पूछा : ‘आप बंगाली हैं ?’

‘जी हाँ !’ कहकर तपन ने मि. बनर्जी की ओर देखा । बनर्जी से उसका परिचय नहीं था ।

मि. बनर्जी ने पूछा : ‘धूमने आये हैं ? कबतक रहने का विचार है ?’

उत्तर में तपन ने कहा कि उनका काम पूरा हो चुका था । कल वह आगरा जानेवाला था और परसों वृन्दावन के दर्शन करके

कलकत्ता लौट जायेगा। मि. बनर्जी शायद अधिक पूछताछ करते, किन्तु तपन खड़ा हो गया और नमस्कार करके थਾਂड़ी दूर खड़े हुए ताँगे में बैठकर चल दिया। मि. बनर्जी ने लौटकर मारी बात तपती से कही और बोले : 'सुधरे हुए लालों का देखकर वह भड़क उठता है !'

‘हो सकता है ! चलो, हम लोग भी कल आगरा चलें !’

हम क्यों उद्योत पीछे भटकने लिरें ?—इस के उत्तर में तपती ने कहा कि उस पर नजर रखना जरूरी था; हाँ तो माता-पिता को किस तरह समझाया जा सकता है कि उसे घर में रखना ठीक नहीं है ! यह जानना जरूरी है कि आगरा और वृन्दावन में वह क्या करता है। इस बहाने एकबार आगरा शहर और ताजमहल भी देख सकेंगे।

दूसरे दिन तपती का दिल गई फिर भी स्टेशन से फर्स्टक्लास के डिब्बे में बैठा। तपन की बहुत सावधानी करने पर भी वह दिखाई न दिया। तपती बैठी-पैठी सोंचने लगा कि शायद तपन इस गाड़ी में न आया हो, या फिर किसी थर्डक्लास के डिब्बे में बैठा होगा। वह न आया तो उसका सारा परिश्रम व्यर्थ जायेगा ! वह जानना चाहती थी कि इतने दूर आकर वह क्या करता है।

दो पहर को ठीक बारह बजे गाड़ी आगरा आ पहुँची। ‘सेसिल हॉटल’ के आदमों के साथ गाड़ी में जाने समय मि. बनर्जी की नज़र एक ताँगे में बैठे हुए तपन पर पड़ी। शायद वह किसी आठ आने रोजवाली होटल में उतरेगा। इसप्रकार किताबत सारी करके वह तपती के पिता का कितना सम्मान करा रहा था,—यह बात वह ‘इडियट’ नहीं समझना। तपती मानो सुलग उठी।

होटल में आकर स्नान भोजनादि से मिथुन होकर सब ने फतेहपुर सीकरी, आगरा-फोर्ट, एतमादुल्ला आदि देखने की इच्छा व्यक्त की। तपती का मन खूब थक गया था। वह अस्वस्थता का

बहाना करके होटल में ही आराम करती रही। उसने दो-तीन बार आगरा देखा था। सब के जाने पर तपती अपने जीवन की अपरिसीम निरर्थकता का इतिहास देखने लगी। तपन को चाहने की आकांक्षा मन की गलियों में भटकने पर भी उसे प्राप्त न हो सकी। उसके प्रति तपती के हृदय में निरस्कार ही था। तपन का विचार आते ही वह क्रोध से सुलग उठती थी। उसके हाथ से छूटने का क्या कोई उपाय नहीं था? दिनभर विचार करने के बाद थकी हुई तपती को एकबार प्रेम के श्रेष्ठ प्रतीक ममान ताजमहल देखने की इच्छा हो आई और होटल की गाड़ी मँगाकर निकल पड़ी।

आश्चर्य! ताजमहल के अगले भाग में वृत्तपंक्ति के निकट तपन बैठा था। वह मानो ताज की शुभ्र मूर्ति का ध्यान कर रहा था। उसके पृष्ठ भाग को वह अच्छा तरह पहिचानती थी; ग्रीवा के निकट काला तिल और सुन्दर घुंघराले बाल उसने कई बार देखे थे। सामने पहुँचने पर शायद वह उठकर चला जायेगा इस भय से तपती पीछे ही खड़ी रही। शाम हो गई थी; अषाढ़ी पूणिमा की स्निग्ध ज्योत्स्ना में विरही सम्राट की प्रेममूर्ति मानो मूकभाषा में बोल रही थी।

तपन खड़ा होकर ताजमहल की ओर आगे बढ़ा। तपती ने उसका अनुसरण किया। किन्हीं अन्य व्यक्तियों की ओर तपन का ध्यान न था। सम्राट सम्राज्ञी की समाधि पर फूल चढ़ाते हुए तपन गाने लगा :

हे सम्राट कवि ! यह तेरे जीवन की छवि,
नूतन यह मेघदूत; अद्भुत अपूर्व !
मूक जो सन्देश तेरा बहेगा चिरकाल—
भूला नहीं; भूला नहीं मैं प्रिया को क्षणभरा'

तपती आश्चर्यचकित हो गई—यह तपन ? वास्तव में वह तपन ही था ? या फिर वह किसी दूसरे को तपन मान बैठी थी ? नहीं, उसकी भूल नहीं हुई थी। वेषभूषा से प्रगट हो रहा था कि वह तपन ही था।

तपन प्रणाम करके चलने लगा। तपती उसका अनुकरण कर रही थी। ताजमहल का लम्बा आँगन पार करके वह बाहर ताँगा-स्टेण्ड पर आया और ताँगे में बैठ ही रहा था कि तपती आ पहुँची ! बोली : 'मुझे ज़रा भेज दोगे ?'

तपन ठिठककर खड़ा हो गया और बोला : 'अकेली आई हैं ? चलो, कहाँ जाओगी ?'

'सेसिल होटल में !' कहकर तपती ने चौड़नी में चमकता हुआ तपन का चेहरा देखा। अच्छी तरह दिखाई नहीं देता था, फिर भी उसे लगा कि इतना सुन्दर चेहरा उसने कभी नहीं देखा। तपती अगली सीट पर बैठ गई और तपन पीछे।

'इधर आओ !' तपती ने उससे पास आकर बैठने का अनुरोध किया।

'रहने दो, मैं यहीं ठीक हूँ।' कहकर तपन ने ताँगेवाले को चलाने का आदेश दिया।

'क्यों ? मेरे पास नहीं बैठ सकते ?' तपती ने आश्चर्य से कहा।

'माफ़ कीजिये, मैं पराई स्त्रियों के पास नहीं बैठता।' तपन के स्वर में दृढ़ता थी।

'पराई ? मैं पराई हूँ ? एय, ताँगा रोक दो !' तपती ने कठोर स्वर में ताँगेवाले को आदेश दिया।

क्रोध के मारे वह पिर से पैर तक सुलग उठी। एक ही झल्लाँग में गाड़ी से उतर पड़ी और तुनककर बोली : 'मैं भी पराये पुरुषों की गाड़ी में नहीं बैठती !' कहकर उत्तर की अपेक्षा किये

बिना ही वह होटल की गाड़ी में बैठकर चली गई। यकायक यह क्या हो गया ? वह क्यों इमतरह चली गई ?—कुछ समझ में न आने से तपन उलझन में पड़ गया। किसी स्त्री के चेहरे की ओर वह आँखें लगाकर नहीं देवता था। उसे भी उसने नहीं देखा था। एक अकेली गन्नारी ने उससे पहुँचा देने को कहा था, इतना ही उसके लिये बस था। तपन कुछ न समझ सका।

गाड़ी में बैठने पर अनिश्चय उत्तेजना से तपती कुछ क्षणों तक हतबुद्धि की भाँति बैठी रही। वह सोच रही थी : तपन ने उसका घोर अपमान किया था—ऐसा अपमान जैसा दुनिया में किसी पुरुष ने किसी स्त्री का न किया हो। किन्तु शीतल वायु के स्पर्श और तपन की सुन्दर मुद्राकृति के मोदक मंत्र से उसके हृदय में कोमलता आ गई। उस ने सोचा : शायद तपन को इस बात की खबर ही नहीं होगी कि तपती यहाँ आई हँ ! उसे पराई स्त्री मान लेना स्वाभाविक ही था। लेकिन मान मर्दाने से एक ही घर में रहने पर भी उसने मुझे नहीं देखा ? तपन मुँह फेरकर बैठा था, आँखों पर काला चश्मा लगा रखा था, फिर भी मैंने उसे पहिचान लिया; और वह मुझे इना निकट होने पर भी न पहिचान सका ? तपन ने जरूर उसे धोखा दिया है। इस तरह मेरा अपमान करके उसने अपने अपमान का बदला लिया है। लेकिन उसके बर्ताव से तो ऐसा नहीं लगता !

दूसरे ही क्षण उसे विचार आया कि तपन ने उससे 'पराई' कहा, इस में अपमान की क्या बात है ? वह तो उसके पिता का एक नौकर और दरिद्र भिक्षु जैसा ही था। मेरी आत्मीयता स्वीकार करने की शक्ति उस में कहाँ से हो सकती है ? ऐसा साहसभी वह कैसे कर सकता है ? विवाह-बन्धन आज के युग में इतना जटिल नहीं होता कि उससे छूटना कठिन हो ! लेकिन उसने मेरा अपमान क्यों किया ? सचमुच वह मुझे पहिचान नहीं पाया ?—ऐसा भी

हो सकता है। ताँगे से न उतरी होती तो अच्छा था। 'मैं पराई स्त्री के पाप नहीं बैठता।' अच्छा, इसकी परीक्षा भी वह कर लेगी। पराई स्त्री बैठने का आमंत्रण दे और वह न बैठे—इस बढ़ास की जड़ वह जरूर ढूँढ़ निकालेगी।

होटल में आकर तपती ने दूसरे दिन वृन्दावन जाने का निर्णय कर लिया और सवेरा होते ही होटल की दो मोटरें लेकर उसकी मंडली वृन्दावन की ओर रवाना हुई।

वृन्दावन ! जहाँ बंसी की धुन सुनते ही गोपियाँ प्रेम सागर में आत्मविमर्जन करने के लिये यमुना के तट पर दौड़ आती थीं ! कृष्ण की बंसी के स्वर आज भी वहाँ गूँज रहे थे !

सारा दिन श्यामकुंत और राधाकुंत देखने में व्यतीत हो गया। किया गौरवर्ण पुरुष का देखते ही तपती को तपन का भ्रम हो आता था, किन्तु दूसरे ही क्षण वह नष्ट हो जाता। तपन कहीं दिखाई न दिया। क्या वह नहीं आया होगा ? तपती का अपमान करके चला गया ? वह चारों ओर तपन को ढूँढ़ने लगी। मि. बनर्जी और मन्थाल भी उसे खोज रहे थे। उनके मन में एक आशा जागृत हुई थी कि तपन को किसी कुत्सित परिस्थिति में दिखला देने से वह सदैव के लिये तपती के अंतर से हट जायेगा ! अगर वह किसी व्रज की नारी के साथ दिख जाये तो एकदम मिद्ध हो सकता है कि तपन मात्र अर्थलोभी ही नहीं, चरित्रहीन भी था। उसे घर से निकलना देने पर ही वे निश्चित हो सकते थे।

दर्शनीय स्थलों की सैर करके जब उनकी मंडली लौट रही थी, तब एक स्थान पर लोगों की भीड़ दिखाई दी। तपती ने झाँकने को गड़बड़ी रोकने का आदेश दिया। एक बंगाली सज्जन एक पंखी खरीदना चाहते थे। उन्होंने ने बोली लगाई : 'दो रुपये !' तुरन्त दूसरी ओर से आवाज़ आई : 'चार रुपये !' सब ने आश्चर्य से

देखा कि वह तपन था ! उसके कपड़े धूल भरे थे, और शरीर पर भी इतनी धूल चढ़ी थी कि पहिचानना कठिन था। दिनभर धूप में फिरने से उसका चेहरा मुरझा गया था। तपती को लगा कि उसका परिश्रम सफल हो गया। उसे अपने आँचल से तपन का मुरझाया हुआ चेहरा पोंछ देने की इच्छा हो आई। तपन बोला : 'लाओ पंछी !' कहकर उसने चार रुपये में पंछी खरीद लिया। कुछ अधिक उम्र होने पर भी पंछी का रंग सुन्दर था। वह पंख फड़फड़ाकर कर्णभाव से मुक्ति के लिये क्रन्दन कर रहा था। तपती को तपन के हाथ से पंछी ले लेने की इच्छा हो रही थी, किन्तु उसकी मंडली में मि. बनर्जी और मि. सन्याल के मित्रा कोई तपन को नहीं पहिचानता था; वे लोग क्या सोचेंगे ? उम मलिनवेशी दरिद्र व्यक्ति का परिचय वह अपने पति के रूप में नहीं दे सकती थी।

जो सज्जन पंछी खरीदना चाहते थे, वे रुखे स्वर में बोले : 'इस बूढ़े पंछी का आप क्या करेंगे ?'

'यह करूँगा, देखो !' कहकर तपन ने पंछी को मुक्त आकाश में उड़ा दिया और बोला : 'मुक्ति में ही प्रेम का बन्धन अधिक ढग होता है।'

'यह क्या किया महाशय ?' एक साथ कई आवाज़ें आईं।

'मैं उससे प्रेम करता हूँ, इसलिये उसे बन्धनमुक्त कर दिया !' कहकर वह चला गया।

आँसू पोंछने के लिये तपती ने मुँह फेर लिया।

मि. बनर्जी बोले: 'हम सब को देखकर उसने कैसा नाटक किया ?'

तपती की आँखों में आँसू थे; उसने रोपपूर्ण स्वर में कहा : 'चूप रहो ! समय और वातावरण को देखकर बात कहने की योग्यता किसी अभिनेता में ही होती है। यदि वह अभिनेता है तो मैं दावे के साथ कह सकती हूँ कि दुनिया का श्रेष्ठ अभिनेता वह है।'

तपती की बात सुनकर सब स्तब्ध हो गये !

तपती का हृदय स्निग्ध शांत हो गया था; रास्तेभर वह कुछ न बोली; तपन के बरताव पर उसे आश्चर्य हो रहा था। जो व्यक्ति रुपये कमाने के लिये थर्डक्लास में मुसाफिरी करता है, कुली का खर्च बचाने के लिये खुद ही सामान उठाता है, कपड़े भी मैले पहिनता है; वही दो रुपये का पंछी चार में खरीदकर आकाश में उड़ा दे और कहे कि—‘प्रेम करता हूँ इसलिये उसे मुक्त कर दिया!’ इससे महान मानवता का परिचय और क्या हो सकता है? मि. बनर्जी कहते थे कि वह उसका अभिनय ही था; भले ही अभिनय हो, किन्तु आज प्रेम के श्रेष्ठतम तीर्थ वृन्दावन में उसने तपन के मुँह से जो वाणी सुनी थी, वह उसके जीवन को परिपूर्ण कर सकती थी। और अभिनय हो ही कैसे सकता है? उसे कहाँ खबर थी कि हम सब वहाँ उपस्थित हैं! तपती ने एक बार तपन के साथ प्रेमाभिनय करने का निश्चय किया।

दूसरे दिन हावड़ा स्टेशन से अपनी गाड़ी में बैठकर तपती घर पहुँची! माँ ने पूछा : ‘तपन नहीं आया बेटी? वह भी तो आज आनेवाला था!’

‘आते हैं; मैं बिना मिले ही चली आई; वे ताँगे में आ रहे हैं। उनसे मेरे जाने की बात मत कहना माँ, लेकिन यह जरूर पूछना कि वे थर्डक्लास में क्यों मुसाफिरी करते हैं!’

तपती स्नानगृह में चली गई। स्नान करके वह ऐसी जगह आ बैठी जहाँ से तपन की बातचीत अच्छी तरह सुन सके।

कुछ ही देर में तपन आ पहुँचा। 'माँ' कहकर बुलाते ही माँ दौड़कर बाहर आई और तपन का मलिन वेश देखकर उसका हृदय द्रवित हो उठा। वह आत्मसंवरण करके बोली : 'चेहरा कितना उतर गया बेटा, सिर में तो इतनी धूल भरी है कि अनाज भी उग जायेगा !'

मधुर हास्य से कमरा गुँज उठा। तपन की हँसी इतनी मीठी होगी-इस बात की तपती को आज तक खबर नहीं थी। तपन ने कहा : 'दरअसल मेरा सिर खेती के योग्य बन गया है माँ ! उपजाऊ धरती का मूल्य ही सब से अधिक होता है !'

माँ अधिक व्यथित हो गई।

'रहने दे बेटा, तेरी हँसी देखकर मुझे क्रोध आता है। तू थर्डक्लास में किसलिये मुसाफिरी करता है ?'

कुरते के बटन खोलते-खोलते तपन ने उत्तर दिया : 'थर्डक्लास में भी तो आदमी ही जाते हैं, कहीं भेड़-बकरियाँ नहीं जाती !'

माँ हँसकर बोली : 'लेकिन फर्स्टक्लास में भी तो आदमी ही जाते हैं !'

'वे बड़े आदमी; तुम्हारा पुत्र बड़ा आदमी नहीं है, वह तो गरीब है !'

'नहीं बेटा, ऐसा न किया कर। जानता है, माँ को दुःख नहीं दिया जाता ?'

'दुखी किसलिये होती हो माँ ? तुम्हारा बलवान पुत्र चाहे जैसी परिस्थिति को निभा सकता है-यह तो तुम्हारे लिये सुख का कारण होना चाहिये !'

'लेकिन जब हमारी सामर्थ्य है, तो फिर फर्स्टक्लास में ही...'

तपन बीच में ही बोला : 'शक्ति का उचित उपयोग करना मनुष्य को मीखना चाहिये; इसी से उसकी महिमा बढ़ती है !'

कहकर वह स्नानगृह में चला गया। माँ तपती की बातें याद करती बैठी रही। तपती विह्वल दृष्टि से बाहर की ओर देख रही थी। माँ ने उसे स्नेह से बुलाया : 'आ बेटी, कुछ खा ले !'

'आती हूँ !' कहकर वह अपने कमरे की ओर चली गई। तपन की बातचीत का ढँग देखकर तपती मुग्ध हो गई थी। वह सुकुमार युवक मूर्ख ? उन्ने तपती ने परेशान किया था, अपमानित किया था; फिर भी वह नहीं गया ! क्यों नहीं गया ?—यह सोचते ही तपती काँप उठी। क्या वास्तव में वह धन का लोभी था ? तुच्छ धन के लिये ही चुपचाप उसके अत्याचार सहन करता था ? सोचते-सोचते तपती के अन्तर में वेदना जागृत हो उठी। हे भगवन् ! यदि तपती ने कभी तुम्हारी प्रार्थना की हो तो कह दो कि तपती के लिये ही तपन नीरक्षता से अपमान सहन करता था। यही सत्य हो तां ? इस से अधिक वह कुछ नहीं माँगेगी !

माँ ने फिर आवाज़ दी; तपती भोजन करने चली गई। उस समय भी उसकी आँखों में आँसू थे, माँ ने व्याकुल होकर पूछा : 'रो रही थी बेटी ?'

'दादाजी के साथ बहुत तीर्थयात्रा की है, माँ, लेकिन आज वे नहीं हैं...' कहकर तपती सिमक-सिसककर रोने लगी। बी. ए. पास लड़की की वह असाधारण दुर्बलता देखकर माँ को आश्चर्य हुआ; किन्तु साथ ही आनन्द भी हुआ। तपती मानो पहले जैसी होती जा रही थी। आँख के पानी से मनुष्य के मन का मैल धुल जाता है। तपती पुनः सुन्दर हो जाये, तपती का नाम सार्थक हो, माँ के कल्याणकारी आशीर्वाद से तपती का अन्तर स्वच्छ हो गया।

दूसरे दिन प्रातःकाल तपती ने मित्रों को पार्टी देने की तैयार की। वह बी. ए. की परीक्षा में उत्तीर्ण हुई थी; संगीत-प्रतियोगिता में पुरस्कार प्राप्त किया था और सब से अधिक हर्ष की बात तो यह थी कि तपन का यथार्थ परिचय मिल गया था। ऐसे अवसर पर पार्टी न देती तो फिर कब देनी? तपती ने टेलीफोन द्वारा सब को निमंत्रण दे दिया और माँ से बोली: 'उनसे कह देना कि आज सब के साथ बैठकर खाना खायें!'

माँ ने हँसकर कहा: 'तू नहीं कह सकती बेटी, तू तो बड़ी शर्मीली है!'

'नहीं माँ, वे बहाना बटलाकर चले जाते हैं, बहुत बुरे हैं!'

तपती चली गई। माँ से तपन के सम्बन्ध में बातचीत करते हुए उसे लज्जा आती थी। उसने कभी सोचा भी न था कि उसका नारी-हृदय इतना कहकर ही संतोष प्राप्त कर सकता है! शर्म लग रही थी, किन्तु आज उसके हर्ष का पार न था।

निश्चित समय पर सब आ पहुँचे; किन्तु तपन न आया। तपती के पूछने पर माँ ने कहा: 'वह साढ़े पाँच से पहने नहीं आयेगा!'

विवश होकर तपती ने सब को खाने के लिये बैठा दिया। साढ़े पाँच बजे तपन आ पहुँचा और माँ के आग्रह से वह भी सब के साथ बैठ गया। तपती ने अपने हाथ से चॉप-कटलेट, आम-लेट आदि परोसे।

कुछ देर तक निरुपायभाव से भोजन सामग्री की ओर देखकर तपन बोला: 'माँस खाना मुझे बिल्कुल पसंद नहीं; अगर रोटी और मक्खन दे दे तो अच्छा हो!'

माँ ने कहा: 'थोड़ा-सा खा बेटा, आज खाकर देख तो सही! तू बौद्ध या जैन नहीं है जो अहिंसा का पालन करता है!'

तपन हँसकर बोला: 'माँस न खाने से ही अहिंसा का पालन नहीं हो सकता माँ, माँस तो खूराक है, वह खाने से हिंसा भी

नहीं होती, फिर भी मुझे उसकी कोई आवश्यकता प्रतीत नहीं होती !'

मि. बनर्जी तपन पर आक्रमण करने का मौका ढूँढ़ रहे थे। वे बोले : 'चॉप-कटलेट या अंडे खाना, कॉटा-चम्मच से खाना-यह तो आधुनिक सभ्यता का एक अंग है।'

तपन चुप रहा। उत्तर न मिलने से मि. बनर्जी को अपमान लगेगा, यह सोचकर माँ ने कहा : 'इनकी बात का उत्तर दे बेटा !'

हँसकर तपन बोला : 'विलायती लोग हमें असभ्य कहते हैं; इसलिये हम अपने में से असभ्यों को छाँटकर अपनी सभ्यता सिद्ध करना चाहते हैं। देश, पात्र और रुचि के अनुसार वे बदलते रहते हैं !'

यकायक तपती बोल उठी : 'मनुष्य को युग के साथ-साथ परिवर्तित होना ही पड़ता है !'

तपन निर्लज्ज की भाँति बोला : 'इस सम्बन्ध में भी ऐसा ही है। अपने समाज में मैं इस युग में भी उतना ही उपयोगी हूँ, और ग्रामीण लोग उनके अपने समाज में इस बीसवीं सदी में भी उतने ही उपयोगी रहे हैं !'

'लेकिन आप तो हमारे समाज में आ पड़े हैं !' मि. अधिकारी ने व्यंग के स्वर में कहा।

'आपके साथ मेरा परिचय आज ही हुआ; इतने से ही कैसे कहा जा सकता है कि मैं आपके समाज में आ पड़ा हूँ ?' तपन ने भी प्रश्न किया।

'तपती के साथ विवाह करके !' रेखा ने हँसकर उत्तर दिया।

तपन कुछ क्षण तक नीरव रहा, फिर बोला : 'मैं समझता था कि कोई भी पुरुष विवाह करके स्त्री को अपने समाज में ले जाता है; लेकिन यह मालूम नहीं था कि आप लोगों में इस से विपरीत होता है !'

इस तीक्ष्ण व्यंग का तपती पर खूब असर हुआ। 'जेली' लगाई हुई डबल रोटी तपन की ओर बढ़ाकर बोली : 'सभी स्त्रियाँ उस

समाज में न मिल सकें तो ? उसे सहन न कर सकें तो ?

तपन चाय का आखिरी घूंट भरकर खड़े होते हुए बोला : 'तो वह स्त्री नहीं है; सहधर्मिणी नहीं है; वह है मात्र विलास-पाथी ! सभी पतियों में भी उसे सहन करने की शक्ति नहीं हो सकती !'

तपन सब को नमस्कार करके चला गया। आतुर तपती शांत स्निग्ध औदार्य से उसे देखती रही। उसकी दृष्टि में सुदूरवर्ती भूतकाल की उज्ज्वलता समा गई थी।

सब अतिथियों के चले जाने पर भी रेवा, मि. बनर्जी, मि. अधिकारी और मि. सन्याल बंट रहे। तपती को एक क्षण भी बैठने की इच्छा नहीं थी, किन्तु अविवेक के डर से बैठी रही। मि. बनर्जी और दूसरे मित्र जो आज तक तपन को ग्रामाण, मूर्ख, जंगली मानकर मन ही मन प्रसन्न होते थे, उन्हें आज विश्वास हो गया कि वह एक होशियार व्यक्ति था, और उसके प्रश्नों का उत्तर देना उनके लिये कठिन था। वे यह भी समझ गये थे कि तपती उस पर मुग्ध हो गई थी। कर्ण के अन्तिम शस्त्रत्याग की भाँति मि. बनर्जी ने कहा : 'मालूम होता है पाँचाली के छन्दों से बहुत कुछ सीखा जा सकता है !'

मि. अधिकारी बोले : 'प्राचीनता से भी आधुनिकता को वश किया जा सकता है !'

रेवा अभी तक चुपचाप बैठी थी, वह खिलखिलाकर हँस पड़ी और बोली : 'आपने किस को वश होते देखा है ? हमें तो बातचीत की नवीनता से कुछ आश्चर्य अवश्य हुआ था ! विचार करने पर ज्ञात होगा कि तपनबाबू प्राचीन कुसंस्कारों का वह जबरदस्त पथर तपती के सिर पर रखना चाहते हैं ! वे चाहते हैं कि तपती समाज, संस्कार, शिक्षा-सब को तिलांजलि देकर उनके साथ डेढ़ हाथ घूँघट-वाली दुलहिन बनकर रहे !'

मि. सन्याल ने कहा : 'सच है, नहीं तो वे सहधर्मिणी होने की बात क्यों उठाते ? यह सहधर्मिणी का ज़माना नहीं है भाई,

यह तो समानाधिकार का ज़माना है !'

सब लोग जाने लगे । तपती कुछ न बोली; फिर भी रेवा की बात ने उसके अंतर में घमसान मचा दिया था । सब के जाने पर भी वह बैठी बैठी सोचने लगी : मैं समाज और संस्कारों को तो नहीं छोड़ सकती; क्या तपन को लेकर जंगल में वास करूँगी ? यदि वह मेरे समाज में न मिल सका तो मेरे खिर पर भयंकर आपत्ति आ पड़ेगी ! उसने निश्चय किया कि परसों अपनी सहेली नीला के विवाह में वह तपन का साथ ले जायेगी । उसे अपने समाज के योग्य बनाना ही पड़ेगा; इसके सिवा कोई मार्ग नहीं था ।

उस दिन दोपहर का जब तपन भोजन करने आया तब माँ ने कहा : 'आज तपती की एक सहेली का विवाह है, बेटा ! शाम को तुम्हें उसके साथ जाना पड़ेगा !'

तपन बोला : 'यदि न जा सकूँ तो ? आज मुझे बहुत काम है माँ, पहले से कहा होता तो समय निकाल देता !'

'वह काम फिर कर लेना बेटा !' माँ ने स्नेह से कहा ।

'ऐसा नहीं हो सकता माँ, मैं वचन दे दिया है, उसका पालन मुझे करना ही होगा ! मैं एक उपहार ला दूँगा, उसे तुम्हारी पुत्री ले जायेगी । मेरा जाना आवश्यक नहीं है ।'

तपती एक और खड़ी-खड़ी सुन रही थी; तपन की टालमटूल देखकर वह सामने आ गई और बोली : 'जाते हुए डर लगता है-ऐसा क्यों नहीं कहते ? न जाने का क्या कारण ?'

तपन का भोजन पूरा हो गया था । तपती को उत्तर दिये बिना ही वह हाथ मुँह धोने बाहर चला गया । इस अपमान से तपती सुलग उठी । जैसे तैसे आज वह उसे साथ लेकर जाने को तैयार हुई थी और माँ से साथ आने को कहलाया था । स्वयं प्रस्ताव रखने पर भी उसने उत्तर तक न दिया-मानो वह पराई हो ! तपती का प्रश्न ही अयोग्य था, यह बात उसके सुलगते हुए मस्तिष्क में नहीं जमती

थी। तपन के पीछे जाकर उसने आदेश के स्वर में कहा : 'तुम्हें आना ही पड़ेगा !'

हाथ-मुँह धोकर तपन ने शांत स्वर में उत्तर दिया : 'मुझे माफ करो, मैं नहीं आ सकता ।'

उत्तर देकर वह चला गया। तपती क्रोध और अपमान से सुलग उठी।

शाम होने के पहले ही तपन ने मखमली डिब्बी में रखा हुआ एक 'ब्रॉच' लाकर माँ के हाथ में दे दिया और बोला : 'यह ले जाने से मेरे न जाने का असौजन्य नहीं माना जायेगा, माँ ! मूर्ख जो ठहरा, न जाऊँ यही अच्छा है !'

'हाँ, यही अच्छा है !' तपती ने हाँ में हाँ मिलाई और तपन के बदले उसकी दी हुई भेंट लेकर चली गई। आगन्तुक मेहमानों ने जो वस्तुएँ भेंट दी थी, उन में तपन की भेंट विशिष्ट थी—उस में लिखा था :

'आपका जीवन बसंत के पुष्पों की भाँति विकसित, वर्षा के प्रवाह की भाँति परिपूर्ण और शरद के धान्य की भाँति सुन्दर—एवं सार्थक हो !'

तपन का आशीर्वाद पढ़नेवाला व्यक्ति विद्वान था। उसने कहा : 'आशीर्वाद बहुत सुन्दर है ! वर्ष की तीन श्रेष्ठ ऋतुओं के आशीर्वाद थोड़े-से शब्दों में व्यक्त कर दिये हैं !'

तपन के न आने से कुछ लोगों को बुरा लगा, किन्तु आशीर्वाद की सब ने प्रशंसा की। फिर भी एक-दो व्यक्ति कहे बिना न रह सके कि—'पति मूर्ख हैं, इसलिये तपती साथ नहीं लाई; यह आशीर्वाद भी किसी दूसरे से लिखा लाई होगी !'

यह शब्द सुनते ही तपती लज्जा और क्रोध से काँप उठी। एक शब्द भी उसके मुँह से न निकल सका। वह जल्दी से जल्दी उठकर चली आई।

तपती को रातभर नींद नहीं आई। कल सहेली के विवाह में जो अपमान हुआ था उसे वह भूली नहीं थी। तपन क्यों उसके साथ नहीं गया? मान लिया कि वह अंग्रेजी अच्छी तरह नहीं जानता; लेकिन उससे क्या? वह सब कुछ संभाल लेती! मैं माँस नहीं खाता—ऐसा कहकर काँटे-चम्मच के भंभट से भी बच सकता था; फिर न जाने का कारण क्या?

वह उसके साथ कहीं नहीं जाता; बारबार कहने पर भी नहीं; यद्यपि तपती ने स्वयं उससे कभी कहा ही नहीं था। ऐसा कौन-सा महत्वपूर्ण कार्य हो सकता है? अधिक पढ़ा-लिखा भी नहीं था कि दिन-रात काम में डूबा रहे! किसी से मिलने के डर से ही वह इधर-उधर भटकता फिरता होगा। तपती को विश्वास हो गया कि तपन किसी नाटक के पात्र की भाँति रटे हुए वाक्य ही बोल सकता था। भद्रता, अपमान या सम्मान के सम्बन्ध में उसकी कोई निश्चित धारणा नहीं थी। इस घर में उसे अपने उद्देश की पूर्ति के लिये ही रहना पड़ता है। वह समझ गया था कि तपती को प्राप्त करना असम्भव है, इसलिये धन प्राप्त कर लेना ही उसका ध्येय हो गया था। लेकिन कल तो वह आसमादान करने को तैयार
जी. ६

हो गई थी, फिर भी वह क्यों उसके साथ नहीं गया ? तपती की आन्तरिकता का अभाव उसने कहाँ देख लिया ?

प्रातःकाल उठकर तपती ने स्नान किया और बालों को पीठ पर बिखराकर रसोईगृह में आ बैठी। उसके शरीर की मोहक सुगंध कमरे की वायु को मादक बना रही थी। तपन पूजा समाप्त करके नाश्ता करने आया। माँ दोनों को परोसकर बैठी थी। तपती ने इसप्रकार कहा मानो स्वगत बोल रही हो—‘आज शाम को मैं सिनेमा जाऊँगी; मुझे ले जाना पड़ेगा !’ माँ ने हँसकर कहा : ‘सुना बेटा ? आज इसे ले जाना !’ तपन ने मृदुस्वर में कहा : ‘आज रहने दो माँ, आज मुझे अपनी छोटी बहिन के घर जाना है, कहो तो कल ले जाऊँ !’

तपती का शरीर क्रोध से काँपने लगा। उसका असंयत मन विद्रोह कर उठा : ‘रहने दो, कल जाने की ज़रूरत नहीं है ! बहिन के पास ही जाओ; वहीं जाकर रहते तो ठीक था !’

माँ ने डाँटकर कहा : ‘चुप कर तपी ! यह क्या बक रही है ?’

‘तू न बोल माँ, चचेरी बहिन के प्रति प्रेम का अर्थ तू नहीं समझ सकती !’

तपन चाय का कप ओंठों से लगाया ही था कि उसे रखकर खड़ा हो गया। माँ घबराकर बोल उठी : ‘क्यों उठ गया बेटा, नाश्ता कर ले !’

तपन बाहर जाते-जाते इतना ही बोला : ‘अपनी पुत्री से कह देना माँ, मैं सुधरे हुए ज़माने का युवक नहीं हूँ—मेरी बहिन तो बहिन ही है !’ कहकर वह सीढ़ियों से नीचे उतरने लगा। माँ हक्कीबक्की हो गई। तपती तपन के पीछे उतरते-उतरते क्रोध भरे स्वर में बोली : ‘जाओ, चले जाओ, लौटकर मत आना !’

तपन ठिठककर खड़ा हो गया और बोला : ‘मैं चला जाऊँ—यही तुम चाहती हो ?’

‘हाँ, हाँ’ हाँ, आज ही चले जाओ, इसी समय चले जाओ !’

तपन की आँखों में असीम वेदना छलक उठी; वह निस्तब्ध खड़ा रहा। कटाक्ष करके तपती बोली : ‘दो लाख तो ले लिये, अभी और मिलने की आशा है क्या ?’

विस्मित तपन इतना ही बोला : ‘मुझे मालूम नहीं था कि श्याम-सुन्दर चटर्जी की पौत्री सामान्य दो लाख रुपयों पर भी नज़र रखती है !’

क्रोध से बेभान तपती के आभिजात्य पर आघात लगा। वह झुँझलाकर बोली : ‘श्यामसुन्दर की पौत्री यह कभी बरदाश्त नहीं कर सकती कि कोई बदमाश उसके पिता को धोखा देकर दो लाख रुपये ले जाये ! जाने से पहले रुपयों का हिसाब दे जाना, समझे !’

उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना तपती लौट आई। माँ ने सोचा था कि वह दामाद को मनाने गई थी; किन्तु अकेला लौटते देखकर उसने व्यग्र चित्त होकर व्याकुलता से कहा : ‘नहीं आया बेटी, कहाँ चला गया ?’

‘चूँहे में !’ कहकर तपती चली गई। बेचारी माँ उलझन में पड़ गई; वह उनके कलह का कारण न ढूँढ़ सकी। उसने फिर तपती के कमरे में आकर पूछा : ‘क्या कह गया, बिना खाये ही चला गया !’

तपती का क्रोध अभी शांत नहीं हुआ था; तथापि उसने संयत स्वर में उत्तर दिया : ‘अभी आयेंगे, तू किसलिये चिन्ता करती है माँ ?’

‘तुझे बोलना भी नहीं आता, बेटी ! क्रोध में आकर तूने ऐसा क्यों कह दिया ?’

अब तपती क्रोध न दबा सकी; वह बोली : ‘ठीक ही किया है ! इस में अनुचित क्या है ?’

माँ ने उसे दम्पति का कलह मान लिया। उसने सोचा-हमेशा शांत रहनेवाला तपन इसतरह क्रोध में आकर नहीं जा सकता।

फिर भी उसका भय दूर न हुआ।

दोपहर को बारह बजे टेलीफोन की घंटी टनटना उठी। उसुक तपती ने दौड़कर फोन हाथ में लिया। इतने में माँ भी वहाँ आ पहुँची। फोन में कोई पुरुषकंठ कह रहा था: 'तपनबाबू आज घर नहीं आयेंगे, कल आयेंगे।'।

'क्यों ? कहाँ रहनेवाले हैं ?' तपती ने पूछा।

लेकिन सामनेवाले ने फोन रख दिया था।

माँ ने व्याकुल कंठ से पूछा: 'किसका फोन था, तपन का?'

'हाँ, आज नहीं आयेंगे; बहिन के घर रहेंगे।' कहकर वह जाने लगी, किन्तु फिर लौटकर बोली: 'वे नाराज नहीं हुए माँ, कल आ जायेंगे। मुझ से कहते हैं—चिन्ता मत करना!'

माँ निश्चिन्त हुई या नहीं—यह समझ में न आया; किन्तु तपती वहाँ से चली गई और सोचने लगी: भागकर जायेगा कहाँ? जाने के लिये फुटपाथ के सिवा और है ही क्या? पिताजी के दो लाख का हिसाब देते समय नानी मर जायेगी! वह सोचता होगा कि जाने की धमकी से तपती रो पड़ेगी और पैरों में लौट जायेगी! लेकिन तपती के भाग्य में ऐसा नहीं लिखा है! उसे हँसी आ गई। उस के पितामह पुराने विचारों के थे, किन्तु थे असाधारण पण्डित! तपन थोड़े-से वाक्य रटकर सोचता होगा कि वह तपती का हृदय जीत लेगा! लेकिन उसे क्या मालूम कि यह कोई हँसी-खेल नहीं है!

शाम को कपड़े बदलकर तपती मि. बनर्जी और सन्याल के साथ घूमने निकल गई।

दूसरे दिन सवेरे ही तपन लौट आया। उसके चेहरे पर थकावट थी। माँ को कहाँ खबर थी कि तपती ने उससे कितने कहे

शब्द कह थे। उसने प्यार भरे स्वर में कहा : 'तबियत तो ठीक है न बेटा, चेहरा क्यों मुरझाया-सा है ?'

'तबियत तो ठीक ही है माँ, मुझे खाना दो !' कहकर वह जीमने बैठ गया। तपती ने देखा कि तपन वापिस आ गया था और निर्लज्ज की भाँति खाने बैठा था। अद्भुत व्यक्ति था वह ! इतना भयंकर अपमान होने पर भी निर्विकार था ? किसी महत्त्वपूर्ण स्वार्थसाधन के लिये ही वह इतने भयंकर अपमान सह लेता था— यह समझने में तपती को देर न लगी। खैर, देख दूँगी कबतक बेइमानी करता है !

तपती ने दो दिन तक तपन की कोई खबर न लेने का ढोंग किया। वह देखना चाहती थी कि तपन की ओर से कोई आवेदन आता है या नहीं। किन्तु तपन पहले जैसा ही निर्विकार था। घर आता, भोजन करता और चला जाता। तीसरे दिन तपती अधीर हो उठी। अब उसके लिये इसप्रकार रहना कठिन हो गया। तपन ने माँ के साथ बातचीत करना भी बन्द कर दिया था। दो दिन से तपती मौका ढूँढ़ रही थी, किन्तु वह नहीं मिलता। तपन मानो बिलकुल बदल गया था, फिर भी बेशर्म की भाँति घर में रहता था। यदि उसे इतना अधिक इज्जत का खयाल हो तो वह क्यों नहीं चला जाता ? तपती जानती थी कि—कितना भी हलका व्यक्ति क्यों न हो, इतने अपमान के बाद वह चला ही जायेगा। अन्त में तपन के न जाने का कारण तपती ने ढूँढ़ निकाला। उस दिन वह आग से खेल बैठी !

मि. बनर्जी के साथ एक ही सोफे में बैठकर तपती वायलिन बजा रही थी। वह तपन को बतला देना चाहती थी कि वह रहे या न रहे, क्रोध करे या न करे, उसकी तपती को कोई परवाह नहीं है।

ठीक साढ़े पाँच बजे तपन आ पहुँचा। मि. बनर्जी ने कहा : 'मझे में तो हो न ? चोटी क्यों नहीं दिखती !'

'वह तो गुम हो गई, धन्यवाद !' कहकर तपन चुपचाप चलने लगा कि तपती ने वायलिन का गज उससे अढ़ाकर कहा : 'भले आदमी की तरह जवाब भी नहीं दे सकते, उल्लू कहीं के !'

'अरे ! यह क्या कर रही हैं, मि. बनर्जी !' कहकर मि. बनर्जी ने तपती का हाथ पकड़ लिया ।

तपन ने उधर देखा तक नहीं। वह धीरे-धीरे सीढ़ियाँ चढ़ने लगा। उसने सुना—तपती कह रही थी : 'लाते और जूते मारने पर भी वह नहीं जायेगा ! विश्वास न हो तो एकबार अज़माकर देख लो !'

तपन के हृदय में एक साथ लाख बिच्छुओं के डंक की वेदना हुई। धीरे-धीरे वह नीचे उतर आया और तपती पर दृष्टि स्थिर करके शांत स्वर में बोला : 'क्या आप मुझ से मुक्ति ही चाहती हैं ?'

तपती ने मि. बनर्जी के कंधे पर अपना मस्तक रखकर कहा : 'चाहती हूँ, दो न ! देख तो लूँ तुम में कितनी उदारता है !'

'सचमुच चाहती हैं ?' तपन ने फिर पूछा ।

मि. बनर्जी का एक हाथ अपने कोमल हाथ पर फेरते-फेरते तपती बोली : 'हाँ ! हाँ ! हाँ ! चाहती हूँ; मुझे मुक्ति दो ? दे सकोगे !'

'दी ! आज से तुम मुक्त, तुम स्वतंत्र, तुम स्वाधीन !'

तपन ऊपर चला गया। तपती को लगा कि जिस अद्भुत व्यक्ति ने दो रुपये का पंखी चार रुपये में खरीदकर आकाश में उड़ा दिया था, वही उसे लगन-बंधन से मुक्त कर गया ! तपती के साथ अब उसका कोई सम्बन्ध नहीं रहा ! नहीं—नहीं, क्या यह हो सकता है ? तपती के साथ उसने विवाह किया था। इतनी सरलता से मुक्ति देना अशक्य था। यह उसका नाटक है—अभी नीचे जायेगा तब वह पूछ लेगी कि दो लाख रुपये के बाद उसने कितने रुपये हथियाये हैं ! यकायक उसे याद आया कि वह मि. बनर्जी की

गोद में पड़ी थी। कोई देख लेगा—इस भय से वह एकदम बैठ गई और बाघ हाथ में ले लिया।

इतना समय बीतने पर भी वह नीचे क्यों नहीं उतरा ? क्या आज बाहर नहीं जायेगा ? आतुर तपती ऊपर पहुँची और तपन के बन्द दरवाज़े के पास खड़ी रही। उसने आश्चर्य से एक खुली हुई खिड़की से देखा—धूर्त, अर्थलोभी तपन पूजा की वेदी पर सिर रखे फूट-फूटकर रो रहा था ! क्या हो गया उसे ? क्या इसतरह रो-रोकर वह तपती को हराना चाहता था ? थोड़ी ही देर में माँ को खबर पड़ेगी, पिताजी को मालूम होगा और झंझट खड़ा हो जायेगा ! तपती डर गई। इतने अपमानों के बाद भी तपती ने उसे किंचित् चलायमान होते नहीं देखा था, किन्तु आज एक सामान्य कारण से वह क्यों रोने लगा ? हँ ! तपती को मि. बनर्जी की गोद में देखकर उसे ईर्ष्या हुई थी ! ठीक है ! हँसते-हँसते तपती के पेट में बल पड़ गये। मि. बनर्जी ? उसे तो वह ठोकर मारती थी ! तपती नीचे न जाकर अपने कमरे में पहुँची और हँसने लगी—‘अच्छा, तो वह भी ईर्ष्या करने लगा ? आश्चर्य ! उस में भी इतनी समझ है ? क्यों न हो ! वह निर्बोध तो है नहीं ! अपनी स्वार्थसिद्धि के लिये ही अपमान सहन कर रहा था ! क्या वह तपती को स्वेच्छा-पूर्वक मुक्ति देगा ? फिर तो चिन्ता की कोई आवश्यकता ही नहीं ! अच्छा ही हुआ; उसके अन्तर को वह ईर्ष्या से वीध देगी ! देख लेगी वह कितना सहनशील है !’

तपती माँ के पास गई। माँ ने पूछा : ‘तपन अभी तक क्यों नहीं आया, बटी ! तुझे कुछ मालूम है ?’

माँ को खबर नहीं थी कि तपन आ गया था। तपती ने चुपचाप आकर तपन के दरवाज़े को धक्का दिया। जब वहाँ आँख-मुँह पोंछकर बाहर निकला; उस समय तपती वहाँ से चली गई थी। माँ के साथ की बातचीत सुनने के लिये वह एक ओर छिपकर

खड़ी हो गई। तपन का चेहरा देखकर माँ ने पूछा : 'क्या हुआ बेटा ! चेहरा क्यों इतना.....'

'कुछ नहीं हुआ, माँ ! मुझे खाना दो।'

परोसते-परोसते माँ ने पूछा : 'सच सच बतला बेटा, तुझे हुआ क्या है ? चेहरा क्यों मुरझा गया ?'

'किसी ने आघात किया था, लेकिन अब कुछ नहीं है !'

'कैसा आघात, बेटा ! कहाँ लगा ?' माँ ने व्याकुल स्वर में पूछा।

'शारीरिक आघात नहीं, माँ, मानसिक ! शारीरिक आघात तो मैं सहन कर सकता हूँ, किन्तु मानसिक आघात सहन नहीं होते, फिर भी आदत पड़ जायेगी। मेरा अंतर पाषाण तो है नहीं कि...'

वाक्य अधूरा रखकर तपन ने गहरी साँस छोड़ी।

ऐसा क्या हुआ था ? तपती को आश्चर्य हुआ। माँ रुँधे स्वर में बोली : 'क्यों बेटा, लड़की ने कुछ कहा है ?'

'जाने दो, माँ ! ऐसी बातें तुम से नहीं कह सकता। थोड़ी चाय दो !'

माँ को विश्वास हो गया कि अवश्य तपती ने उससे कुछ कहा है; नहीं तो वह कभी इतना विद्वल नहीं होता। अद्भुत है इस लड़के का चरित्र ! तपन के जाने पर माँ ने तपती से पूछा : 'तूने कुछ कहा था बेटा ? मुझे बड़ी चिन्ता हो रही है !'

'चिन्ता न करो माँ, तुम्हारे दम्भी, धूर्त दामाद को धक्के मारने पर भी वे इस घर से नहीं निकलेंगे-डरने की कोई बात नहीं !'

'छोकरी !' माँ ने डाँट बतलाई।

एक सामान्य बात का बतंगड़ बना देने से तपती को तपन पर खूब क्रोध आ गया था। माँ के धमकाने से वह विरक्त स्वर में बोली : 'उन्हें घर से निकल जाने को कह दिया है !'

तपती चली गई। असहाय माँ बी. ए. पास पुत्री की बात सुनकर हतबुद्धि की भाँति बैठी रही।

धा यल पंखिनियों की भाँति व्याकुल होकर शिखा और मीरा ने तपन के मुँह से उसके भाग्य-विपर्यय की कथा सुनी। मीरा उदास नयनों से दादा के मुँह की ओर देखती रही; शिखा की आँखों से आँसू बहने लगे।

‘तब तो तुम्हारा जीवन बिलकुल नष्ट हो गया दादा?’ शिखा बोली।

‘नहीं बहिन, एक प्रकार से अच्छा ही हुआ। आज विधाता से कहने की इच्छा हो उठती है :—

‘ऐसा करके मेरे हृदय में
तीव्र ज्वाला जगाओ !’

उस एक ही पंक्ति में महान वेदना भरी थी। शिखा ने तपन के मुँह पर हाथ रखकर कहा : ‘ऐसा न बोलो दादा, तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ; अपने विधाता को अपने ही पास रखो; हमें उसकी आवश्यकता नहीं है। जो निष्ठुर विधाता ऐसे पवित्र जीवन को नष्टभष्ट करता है.....’ शिखा आगे न बोल सकी, वह रो पड़ी।

मीरा बोली : ‘शांत हो शिखा, मानव का रुदन भगवान नहीं सुनते; अपना कार्य तो वे करेंगे ही !’

कुछ दूर बैठा-बैठा विनायक यह बातचीत सुन रहा था; वह निकट आकर बोला : 'कब जा रहे हो ? इक्कीस को ही जाना है ?'

'हाँ, भैया ! जबतक मैं लौटकर न आऊँ तबतक तुम्हारा कार्य अच्छी तरह चलता रहे !'

मीरा ने पूछा : 'वहाँ कगतक रहोगे, दादा ?'

'अभी कुछ नहीं कह सकता, बहिन ! अब मेरा मार्ग निष्कण्टक हो गया है; कोई बंधन नहीं रहा ! उसने स्वेच्छा से मुक्ति माँग ली। तुम सब भी सानन्द हो; इसलिये जबतक जी जाहे रह सकता हूँ; तुम्हें खबर देता रहूँगा।'

मीरा कुछ न बोली, शिखा ने रुंधे हुए स्वर में पूछा : 'तो क्या परदेश में ही रहोगे, दादा ?'

नहीं बहिन ! अपनी जन्मभूमि छोड़कर कहाँ जाऊँगा ? मुझे एकनिष्ठ पत्नी की आकांक्षा थी—कदाचित् मैं स्वयं ही एकनिष्ठ न हो सका, इसलिये प्राप्त नहीं हुई। अब योग्य बनना पड़ेगा !'

'क्या तुम अब भी तरती को चाहते हो, दादा ?'

'चाहता हूँ; स्वयं को धोखा देने से क्या लाभ ? चाहता हूँ इसीलिये तो उसे इतनी सरलता से मुक्ति दे दी। उसके लिये भार-रूप होकर रहने की इच्छा नहीं होती; अपने हृदय-सिंहासन पर उसकी स्मृति को बिठा रखूँगा, शिखा ! अपने अश्रुजल से प्रतिदिन उस आसन को धोऊँगा.....'

'उसे पुनः तुम्हें प्राप्त करने की आकांक्षा जागृत हुई तो ?' मीरा ने प्रश्न किया।

'ऐसा कदापि नहीं हो सकता, बहिन ! मेरा सत्य सदा अविचल है, वह चलित नहीं होगा। लेकिन तुम लोग इस तरह बैठे रहोगे तो कैसे चलेगा ? चलो, आवश्यक कागज़-पत्र ठीक कर लें। विना-यक, तुम अपना कारखाना चलाओ भाई, मैं अब अपने कार्य में मन लगाऊँगा !'

विनायक सिर झुकाए खड़ा रहा।

‘तुम कौन-सा कार्य करोगे, दादा?’ शिखा ने पूछा।

‘मनुष्य गढ़ने का बहिन! तुम्हारी सहायता की भी आवश्यकता होगी। मानवता का साधारण सूत्र पृथ्वी से उठा जा रहा है; मैं सिर्फ बतला देना चाहता हूँ कि मानव और पशु में कितना अन्तर है! पशुता और मानवता के बीच जो सूक्ष्म अन्तर है, उसे स्पष्ट करना ही मेरा कार्य है!’

‘तुम्हारी ‘ज्योतिर्गमय’ पुस्तक का हिन्दी में अनुवाद हुआ और उस पर पुरस्कार भी मिला, किन्तु बंगाल में तो कोई उसे समझा ही नहीं! इस देश के मानवों को तुम कैसे गढ़ सकोगे, दादा?’

‘विदेश से गढ़ने का प्रारम्भ करूँगा! किसी भी विषय को अश्रद्धापूर्वक देखना बंगालियों का स्वभाव हो गया है, वह स्वभाव सरलता से नहीं बदला जा सकता। अच्छा, अब चलो!’

तपन सब के साथ आगे बढ़ा। विनायक ने मृदु स्वर में कहा : ‘मैं साथ आता हूँ तपु! इतनी दूर अकेला कैसे जायेगा?’

‘अकेला ही जाऊँगा, भैया! जिसे साथी बनाना चाहता था वही जब चला गया तब... !’

शिखा फिर रो पड़ी। उसका नारी-हृदय तपन की वेदना में भरी हुई गम्भीरता को नहीं समझ सकता था। वह अनुभव कर रही थी कि-शांत पवित्र तपन बारम्बार किसी असह्य वेदना से व्याकुल हो जाता है। अत्यन्त करुण स्वर में शिखा ने कहा :

‘तुम तो आजन्म ब्रह्मचारी हो दादा, हमारे भगिनीस्नेह से नहीं चला सकते?’

‘अवश्य चला सकता हूँ, बहिन! कुछ न होता तो भी मुझे आपत्ति नहीं थी। काल किसी की प्रतीक्षा नहीं करता!’

‘लेकिन तुम्हें बड़ा आघात लगा है, दादा !’

‘अपने लिये नहीं बहिन, उसके लिये ! वह कैसे इतना बड़ा जीवन व्यतीत करेगी ?’

‘वह पुनर्लग्न कर लेगी !’

‘हर्ष की बात है, शिखा ! वह विवाह करके सुखी हो, मैं हार्दिक आशीर्वाद देता हूँ।’

‘लेकिन तुम अपना यथार्थ स्वरूप प्रगट कर दो, दादा ! वह जान ले कि उसने अमूल्य रत्न खो दिया है !’

‘छिः बहिन ! मैं उससे बदला लूँगा ? वह मेरी है—यह बात भले ही कोई दूसरा न जाने, किन्तु मैं जानता हूँ !’

‘तो फिर तुमने उसे मुक्ति क्यों दे दी, दादा ? तुम्हें वह क्यों न पहिचान सकी ?’

‘उसकी शिक्षा ने उसे विकृत बना दिया है, शिखा ! मैं उसे मुक्त न करूँ, तो वह मुझे कभी नहीं पहिचान सकेगी । बहुत दिनों तक प्रतीक्षा की; किन्तु उसके मात-पिता ने जिसप्रकार उसे गढ़ा है, उसी प्रकार वह चलेगी । फिर भी यदि वह मेरी होगी तो एक दिन मैं अवश्य उसे प्राप्त कर लूँगा ! इस के लिये एक जन्म तक नहीं जन्म-जन्मान्तरों तक प्रतीक्षा कर सकता हूँ !’

‘तो तुम अपना यथार्थ परिचय नहीं दोगे ?’

‘नहीं, ऐसा करने से वह तुरन्त मेरे लिये झूरने लगेगी । वह झूरना मेरी नहीं, किन्तु मेरी मर्यादा की होगी ! इस तरह मैं उसे प्राप्त नहीं करना चाहता । वह मानती है कि मैं दरिद्र, मूर्ख, धूर्त, और अर्थलोभी हूँ ! यह मान्यता बदलने का उसने प्रयत्न तक नहीं किया; क्योंकि वह हृदय से मेरा त्याग करना चाहती है !’

‘अगर उसने विवाह न किया तो ? श्यामसुन्दर चटर्जी की पौत्री का पुनर्विवाह आसानी से नहीं हो सकता !’

‘इस के लिये मैं क्या करूँ शिखा ? और होगा क्यों नहीं ?
उसके पिता अपनी इकलौती पुत्री के लिये सर्वस्व अर्पण करने को
तैयार हो जायेंगे । फिर भी वह विवाह न करे यह अलग बात है !’

‘तो फिर तुम क्या करोगे ?’

‘मैं क्या करूँगा ? मेरे साथ उसका इस जन्म का सम्बन्ध पूरा हो
चुका है । मैं अन्तःकरणपूर्वक कहता हूँ कि मैंने कष्टपूर्वक मुक्ति देने
की चाल नहीं चली है । समय आने पर मैं रजिस्ट्री कर सकता हूँ !’

सब आफिस में पहुँचे ।

पुत्रतुल्य दामाद को पुत्री ने घर से निकल जाने का आदेश दिया है—यह सुनकर माँ भयभीत हो गई। उसे तपती पर खूब क्रोध आ रहा था। किन्तु तपन गया नहीं ! आश्चर्य ! वह भयंकर अपमान भी उसने सह लिया ! चला जाता तो तपती को शांति मिल जाती। परदेश में हो तो लोगों से कहा जा सकता है कि घर नहीं है; लेकिन घर में रहने पर भी किसी से न मिले, तो लोगों से क्या कहा जाये ? वे कैसे मान सकते हैं कि उस में मिलने की योग्यता नहीं है ?

तपती ने निश्चय कर लिया कि अब वह उसका अपमान नहीं करेगी। जो उसके जी में आये करे ! यह सोचकर मन को मना लेगी कि उसके भाग्य में पति का सुख नहीं है। किन्तु तपन के साथ एक ही घर में रहना उसके लिये अशक्य था।

तीन-चार दिन में एक बार भी वह उधर न गई। तपन नियमित आता, भोजनादि करता और चला जाता था—इतनी खबर वह रखती थी। वह निर्लज्ज व्यक्ति मुक्ति के बहाने उसे धमकी देने आया था—‘तुम मुक्त, स्वाधीन, स्वतंत्र !’ क्या लज्जा नाम का कोई शब्द ही उसके शब्दकोष में नहीं था ? तो फिर उस दिन इतना रोया किसलिये ? तपती कारण न ढूँढ़ सकी।

पाँचवें दिन सवेरे उसने माँ से कहा : 'माँ, मैं इस वर्ष एम. ए. की परीक्षा देना चाहती हूँ; आज से कॉलेज जाऊँगी !'

तपन खा रहा था। माँ ने उससे पूछा : 'तेरी क्या राय है बेटा ?'

तपन ने उत्तर दिया : 'मेरी राय का क्या मूल्य, माँ ? अपनी इच्छानुसार कर सकती हैं। बिना पैसे के मैं पढ़ न सका, इसलिये कोई पैसा होने पर भी न पढ़े—यह देखकर मुझे दुःख होता है !'

'तब तो इसे पढ़ने दे, बेटा !' माँ ने कहा।

तपती सोचने लगी : मेरे पढ़ने की बात सुनकर वह खुश ही हुआ है ! उसे पढ़ना पसन्द है। उसने माँ से कहा : 'मुझे कुछ किताबें खरीदना हैं, माँ ! मैं अकेली नहीं जाऊँगी !'

'कोई बात कहीं बेटा, तपन साथ आयेगा। जा बेटा, साथ चला जा ! गाड़ी निकाल ले !'

'अच्छी बात है माँ, जाता हूँ !' कहकर वह खड़ा हो गया और गेरेज से गाड़ी निकालकर तपती को प्रतीक्षा करने लगा। तपती सजधजकर नीचे उतरी और तपन के बगल में ही बैठ गई। तपन इसतरह चुपचाप गाड़ी चला रहा था मानो उसके मुँह में जीभ ही न हो ! वह सिर झुकाए बैठा था। तपती अनिमेष दृष्टि से उसके काले रेशमी बालों की ओर देखती रही, किन्तु तपन ने मुँह न फेरा। किताबों की दूकान के पास पहुँचते ही गाड़ी खड़ी हो गई। तपती नीचे उतरकर दूकान में चली गई; तपन गाड़ी में बैठा रहा। तपती पुस्तकें खरीदकर वापिस लौटी और गाड़ी में बैठते ही बोली : 'बाज़ार में थोड़ा काम था।'

वे शब्द मानो हवा से कहे गये थे, फिर भी तपन ने गाड़ी बाज़ार में जाकर खड़ी कर दी। नीचे उतरकर तपती ने मुड़कर देखा। उसकी इच्छा थी कि तपन भी साथ आये, किन्तु बुलाने में शर्म आती थी। इतना सब करने पर भी उसे कैसे बुलाया जाये ? दूकान में जाकर तपन को बुलाने के लिये उसने एक नौकर को भेजा।

तपन पास आकर खड़ा हो गया। तपती ने साहस करके दूकानदार से कहा : 'इन्हें बताओ, कौन-सा सेन्ट अच्छा है !'

तपन ने धीमे और शांत स्वर में कहा : 'इस विषय का मुझे कोई अनुभव नहीं है !'

तपती सोचने लगी : उसने किस आदमी से सेन्ट पसन्द करने को कहा ?—यह तो उसी की मूर्खता थी ! एक 'हिना' लेकर वह फूलों की दूकान पर आई। तपन भी उसके पीछे आ खड़ा हुआ। दूकानदार तपती को पहिचानता था। वह बोला : 'आइये, आइये ! कौन-से फूल दूँ ? जूही के ?'

'अच्छे हैं न ? बासी तो नहीं होंगे ?'

'आप को बासी फूल दूँगा ! उस दिन की माला बासी थी ?'

तपती लज्जित हो गई। तपन समझ गया कि कुछ ही दिनों पहले उसने वहाँ से माला खरीदी थी। अधिक चर्चा न करके उसने माला खरीद की और तिरछी निगाहों से तपन की ओर देखा। तपन निर्विकार खड़ा था; उसके मुँह की एक रेखा भी नहीं बदली थी। तपन के हाथ में माला देकर तपती गाड़ी की ओर चल दी। कागज़ में बँधी हुई माला अपने और तपती के बीच रखकर तपन ने गाड़ी चलाई। वह एकचित्त होकर गाड़ी चला रहा था। तपती को आश्चर्य हुआ ! इतनी देर से वह तपन के पास बैठी थी, किन्तु उसने एकबार उसकी ओर देखा भी नहीं ! इस महा उदासीनता का मतलब क्या ? या फिर उसका स्वभाव ही ऐसा था ? जो भी व्यक्ति तपती को एकबार देख लेता, उसे बारबार देखने की इच्छा होती थी; किन्तु तपन को उस ओर देखने की ज़रा भी इच्छा नहीं थी ! उस दिन का क्रोध क्या आज तक शांत नहीं हुआ ?

गाड़ी बँगले पर आ पहुँची। तपती को उतरते ही तपन ने दरबान से कहा : 'मैं एक बजे आऊँगा, माँ से कह देना !' और वह पैदल ही बाहर निकल गया। तपती ने हाथ में माला लेकर

सज्जद रहना ठान लिया। उसकी समझ में न आया कि वह क्या करे ? यह सच था कि माला उसने तपन के लिये नहीं ली थी, किन्तु गाढ़ी में बैठते समय उसे देकर वापिस लेने की इच्छा हो गई थी। बहुत कुछ सोचने पर भी वह साहस न कर सकी। अब वह उपकार क्या करेगी ? थोड़ी देर में उसे कॉलेज जाना था।

शाम को देखा जायेगा—ऐसा सोचकर तपती ने भोजन किया और कॉलेज चली गई। अपनी दी हुई माला वह कैसे स्वीकार कर सकता है ! —ऐसा सोचकर तपती ने मन को समझाने की चेष्टा की, किन्तु समझा न सकी। तपन अशिक्षित नहीं था—दूसरों की अपेक्षा अधिक शिक्षित था।

अन्तिम कुछ महीनों की घटनाओं पर विचार करने से तपती भयभीत हो गई। उसने तपन का कितना भयंकर अपमान किया था ! अगर वह गुस्सा हो जाता तो उस में किंचित् भी अन्याय नहीं था; किन्तु गुस्सा हुआ था या नहीं—उसका प्रमाण क्या ?

शाम को माँ के पास आकर तपती ने कहा : 'माँ, आज मैं खाना बनाऊँगी !' बहुत दिनों के बाद पुत्री के मुँह से यह शब्द सुनकर माँ को हर्ष हुआ। उसने सोचा कि—वह तपन को खिलाने के लिये ही रसोई-घर में आई थी। माँ ने उसे निरामिष चाँप-कटलेट की सामग्री तैयार कर दी। तपन के लिये खाना बनाने में तपती को शर्म लगती थी; उसने माँ से कहा : 'थोड़ा सामिष भोजन भी बनाना पड़ेगा माँ, मि. बोस को आमंत्रण दिया है !'

माँ उदास हो गई। तपती आज भी तपन के लिये खाना नहीं बनाती ? लेकिन वह कहती क्या ! तपती ने रसोई बनाना प्रारम्भ किया और चुपचाप फोन करके मि. बोस को चाय का निमंत्रण दे दिया।

मि. बोस के आने से पहले ही तपन आ पहुँचा। माँ ने कहा : 'बोस साहब तो नहीं आये बेटी, तपन को परोस दे !'

‘आते ही होंगे, थोड़ी देर बैठने को कह दे !’ तपती ने कहा । तपन कुछ न बोला, चुपचाप बैठा रहा । मि. बोस के आते ही सुसज्जिता तपती सड़े की माला बाँट हाथ में लेकर बाहर आई और नमस्कार किया । मि. बोस ने भी नमस्कार का प्रत्युत्तर दिया, और हँसते हुए बोले : ‘बहुत सुन्दर ! आज आप अद्भुत दिखाई देती हैं !’

‘बैठिये; बैठिये ! यह बाहियात बातें जाने दीजिये ।’ तपती ने कृत्रिम उलहना देकर दोनों के आगे भोजन की थालियाँ रख दीं । माँ चली गई । जब तपती स्वयं परोस रही थी, तो फिर उसके रहने की क्या जरूरत ? तपती देख रही थी कि तपन का ध्यान खाने की ओर नहीं था । मि. बोस तरह-तरह की बातें कर रहे थे । यकायक मानो उनकी भिन्नक दूर हो गई और वे बोल उठे :

‘ओह, नमस्कार ! उस दिन आपके प्रति जो दुर्व्यवहार किया था उसके लिये मैं लज्जित हूँ, मुझे क्षमा कीजिये !’

आश्चर्यचकित होकर तपन बोला : ‘क्षमायाचना का कारण समझ में नहीं आया !’

‘उस दिन अनजाने ही आपका अपमान कर बैठा था !’

‘अच्छा, वह ‘इडियट’ ? इस में क्या हो गया ! मुझे बिलकुल झुरा नहीं लगा ! नमस्कार !’

तपन खड़ा हो गया । तपती सोचने लगी : ‘तपन को मि. बोस के साथ बैठाने में उसने भूल की थी । उसे याद ही नहीं आया कि मि. बोस ने एक दिन उसका अपमान किया था ! उन्हें बुलाकर उसने अच्छा नहीं किया । तपन भूखा चला गया था ।

माँ ने आकर देखा तो तपन नहीं था । उसने तपती से पूछा : ‘चला गया बेटी, कुछ नहीं खाया ? यह सब उसे नहीं रुचता; उसे रोटी-मक्खन क्यों नहीं दिया ?’

तपती कुछ उत्तर दे उस से पहले ही मि. बोस ने कहा :
खाना सिखलाओ, मौसी ! लड़की को कहाँ पटक दिया !'

क्रोध से माँ का सर्वांग काँप उठा; फिर भी कड़वा घूँट पीकर
रह गई। तपती बोली : 'जाने दीजिये, आपको चिन्ता करने की
कोई आवश्यकता नहीं !'

तपती स्वयं तो सोचती ही थी कि उसे कहाँ पटक दिया गया
है; किन्तु दूसरों के मुँह से वह बात नहीं सुनना चाहती थी !
मि. बोस बात को समेट लेने के लिये बोले : 'मैंने दुर्भावनावश
नहीं कहा था—आहार-विहार, आचार-व्यवहार नहीं सीखेंगे तो
समाज में कैसे रहेंगे ?'

मि. बोस मेहमान थे, इसलिये तपती कुछ न बोली; किन्तु
आज उसे लग रहा था कि वह किसी के मुँह से तपन की निन्दा
नहीं सुन सकती !

तबियत ठीक न होने का बहाना करके उस दिन वह मि.
बोस के साथ घूमने नहीं गई।

तपन के हृदय की रचना ही ऐसी थी कि वह कभी किसी को आघात नहीं पहुँचाता था—आघात का प्रतिघात तक नहीं करता था। वह चाहता तो मानसिक आघातों से तपती को चूर्ण कर देता, किन्तु किसी को आघात करके या बलपूर्वक प्रेम प्राप्त करना उसके स्वभाव में नहीं था। वह पूर्ण मानवता द्वारा ही अपना विकास करना चाहता था—यही थी उसकी साधना ! उसके विषय-विरक्त मन में मात्र एक जीवन-साथी की आकांक्षा थी जिसके साथ वह जीवन की पगडंडी पर आगे बढ़ सके। लेकिन उसका भाग्य ही विपरीत था। उसने अनेक दुःख प्राप्त किये थे, किन्तु साथ ही उन्हें सहन करने की शक्ति भी।

तपन के हृदय ने जनकल्याण के विशाल आकाश में पंख फड़फड़ाये। मुक्ति में उसने बंधन का आभास ढूँढ़ लिया। सवेरे भोजन करते समय उसने कहा : 'मैं श्रावण कृष्ण पंचमी के दिन मद्रास तरफ जा रहा हूँ, माँ ! कन्याकुमारी भी जाऊँगा !'

'मद्रास ? इतनी दूर किसलिये जायेगा, बेटा ?' माँ ने उदास होकर प्रश्न किया।

तपन हँसकर बोला : 'दूर कहाँ है, माँ ?—फिर कुछ हककर कविता की दो पंक्तियाँ बोला। जिनका भावार्थ था: हे सात करोड़ सन्तान की स्नेहमयी जननी ! तूने हमें बँगाली ही रखा—मनुष्य

नहीं बनाया !'

तपती बैठी-बैठी चाय पी रही थी। तपन की बात सुनकर वह सिहर उठी।

‘कितने दिन लगेंगे, बेटा ?’ माँ ने पूछा।

‘कुछ समय तो लगेगा, माँ ! काम पूरा करके ही आ सकूँगा !’

इतना कहकर उसने चाय पूरी की और उठकर बाहर चला गया।

तपती तिनककर बोली : ‘यह मूर्ख आदमी मद्रास जाकर क्या करेगा, माँ ? कोई आफिस का काम है ?’

‘मुझे क्या मालूम बेटो, तू पूछ लेना ! आज तक तूने इतना भी नहीं जान पाया कि वह मूर्ख नहीं है ? तेरे पिताजी उसकी खूब प्रशंसा करते हैं !’

तपती कुछ न बोली। अधिक न बोलना ही ठीक था। वह अन्धड़ी तरह जानती थी कि तपन मूर्ख नहीं था, और यह भी जानती थी कि मद्रास जाने के बहाने वह कुछ अधिक रुपये हाथ कर लेगा। भले ही ले जाये, पिताजी के पास बहुत सम्पत्ति है। एक दिन तो वही मालिक बनेगा न ! शायद सचमुच कोई काम हो ! कुछ देर तक विचार करके तपती ने कहा : ‘माँ, आज उन से कह देना कि मुझे घूमने ले जायें ! मेरे कहने पर भी वे बहाना करके चले जाते हैं !’

माँ हँसकर बोली : ‘अन्धड़ी बात है, कह दूँगी। लेकिन तू उसे क्यों जाने देती है ?’

उत्तर दिये बिना तपती अपने कमरे में चली गई। आज शाम को उसे तपन के साथ घूमने जाना था। उस समय वह जान लेना चाहती थी कि तपन के हृदय में उसका स्थान कहाँ था। शाम को जब वह घर आया, उससमय तपती एक गहरे लाल रंग की साड़ी पहिनकर उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। तपन के आते ही माँ ने

कहा : 'आज तपी को घूमने ले जा बेटा, तू उसके कहने से नहीं जाता, इसलिये वह मुझ से कहला रही है !'

'अच्छा माँ, जाता हूँ। मुझे दिनभर काम रहता है; दो-चार दिन पहले कहें तो समय निकाल लूँ !'

तपन गाड़ी में जा बैठा। तपती भी उसी के पास जाकर बैठ गई। तपन ने गाड़ी चलाई। वह चुपचाप रास्ते पर दृष्टि लगाये गाड़ी चला रहा था। मानो उसे खबर ही नहीं थी कि—पार्श्व में एक सुसज्जिता युवती उसकी अपेक्षा कर रही है ! तपती के मन में उथल-पुथल मच रही थी। उसे सूझ नहीं पड़ती थी कि वह क्या बोले और कैसे शुरूआत करे ! जिसे उसने अपमान करके आघात पहुँचाया था उसके साथ इसप्रकार घूमने जाना भी निर्बज्जता थी ! तपन ने आने से इन्कार नहीं किया था, फिर भी वह बोलता क्यों नहीं ? बाईं ओर एक रास्ता जाता था। तपती ने दोनों हाथ बीच में डालकर स्टियरिंग घुमाकर कहा : 'इधर ले चलो !'

बड़ी सावधानीपूर्वक स्टियरिंग सँभालकर तपन ने गाड़ी को मोड़ दिया। थोड़ी दूर चलते ही कॉलेज की कुछ युवतियों पर तपती की नज़र पड़ी। वह बोली : 'यहीं उतर जायें !'

तपन ने गाड़ी रोक दी। नीचे उतरकर तपती ने सोचा कि तपन भी उतरेगा; किन्तु वह सिर झुकाए गाड़ी में बैठा रहा। उसे बुलाने में तपती को शर्म मालूम हुई। कुछ दूर जाकर वह लौट आई और बोली : 'अकेली ही जाऊँ ?'

तपन चुपचाप उतरकर उसके पीछे चलने लगा। तपती किसी भी प्रकार बात करने के लिये बोली : 'वे जो उड़े जा रहे हैं, वे तोते हैं ?'

'हाँ।' कहकर तपन चुप रहा। वह निष्ठुर उदासीनता तपती को असह्य मालूम होती थी। तपन को उसने बात करने का अधि-

कार दे दिया था, फिर भी यह नीरवता क्यों ? तपती ने फिर कहा : 'वह नौका कहाँ जा रही है ?'

'यह मैं नहीं जानता !'

क्या वह आवश्यकता से अधिक एक शब्द भी नहीं बोलेगा ? नौका कहाँ और किस भाड़ में जा रही है—यह किसे जानना था ! क्या वह इतना भी नहीं समझ सकता ?

'मानव का जीवनपथ भी ऐसा ही है—कोई नहीं जानता कि उसे कहाँ जाना है...!' तपती ने फिर हँसकर कहा ।

तपन ने कोई उत्तर न दिया; वह चुपचाप चल रहा था । तपती अधीर हो उठी । जो बात ही नहीं करता, उसके साथ घूमना कैसा ! किन्तु शायद अभी वह क्रोध में है । अपमान भी कम नहीं हुआ था ! बात बदलने के लिये तपती ने सीधा प्रश्न किया : 'मद्रास कब तक रहना है ?'

'यह निश्चित नहीं कह सकता, फिर भी कम से कम दो महीने तो जरूर लग जायेंगे ।'

'दो महीने ! इतने दिनों तक वहाँ क्या करोगे ?' तपती को पूछने की इच्छा हो आई, किन्तु यह प्रश्न करने से शायद वह समझेगा कि तपती उसकी कार्य-अयोग्यता के सम्बन्ध में व्यंग कर रही है—इसलिये वह चुप रही । उसकी समझ में न आया कि आगे क्या कहे ! थोड़ी देर विचार करने के बाद बोली : 'कुछ कपड़े तैयार करा लेना...'

तपन ने मृदु स्वर में कहा : 'जीवन में बहुत-कुछ प्राप्त न होने से प्राप्य वस्तुओं पर भी श्रद्धा नहीं रही !'

तपती नाराज हो गई । बनावटी बातों के लिये कोई दूसरा स्थान नहीं मिला ! किन्तु हँसकर बोली : 'अच्छा बुद्धदेव ! त्याग सीखना चाहते हो ?' उसके प्रश्न में व्यंग स्पष्ट था ।

आश्चर्य के साथ तपन ने कहा : 'बुद्धदेव ने कहाँ त्याग किया था ? उन्होंने ने तो पिता का क्षुद्र राज्य छोड़कर अगणित मानवों के हृदय-सिंहासन पर बैठकर राज्य को विस्तृत किया था ! इसमें त्याग कहाँ आया ?'

विमूढ़ तपती कुछ देर तक स्तब्ध होकर तपन की ओर देखती रही, फिर बोली : 'तो फिर त्याग किसे कहते हैं ?'

'त्याग नाम की कोई वस्तु ही नहीं है ! जिसे हम त्याग कहते हैं, उसका अर्थ है भाग जाना ! सच्चे त्याग का अर्थ है बंधन से मुक्ति अर्थात् विस्तार; क्षुद्रता से विशालता, सामान्यता से महानता की ओर प्रयाण !'

तपती विस्मय-विमुग्ध हो गई। तपन के मुँह से मानो आज अलौकिक वाणी सुन रही थी ! तपती ने अध्ययन किया था किन्तु मनन नहीं ! कौन इस व्यक्ति को मूर्ख या असम्य कहने का साहस कर सकता है ? तपती सोचने लगी कि वह क्या कहे। उसी समय कॉलेज की कुछ युवतियाँ आ पहुँचीं और नमस्कार करके पूछा : 'मंजे में तो हो न, मिस चटर्जी ?'

तपन की उपस्थिति में 'मिस' के सम्बोधन से वह लज्जित हो गई। किन्तु फिर कोई अप्रिय घटना न हो, इस भय से उसने एकदम कहा : 'मंजे में हूँ !' और चलने लगी; किन्तु एक युवती ने तपन की ओर संकेत करके पूछा : 'आपके मित्र का परिचय ?'

तपती को क्रिन्नता देखकर तपन ने स्वयं परिचय दिया : 'मैं तो एक सामान्य व्यक्ति हूँ; नाम है तपनज्योति !'

युवती हँस पड़ी : 'तपन यानी सूर्य; तब तो आप बड़े आदमी हैं, सामान्य नहीं !'

'मैं बड़ा आदमी ? आपने कैसे मान लिया ?'

'इतनी अच्छी गाड़ी है न !'

‘अच्छा, तो गाड़ी देखकर आप हमें बड़ा मान लेती हैं ? शायद इसलिये हम युवक आपको साड़ी देखकर बड़ा मान लेते होंगे !’

‘किन्तु युवक भूल करते हैं; क्योंकि गाड़ी और वाड़ी में तो काफ़ी पैसा लगता है, जबकि साड़ी का मूल्य सिर्फ़ पाँच रुपये !’

‘युवक, युवतियों के सम्बन्ध में भूल ही करते हैं ..’ कहकर तपन हँस पड़ा ।

‘क्यों, क्या आपने कोई भूल की है ?’ युवती ने पूछा ।

‘नहीं, मैं युवतियों से हो सके उतना बचकर चलता हूँ ।’

‘डर लगता है ?’

‘पहले लगता था ! अब इन्जेक्शन ले लिया है; बसन्त-रोग का डर नहीं रहा ।’

‘युवतियों को आप बसन्त-रोग मानते हैं ?’

‘महामारी ! किसे उसका डर नहीं लगेगा ? इसके उदाहरण इतिहास में हैं; टाय का ध्वंस, लंकादहन...’

‘शायद आप प्रेम भी करते हैं !’

‘अवश्य करता हूँ । मनुष्य जिससे डरता है उससे प्रेम भी करता है । जैसे—भूत ! भूतों से हम डरते हैं इसी लिये उनकी कहानियाँ हमें प्रिय लगती हैं; फिर भी हम उनसे दूर ही रहते हैं !’

‘आपकी बात का खण्डन नहीं कर सकती; किन्तु उसे पूरी तरह स्वीकार भी नहीं कर सकती !’

‘मुझे अफसोस है...’ कहकर तपन ने नमस्कार किया ।

एक साधारण-सी बात में भी वह अपनी दक्षता प्रदर्शित सकता था ! तपती आज पहली बार ही तपन को साथ लेकर घूमने निकली थी । उसने देखा कि पढ़ी-लिखी युवतियों के साथ भी वह निस्संकोच बातचीत कर सकता था; उसी बातों का खण्डन करना उनके लिये अशक्य था । वह आज तक क्यों उसे साथ न लाई ?

तपन को साथ रखने में शर्म की कोई बात नहीं थी।

गाड़ी के पास पहुँचकर तपती ड्राईवर के स्थान पर बैठ गई। सायंकाल पत्तियों की टोलियाँ घोंसलों की ओर लौट रही थीं। उन्हें देखकर तपन अपने जीवन पर विचार कर रहा था। तपती उस से मिलने की सोच रही थी। यकायक उसने ब्रेक लगाकर गाड़ी रोक दी। निर्जन निस्तब्ध मार्ग के दोनों ओर असंख्य वन्यपुष्प खिल रहे थे! तपती ने नीचे उतरकर कुछ फूल चुन लिये और एक फूल की कली तपन पर फेंककर बोली : 'तुम गाड़ी चलाओ, मैं माला गूँथूँगी!' कहकर वह अन्दर बैठ गई। तपन ने पूरी रफ्तार से गाड़ी दौड़ाई।

तपन की निर्लेपता तपती के अंतर को जागृत कर रही थी। उसका आधुनिक मन विचार कर रहा था कि वह माला तपन उसे पहिना दे। किन्तु वह तो तपती के साथ असहकार कर रहा था! तपती रह-रहकर उसकी ओर देखने लगी; किन्तु वह स्थिर ही था; उसकी दृष्टि रंचमात्र नहीं हटती थी। अपनी सर्पाकार वेणी में फूलों की माला पिरोकर तपती ने उसे इसतरह लटकाया कि वह तपन के बाँयें हाथ पर पड़े। फिर भी वह निर्विकार था। तपती धीरज न रख सकी—उस कठिन पाषाण-मूर्ति को लेकर वह क्या करेगी? गुस्से में हो तो उससे दो-चार अप्रिय शब्द कह सकता है; वह सुन लेगी; किन्तु वह नीरवता असह्य थी। तपती बोल उठी : 'बात करने का ढंग तो अच्छा है, फिर चुप क्यों बैठे हो?'

'न कहने पर भी बहुत-कुछ कहा जा सकता है—जैसे यह पुष्प-वृक्ष!'

'किन्तु मैं पुष्प-वृक्ष नहीं हूँ—मनुष्य हूँ। बातचीत करने के लिये मेरे पास भाषा है और उस भाषा को सुन्दर बनाने के लिये मैंने तपस्या की है!'

'मैं अपने मौन को सुन्दर बनाना चाहता हूँ, यही मेरी तपस्या है!'

‘ऐसा कहिये न, कि आपकी इच्छा मुझ से विपरीत है ?
आश्चर्य !’

तपन चुप रहा। संध्या का स्निग्ध मधुर संगीत दसों दिशाओं में गूँज रहा था। नीरवता के उस सुगम्भीर सौन्दर्य का अनुभव प्रियजन के सान्निध्य में ही किया जा सकता है ! कुछ देर बाद तपती बोली : ‘कल फिर आना पड़ेगा, सुना ? भागना मत !’

‘कल तो बहिन के घर जाना है, इसलिये नहीं आ सकूँगा !’
तपती पत्नीता लगाये हुए बारूद की भाँति सुलग उठी। उस बहिन ने ही तपती का सर्वनाश किया था। मुश्किल से क्रोध दबाकर वह बोली : ‘मैं भी आऊँगी, मुझे ले चलना ! मैं देखना चाहती हूँ कि उसके साथ आपका कैसा सम्बन्ध है !’

तपन ने एकदम ब्रेक लगाकर गाड़ी खड़ी कर दी। तपती स्प्रिंगवाली सीट पर उछल पड़ी। तपन ने धीमे और शांत स्वर में कहा : ‘उसके साथ मेरा चाहे जैसा सम्बन्ध हो, मिस चटर्जी ! आपको उम से क्या मतलब ? अकारण आघात करने में आपको क्या आनन्द आता है ? आपने तो मुझ से सम्बन्ध-विच्छेद कर ही लिया है ! आज फिर कहता हूँ कि ‘आप मुक्त, आप स्वतंत्र, आप स्वाधीन !’ आपके ऊपर मेरा कोई अधिकार नहीं है, और आशा करता हूँ कि आप भी ऐसा ही करेंगी !’

तपन ने वायुवेग से गाड़ी दौड़ा दी। तपती पाषाण-मूर्ति की भाँति बैठी रही।

घर निकट आते ही तपती ने पूछा : ‘सचमुच आपने मुझे मुक्ति दे दी ?’

‘हाँ, मैं आपके जीवन से अस्त हो गया।’

‘किन्तु अस्त हुआ सूर्य तो प्रातःकाल उदित होता है।’ तपती का व्यंग तीक्ष्ण था।

‘वह परिणाम है रात्रि की दीर्घ साधना का !’ तपन ने शांत स्वर में कहा ।

‘अच्छी बात है, तो रात्रि साधना ही करेगी !’ तपती ने विद्रूपता से कहा ।

‘किन्तु मैं कहाँ सूर्य हूँ ? मैं तो सुदूरवर्ती निहारिका-पुंज का एक नक्षत्र हूँ, जिसके अस्त होने पर युगों तक पुनः उदित होने की सम्भावना कम रहती है !’

गाड़ी बँगले के कम्पाउन्ड में आ पहुँची । तपन ने नीचे उतरकर दरवाज़ा खोल दिया । तपती के चले जाने पर वह भी धीरे-धीरे अपने कमरे की ओर चल दिया ।

सारी रात तपती ने दुश्चिन्ताओं में व्यतीत की। विचार-तरंगों तीर की भाँति आकर उसके हृदय से टकराती थीं। पिछले कुछ महीनों के स्मृति-सागर में गोते लगा-लगाकर वह लौट आई; किन्तु जहाँ तक दृष्टि जाती थी, जो कुछ दिखाई देता था, उसमें तपन की निर्विकारता ही वह देख रही थी। कदाचित् वह निर्दोष न भी हो, किन्तु निर्लस तो था ही। बार-बार अपमान करने पर भी वह अविचल रहा था। आज वे सारे आघात ही तपती की अपरि-सीम लज्जा के कारण बन गये थे।

तपन ने उसे मुक्ति दी थी? सचमुच वह तपन के लगन-बंधन से मुक्त हो गई थी?—एक प्रकार से यह अच्छा ही हुआ था; किन्तु उसे हर्ष क्यों नहीं होता? निर्बाध निस्सीम विस्तार में तपती जिसे प्रहण कर सकती थी, वह तपन आज उसका नहीं रहा! अस्यन्त निस्पृहता और सरलता से उसने कह दिया था कि उस पर उसका कोई अधिकार नहीं! सचमुच उसने मुक्ति दे दी थी? हाँ; स्वयं तपती ने ही तो मुक्ति की कामना की थी! कामना ही नहीं की थी, मि. बनर्जी के कन्धे पर सिर रखकर तपन को विश्वास करा दिया था कि उसे वह नहीं चाहती—उसका स्वीकार नहीं करेगी! इतने दिनों तक भीषण आघात सहने पर भी जो विचलित नहीं हुआ था, वही तपन उसदिन बाण से बिँचे हुए मृगशिशु की भाँति रो पड़ा

था; अजस्र अश्रुधारा से उसने पूजा की वेदी भिगो दी थी। तपती ने निर्लिप्त निष्ठुरता से वह रुदन देखा था; हँसी उड़ाई थी और विरक्त हो गई थी।

तपन से आज वह क्या कह सकती है? कदाचित् क्षमायाचना का अधिकार भी उसने गँवा दिया था। हाँ, तपती आज सचमुच मुक्त, स्वाधीन, स्वतंत्र थी! फिर तपन अभी किसलिये यहाँ रहता था? जो इतने अपमान सहकर भी गृहत्याग नहीं कर सकता, वह इतनी आसानी से तपती का त्याग कैसे करेगा?—नहीं, नहीं, वह व्यर्थ ही चिन्ता कर रही थी।

निश्चित होकर तपती ने कुछ आराम कर लिया। वह नहीं समझ पाती थी कि तपन के चले जाने पर उसे कितनी हानि होगी, किन्तु यह विचार उसे बार-बार आता था कि उसके रहने से उसे कुछ लाभ था। माता-पिता उसे स्नेह करते हैं, इसलिये वह अवश्य इस घर में रहेगा। तपती को डराने के लिये उसने यों ही कह दिया था कि मुक्ति दे दी! मुक्ति देना इतना सरल नहीं था! वह चार रुपये में खरीदा हुआ पंखी नहीं थी कि उड़ा दिया जाये! और कदाचित् मुक्त कर दे, तो भी तपती का क्या बिगड़ जायेगा? वह उसके लिये रो-रोकर मर नहीं जायेगी! उसे घर में रहना हो तो अच्छी तरह रह सकता है; अधिक रुपयों की आवश्यकता हो तो भी ले सकता है! उसे विरक्त न करने का तपती ने निर्णय कर लिया। दोनों का एक-दूसरे से स्वाधीन होकर रहना ही उचित है।

तपती हँस पड़ी। तपन ने तो कभी उसकी स्वाधीनता में हस्त-क्षेप नहीं किया था! वह सदा स्वाधीन ही थी और उसी प्रकार रहेगी। प्रभात हो गया था। आकाश का स्निग्ध प्रकाश तपती को प्रिय लगा। वह स्नानादि कार्यों से निवृत्त होकर दालान में जा पहुँची। द्वार खुल गये थे। भयातुर तपती ने अन्दर जाकर देखा तो

तपन पूजा करने बैठा था। तपती ने उसकी पीठ कई बार देखी थी, किन्तु मुँह पर कभी दृष्टि स्थिर नहीं की थी। विचारमग्न तपती उसदिन पहली बार अन्दर चली गई। प्रेम के अभिसार की उस सामान्य विधि में ही उसे कई दिन लग जाते, किन्तु अचानक वह घटना हो गई।

तपन इसप्रकार नेत्र बन्द किये आराधना में लीन था कि उसकी शांत मुद्रा को बुद्धदेव की उपमा दी जा सकती थी। तपती चुपचाप खड़ी रही। तपन के मीमे बालों से अब भी पानी टपक रहा था। तपती को एकबार अपने आँचल से तपन का मस्तक पोंछ देने की इच्छा हो आई।

तपन ने आँखें खोलीं। उसे आश्चर्य हुआ। अत्यन्त नम्र स्वर में पूछा : 'कुछ कहने आई हो?'

'ना, कुछ नहीं!' कहकर वह विमूढ़ की भाँति खड़ी रही। पूजा विसर्जन करके तपन भोजन करने चला गया और फिर बाहर।

शाम होने पर भी वह न लौटा। तपती अधीर हो गई। माँ से पूछने में उसे लज्जा आती थी। सोचने लगी : शाम को भोजन के समय तो आयेगा ही ! यकायक उसे याद आया कि आज वह बहिन के घर जानेवाला था ! तो क्या दिनभर नहीं आयेगा ?

मि. बनर्जी तथा दूसरे मित्र बड़ी देर से तपती की प्रतीक्षा कर रहे थे। निराश होकर वह नीचे उतरी। मि. बनर्जी ने कहा : 'क्या हुआ मिस चटर्जी ! यक्ष-पक्षी जैसा चेहरा क्यों हो गया ?'

'आज से याद रखना कि मैं मिस गोस्वामी हूँ !' कहकर वह लतामण्डप की ओर चल दी।

'मि. अधिकारी ने पूछा : 'आज खेलना नहीं है ?'

'नहीं!' तपती ने दृढ़ स्वर में कहा। सब अवाक् होकर चले गये।

तपन रात को साढ़े नौ बजे लौटा। माँ ने पूछा : 'बहिन के घर क्या खाया बेटा ?'

'दूसरा क्या माँ, पेटिस-चॉप, आमलेट, ऐसा बहुत कुछ खाया !'

तपती छिपकर सुन रही थी। माँ ने कहा : 'बेटा, तू बहिन के घर तो मजे से खाता है, और यहाँ देती हूँ तो कहता है कि यह सब मुझे पसन्द नहीं ?'

तपन बोला : ' क्यों माँ, जो तुम देती हो, वह सब मैं खा लेता हूँ ! फिर भी बहुत कम खाने की आदत है !'

माँ ने फिर कहा : 'लेकिन बेटा, तपी ने उसदिन तेरे लिये खाना बनाया था, फिर भी तूने नहीं खाया ?'

तपन यकायक गम्भीर हो गया। उसका उत्तर सुनने के लिये तपती कान लगाये खड़ी रही। तपन ने धीरे-से कहा : 'इस सम्बन्ध में कुछ नहीं कहना चाहता माँ, तुम्हें व्यर्थ ही दुःख होगा !'

माँ व्याकुल स्वर में बोली : 'होने दे बेटा, बतला तो सही क्यों नहीं खाता ? मैं जानना चाहती हूँ

'नहीं कहूँगा माँ, तुम्हें दुःखी नहीं करना चाहता !'

'ना, बेटा ! तुझे कहना ही पड़ेगा !' माँ ने हठ पकड़ ली।

निरुपाय तपन कोमल स्वर में बोला : 'तुम्हारी पुत्री ने कल मेरे लिये भोजन बनाया ? बनाया भी होगा तो अपने मित्रों के लिये ! और बहिन तो मेरे लिये पेटिस-चॉप बनाकर मेरी प्रतीक्षा करती है। पट्टूचने में देर हो जाये तो रो-रोकर आँखें लाल कर लेगी ! उसके साथ तुम्हारी पुत्री की तुलना नहीं हो सकती माँ, वह आधुनिक स्त्री नहीं है—वह है भाई की प्यारी बहिन !'

माँ चुप रही। तपती के आश्चर्य का पार न रहा। तपन इतना भावुक था, उसका लक्ष्य इतना तीक्ष्ण था !

कुछ देर बाद माँ अपने को सँभालकर बोली : 'तपी तो बिलकुल नादान है बेटा, कुछ समझती ही नहीं !'

अट्टहास द्वारा कमरे का उदास वातावरण स्निग्ध करके तपन बोला : 'मैंने कब कहा कि वह समझदार है ? यह तो "उल्टा चोर कोतवाल को डाँटे"-ऐसा हुआ !' कहकर वह अपने कमरे की ओर चल दिया ।

दूसरे दिन सवेरे आकर तपन ने कहा : 'कल तुम से कठोर शब्द कहकर खूब कष्ट दिया है, माँ ! सच कहना, तुम्हें दुःख तो हुआ होगा ?'

'तूने मुझ पर बड़ा उपकार किया है तपन, मुझे दुःख की कुछ आवश्यकता थी।'

'बिलकुल सच कहा माँ, मनुष्य को दुःख की भी आवश्यकता है। इस संसार में दुःख के चाक पर हमारे मन की मिट्टी मानव-मूर्ति के रूप में गड़ती है। इसीलिये तो रवीन्द्रनाथ कह गये हैं कि-
'वज्र से जला देना, अंतर की कालिमा !'

तपन भोजन करने लगा। माँ ने देखा तो द्वार के पीछे तपती की साड़ी का छोर लटक रहा था। उसने कहा : 'आ बेटी, जीम ले !'

तपती को आज आने में संकोच हो रहा था। माँ ने कहा : 'इसकी शर्म तो देखो ! आ जा बेटी ! मालूम है तपन, कल यह क्या कह रही थी ? कहती थी : 'तेरे दामाद इतना भी क्यों नहीं समझते कि उनके लिये भोजन बनाने में मुझे शर्म लगती है ?'

विस्मय से अवाक् तपन ने दो क्षण बाद उत्तर दिया : 'शर्म की एक मधुर गंध होती है माँ, आपकी पुत्री के आचरण में मुझे उसका अनुभव नहीं हुआ। लेकिन जाने दो यह बातें; ऐसी अप्रिय बातें न कहना ही अच्छा !'

'हाँ बेटा, रहने दे !' गड्ढा खोदने पर साँप निकल आयेगा
जी. ११

—इस डर से माँ ने कहा। तपन के जाने पर उसने तपती से कहा : 'तुझ में ज़रा भी बुद्धि नहीं आई बेटी, तेरी पढ़ाई व्यर्थ गई !'

तपती ने वह तिरस्कार चुपचाप सहन कर लिया। उसके जन्म-गत संस्कार मानो आज उसे चाबुक मारकर समझा रहे थे कि इतनी पढ़ाई के बाद भी वह अपने पति को पहचानने की बुद्धि प्राप्त न कर सकी ! माँ के शब्दों का किंचित् विरोध किये बिना वह हँसने लगी और अपने कमरे में जाकर दिनभर सोचने के बाद एक उपाय ढूँढ़ निकाला।

शाम को तपन के आते ही माँ ने कहा : 'तपी के सिर में खूब दर्द हो रहा है बेटी, उसे घूमने ले जा !'

'सिर में दर्द है ? लेकिन मेरे साथ घूमने से दर्द कम नहीं होगा; मित्रों के साथ जाने को कह दो ! उनसे बातचीत करते ही दर्द मिट जायेगा !'

तपती आरामकुर्सी में पड़ी-पड़ी सुन रही थी। अत्यंत कण्ठ स्वर में बोली : 'रहने दो माँ, नहीं जाना है ! शायद उन्हें काम होगा !'

तपन आश्चर्यचकित होकर बोला : 'लेकिन समझ में नहीं आता कि मेरे न जाने से घूमना क्यों बन्द रहता है ! रोज तो घूमने जाती है !'

तपती को नहीं सूझा कि वह क्या बोलें ! माँ सब समझ गई थी। बोली : 'अभी तक नादान थी बेटी, क्या हमेशा मित्रों के साथ घूमती रहेगी ?'

तपन हँस पड़ा और बोला : 'माँ, कल ही तुम कह रही थीं कि तुम्हारी पुत्री नादान है, और रातभर में समझदार हो गई ! तुमने अपने पिता के घर ऐसा हान सुना है ? माँ, तोरई और बैंगन दो चार बढ़ते हैं—क्या आप की पुत्री

तपन की बात सुनकर तपती भी हँस पड़ी !

माँ ने कहा : 'यह बातें जाने दे बेटी, दोनों जाकर घूम आओ !'
'जैसी आज्ञा !' कहकर तपन नीचे उतर गया ।

चालीस, पचास, साठ मील की रफ्तार से गाड़ी दौड़ रही थी । दोनोंमें से कोई शब्द भी नहीं बोलना था । तपती बाँयाँ हाथ मस्तक पर रखे बैठी थी । तपन दूर-दूर दृष्टि स्थिर करके देख रहा था । खुली कार के ऊपर से पवन सनसनाता हुआ बह रहा था । तपती ने एक-दो बार सिर दयाकर कराहने का अभिनय किया । तपन निर्विकार भाव से गाड़ी चला रहा था । हवा में उड़ते हुए तपती के बाल तपन के मुँह का स्पर्श करते थे । तपन ने मुँह हटा लिया । तपती ने सिर उसके कन्धे पर रख दिया फिर भी वह चुप था । 'ओ माँ रे !' कहकर तपती अपना सिर उसकी छाती के निकट ले गई; तपन की साँस उसके मस्तक की छूने लगी । यकायक उसने गाड़ी धीमी की, और फिर रोक दी । तपती ने सिर उठाकर देखा तो वे गंगाकिनारे आ गये थे ।

तपन खिड़की खोलकर नीचे उतर गया । तपती के हृदय में एक साथ विस्मय, व्यथा और असहायता की वृत्ति जागृत हो उठी । उसने कभी इतनी असहायता का अनुभव नहीं किया था । वह भी नीचे उतरी और एक वृक्ष से फूल तोड़कर तपन के ऊपर फेंककर बोली :
'फूल के आघात से कौन मूर्च्छित हो सकता है ? बतलाओ !'

तपन मुँह फेरकर खड़ा हो गया । तपती के उस निर्लज्ज साहस से उसका चिर-सहिष्णु अंतर भी असहिष्णु बन गया था । जिस नारी ने पति का हृदय अपमानों से विदीर्ण कर दिया था; जिसने एक बार मुड़कर देखा भी नहीं कि उसमें से कितना रक्त बह गया था, जिसने स्वेच्छा से परपुरुष के शरीर पर लुढ़ककर पति से मुक्ति माँग ली थी—वह आज क्या मुँह लेकर उससे विनोद कर रही

है ! क्या यही आधुनिकता की प्रगति कहलाती होगी ? किन्तु तपन उसे आघात नहीं पहुँचाना चाहता था। उसने कोई उत्तर न दिया।

तपती की धारणा थी कि उसकी पहेली के उत्तर में तपन बोल उठेगा : 'उसका नाम तपती।' किन्तु वह कुछ न बोला; उसने मुँह फेरकर देखा तक नहीं ! तपती शर्म के मारे धरती में गड़ी जा रही थी। निरुपाय होकर उसने अन्तिम प्रयास के रूप में कहा : 'थोड़ी देर बैठोगे नहीं ?'

तपन चुपचाप कुछ दूर जाकर बैठ गया। हरी घास के मैदान में दो आत्मीय व्यक्तियों की नोरवता प्रकृति को भी पीड़ित कर रही थी। एक पपीहा किसी पेड़ पर से पुकार उठा : 'पियु कहाँ !'

तपती को विश्वास हो गया कि तपन नहीं बोलेगा। कुछ न सूझने पर एक कराह के साथ तपन के घुटनों के पास सिर रखकर वह घास पर ही लेट गई।

शायद सचमुच उसे पीड़ा होती होगी—ऐसा सोचकर तपन ने कष्ट कांमलता से तपती के लिलार पर हाथ रखा, किन्तु सिर दर्द का कोई लक्षण उसे दिखाई न दिया। मिर बिलकुल ठण्डा था; लिलार की दोनों नसें भी स्वाभाविक रीति से धड़क रही थीं। उस मिथ्याभाषिणी छलनामयी नारी से तपन ने विवाह किया था ! वह घृणा से काँप उठा, किन्तु बोला कुछ नहीं। तपती के शीतल कोमल लिलार पर उसकी निपुण उँगलियाँ घूम रही थीं। आराम मिलने से तपती ने आँखें बन्द कर लीं। वह सोच रही थी कि उसके घुटनों पर सिर रखे या नहीं ? किन्तु नहीं, ऐसा करने की आवश्यकता नहीं है; वह स्वयं खींच ले तो अच्छा !

‘नमस्कार !’

तपती ने आँखें खोलकर देखा तो मि. बोस नमस्कार कर रहे थे। बोले : 'मौसो ने कहा कि आपके सिर में दर्द है, इसलिये

ढूँढ़ता-ढूँढ़ता आ पहुँचा। अब कैसी तबियत है? एस्प्रीन लेंगी?’

मि. बोस के प्रश्न का उत्तर दिये बिना ही तपती ने आँखें बन्द कर लीं। उसे क्रोध आ गया था। मि. बोस को यहाँ आने की क्या जरूरत थी? वह अपने पति के साथ घूमने आई थी; मिर में दर्द हो या मर जाये—यह तो उसके पति को देखना था। मि. बोस को एस्प्रीन लेकर किमलिये आना चाहिये? किन्तु तुरन्त उसे याद आ गया कि उसने अपने आमपास जो काँटों का जाल फैला रखा था, उसमें से निकलते समय हाथ-पैरों का छिलना स्वाभाविक था! कोई दूसरी अप्रिय घटना न हो—इस डर से तपती ने कोई उत्तर न दिया। मि. बोस ने तपती के मनोभावों की पहिचान लिया। उन्हें लगा कि—तपती का वह अभिनय बनावटी था। उन्होंने ने तपन से कहा :

‘वेल मि. गोस्वामी! मैं एक बार फिर आपसे माफी माँगता हूँ।’

‘किस बात की?’ तपन ने उदासीनता से पूछा।

‘उस दिन की घटना के लिये। सचमुच मैं बहुत लज्जित हूँ!’

तपन का हृदय तो यों ही तपती के अभिनय से खिन्न हो गया था; उसी में मि. बोस का आगमन और दूसरी बार माफी माँगना इस में चतुर तपती का क्या उद्देश्य होगा?—उसकी समझ में न आया। फिर भी संयत स्वर में उत्तर दिया : ‘यह सब न कहते तो भी चलता, मि. बोस! और वह अपराध कहाँ आपका है? उस में जिसका पृष्ठबल था उसका अपराध माना जा सकता है। फिर कुछ भी हो, मैंने अंतःकरणपूर्वक क्षमा कर दिया है। बारबार एक ही बात कहने के दुःख से मुझे बचा लें—ऐसी प्रार्थना है।’

तपती ने करवट ली। वह सोच रही थी : तपन इसतरह विचार कर सकता है! मि. बोस द्वारा किये गये अपमान में उसका

पृष्ठबल था ? तपन की बात का वह विरोध नहीं कर सकती ! और वह झूठ भी नहीं है ! उसकी इच्छा न होती तो मि. बोस ऐसी हिंमत ही नहीं कर सकते थे ! तपती ने तपन की ओर देखा । वह दूसरी ओर देख रहा था; फिर भी वह समझ गई कि उस चेहरे पर क्रोध या द्वेष का चिह्न नहीं था !

मि. बोस अत्यन्त लज्जित हो गये । अपने को सँभालकर बोले : 'हम आपको पहिचान न सके, मि. गोस्वामी ! किन्तु आज हम सचमुच आपको अपना मित्र बनाना चाहते हैं । नाउ बी मस्ट बी फ्रेंडस्—अब हमें मित्र बन जाना चाहिये !'

तपन चुप रहा । उसकी उँगलियाँ तपती के मस्तक पर उठी तरङ्ग फिर रही थीं ।

'कुछ बोलते क्यों नहीं, मि. गोस्वामी ? मेरी मित्रता आपको स्वीकार है न ?'

'मुझे अफसोस है मि. बोस, आपके साथ मेरी मित्रता कैसे हो सकती है ? मैं तो एक निर्धन, दीन, अशिक्षित व्यक्ति हूँ जब कि आप हैं धनवान, शिक्षित और कुलीन ! आप से मित्रता की बात करना मेरे लिये अयोग्य ही नहीं, असम्भव है !'

'किन्तु मैं प्रार्थना करता हूँ कि आप मेरी मित्रता का स्वीकार करें !'

'माफ करना मि. बोस ! मैं असत्य नहीं बोलता, अपने शब्द-कोष के 'मित्र' का अर्थ मुझे आपकी मित्रता में दिखाई नहीं देता; मैं आपको अपना मित्र नहीं मान सकता !'

मि. बोस कुछ न बोले । उन्हें अपमान का अनुभव हुआ । उनका चेहरा पीका पड़ गया ।

तपन फिर बोला : 'शायद आपको दुःख होगा, किन्तु मैं विवश हूँ । आपके साथ आज ही परिचय हुआ ! इससे पूर्व ऐसा कोई

प्रसंग नहीं आया कि मेरे विरह से आपको आघात लगा हो या मैं व्याकुल हुआ हूँ ! हाँ, मित्र की अपेक्षा परिचित कह सकते हैं !'

मि. बोस मानो कटाक्ष करने के लिये बोले : 'आपके ऐसे अभिन्न मित्र कितने हैं, मि. गोस्वामी ?'

उस कटाक्ष की अवहेलना करके तपन ने उत्तर दिया : 'अधिक तो नहीं, एक है।'

'आशा है वे भी आपकी भाँति सूत्र मिलाकर मित्रता करते होंगे।'

'वह क्या करता है—यह जानने की मुझे क्या आवश्यकता, मि. बोस ? मैं जो करता हूँ, वही आपसे कहा है !' कहकर वह खड़ा हुआ और तपती के लिलार पर लगे हुए स्निग्ध पदार्थ को गंगाजल से धोने लगा।

मि. बोस ने सम्मित दृष्टि से तपती की ओर देखा और बोले : 'ऐसी अनोखी अंधश्रद्धा कहीं देखी है, मिम चटर्जी ? धन्य है आपका धैर्य जो अभी तक इसके साथ बैठी रहिं ?'

'आपमें धैर्य न हो तो चले जाइये !' कहकर तपती बैठ गई और तपन के निकट जाकर बोली : 'चलो, घर चलें, यहाँ अब अच्छा नहीं लगता !'

तपन निस्पृह की भाँति आकर गाड़ी में बैठ गया। तपती उससे सटकर बैठी और बोली : 'चलो, खूब तेज़ मत चलाना, डर लगता है !'

मि. बोस अभी वहीं बैठे थे; उनकी ओर तपती ने देखा तक नहीं। वह रास्तेभर तपन के बाँयें कंधे पर सिर रखे चुपचाप बैठी रही। तपन एक शब्द भी नहीं बोला; एकबार भी नहीं पूछा कि उसके सिर का दर्द कम हुआ था या नहीं !

गाड़ी कम्पाउन्ड में आते ही तपती ने सिर उठाया और एक दीर्घ श्वास छोड़ी।

दूसरे दिन कॉलेज से आते ही माँ ने तपती से कहा : 'बेटी, आज कुछ खाने के लिये बना !'

तपती माँ के पास आकर धीरे-से बोली : 'आज रहने दे माँ, उन्हें ऐसा लगेगा कि मैंने अपनी इच्छा से खाना नहीं बनाया— दो दिन बाद बनाऊँगी ।'

माँ तपती का मतलब समझ गई ।

वह फिर बोली : 'रविवार को तो वे जानेवाले हैं माँ, और शनिवार को एक पार्टी है; वहाँ मैं अकेली नहीं जाऊँगी—लोग उँगलियाँ उठाते हैं !'

'तो उससे क्यों नहीं कहती ? पहले तो तू इतनी शरमीली नहीं थी बेटी !'

'शरम की बात नहीं है माँ, वे बहाना बनाकर चले जाते हैं। तुझे मालूम नहीं वे कितने चतुर हैं ! और देख माँ, कह देना कि इस बार थर्डक्लास में सफ़र न करें !'

तपती एक तकिये का गिलाफ़ भर रही थी। उसने कहा : 'यह गिलाफ़ उनके तकिये पर चढ़ाना है माँ, बता, इस पर क्या लिखूँ ?'

माँ हँसकर बोली : 'तू तो पगली है तपी ! मैं क्या जानूँ क्या लिखा जाता है ! तू न जानती हो तो उससे पूछ लेना !'

'वे तो बोलते ही नहीं, कितनी गंभीर प्रकृति है ! मुझे डर लगता है !'

‘ज़रा भी गंभीर नहीं है बेटी ! हाँ, पिछले कुछ दिनों से हो गया है ।’

तपन भोजन के लिये अन्दर आया । माँ ने हँसकर कहा : ‘इतनी गंभीरता क्यों आ गई बेटा ? अभी तू बूढ़ा नहीं हो गया ! कुछ बोलता क्यों नहीं ?’

खिलखिलाकर तपन बोला : ‘मेरी उम्र का काँटा आपकी घड़ी में तो आपकी इच्छानुसार ही चलता है; ठीक है न माँ ! बोलो, क्या कहूँ ?’

‘कोई भी बात कर बेटा, गंभीर रहना तुम्हें शोभा नहीं देता ।’

‘अच्छा माँ—

मैं तुम्हारा हूँ, तुम्हारा ही रहूँगा !

समझो ?

मैं धरा का वृक्ष, तुम बादल गगन के
मैं बँधा हूँ किन्तु, तुम सहचर पवन के
यदि न उड़ पाया सतन तो क्या हुआ
पर, मे हवा का कर पकड़ हिलता रहूँगा—
मैं तुम्हारा हूँ, तुम्हारा हो रहूँगा !’

तपन के घायल हृदय की माँ को खबर नहीं थी, किन्तु तपती के अंतर से आज आँसुओं का सागर उमड़ रहा था । जैसे-तैसे आत्म-संवरण करके वह खड़ी रही । तपन हँसते हँसते जीमने बैठा ।

माँ ने पूछा : ‘मद्दास जाने के लिये तेरा बिस्तर तो ठीक करना पड़ेगा बेटा, तपती ने एक गिलाफ बनाया है, उस पर वह क्या लिखे, बतला ?’

कोई आवश्यकता नहीं है माँ, मेरा बिस्तर ठीक है; मुझे कुछ नहीं, चाहिये !’

‘कहाँ ठीक है बेटा ? तेरी बहिन के घर ? तो सिर्फ़ गिलाफ़ ले जाना !’

‘घर की वस्तु बाहर कमलिये ले जाऊँ माँ, बाहर की वस्तु घर में लाना चाहिये !’

तपती का चेहरा क्रक हो गया। उसका उदास मुँह देखकर माँ को बहुत दुःख हुआ; किन्तु तपन से अधिक बात करने में उसे डर लगता था। माँ जानती थी कि आजन्म सत्यनिष्ठ तपन एक बार इन्कार करने पर हाँ नहीं कहेगा।

माँ ने कहा : ‘इस बार तुझे रिज़र्व डिब्बे में जाना पड़ेगा, बेटा ! अपनी माँ का कहना मानना !’

‘बाप रे ! रिज़र्व डिब्बे में तो रोगी या भोगी जाते हैं माँ ! मैं भोगी तो नहीं हूँ और आपकी कृपा से मुझे कोई रोग भी नहीं है !’

‘नहीं बेटा, आज ही रिज़र्व करा ले, रुपये ले जा !’

‘लेकिन मैं आफिस के काम से नहीं जाता माँ, अपने काम से जा रहा हूँ !’

‘तो भी क्या हुआ, रुपये ले जा; नहीं तो मुझे दुःख होगा !’

तपन उलझन में पड़ गया। वह जानता था कि सच बोलने से माँ के दुःख की सीमा नहीं रहेगी। उस स्नेहमयी नारी की व्यथा वह नहीं देख सकता था। उसे नहीं सूझा कि क्या उत्तर दे। कुछ देर विचार करके बोला : ‘अपना कार्य अपने खर्च से करना गौरव की बात नहीं है माँ ? पुत्र के उस कार्य से माँ को गौरव का अनुभव होना चाहिये !’ वह हँस पड़ा।

माँ निरुत्तर रही। फिर भी बोली : ‘लेकिन तू थर्डक्लास में जाता है उसमें हमारी शोभा नहीं रहती बेटा ! अपने ससुर की इज्जत का भी तुझे खयाल रखना चाहिये !’

‘अच्छा माँ, इन्टरक्लास में जाऊँगा; अब तो संतोष हुआ ?’

माँ कुछ न बोली। तपती की समझ में न आया कि वह किमलिये रुपये ले जाने को इतना आग्रह कर रही थी ! उसने माँ से जाकर कहा : ‘पार्टी की बात कह माँ !’

‘तू क्यों नहीं कहती ? सुना बेटा ! शनिवार को एक पार्टी है; उसमें तुझे जाना पड़ेगा !’

‘न जाऊँ तो नहीं चल सकता ? मैं तो आज तक कभी नहीं गया !’

‘ना बेटा, तू नहीं जाता इसलिये हमें सुनना पड़ता है। लोग कहते हैं कि हमने दामाद को छिपा रखा है। तू छिपा रहे ऐसा दामाद नहीं है, तुझे हमारे सम्मान की रक्षा करना चाहिये !’

तपन चुपचाप खा रहा था। माँ ने फिर कहा : ‘यहाँ न होता तो कुछ कहने की आवश्यकता नहीं थी; लेकिन घर में होने पर भी समाज से दूर रहना यह हमारे लिये नीचा देखने जैसा है। तपी को खूब दुःख होता है।’

‘अच्छा माँ, जाऊँगा।’ कहकर वह चल दिया।

तपन के जाने पर तपती ने माँ से पूछा : ‘वे कुछ नहीं लेना चाहते माँ ? रुपये लेने के लिये इतना आग्रह क्यों करती है ?’

‘ना बेटा, वह कुछ नहीं लेता। अपने जेबखर्च के दो सौ रुपये भी मेरे पास रख जाता है; कभी एक पैसा भी नहीं माँगता !’

‘मैंने तो सुना था कि दो लाख रुपये लिये हैं; क्या यह झूठ है ?’

‘नहीं, दो लाख रुपये उसने लिये थे, लेकिन पता नहीं उनका क्या किया ! पछते हुए भी डर लगता है। अद्भुत लड़का है बेटा ! बुरा लग जाये और कह दे कि ‘मैं तो यह चला घर छोड़कर !’ तो फिर एक मिनट भी खड़ा नहीं रहेगा !’

‘तुम्हे क्या खबर माँ! दो लाख रुपये उन्होंने स्वयं लिये हैं; नहीं तो दिल्ली की सैर कैसे करते?’

‘वे रुपये उसने अपने लिये नहीं लिये बेटी! मुझ से कई बार कहा है : ‘तुम्हारा स्नेह-ऋण कब चूका सकूँगा यही सोचता हूँ, माँ! रुपये लेकर उस में वृद्धि नहीं करना चाहता।’ वह किसी का दान स्वीकार नहीं करता, कभी झूठ नहीं बोलता। एक दिन रात को आकर कहने लगा: माँ थोड़ा-सा भात खाना चाहता हूँ!’ उस दिन भात तो बनाया नहीं था, इसलिये मैंने कहा: ‘भात तो नहीं बनाया बेटी!’ मालूम है उसने क्या कहा? कहने लगा: ‘तो बना दो माँ, नहीं तो नौकरों के पास से थोड़ा मँगवा दो। भात खाने को कहा है, इसलिये खाना ही पड़ेगा; नहीं तो झूठी बात कहलायेगी!’ उस दिन नौकर का भात मँगवाकर उसे खिलाना पड़ा। खाकर बोला: ‘आपके घर में नौकर क्या कैसा खाते हैं—यह कितनी होशियारी से जान लिया, माँ? तुम कुछ न समझ सकीं!’

तपती विमूढ़ की भाँति कुछ देर खड़ी रही; फिर करुण स्वर में बोली: ‘यह सारी बात मुझ से पहले क्यों नहीं कही माँ?’

‘मुझे क्या पता था बेटी, कि तू खबर नहीं रखती!’

तपती अधिक कुछ न कहकर तपन के कमरे की ओर चली। उस से भूल हो गई थी—एक भयंकर भूल! कौन जानता था कि वह उसे सुधार सकेगी या नहीं!

सारी रात तपती ने बैठे-बैठे ही बिता दी।

उसकी जीवन-धारा ही मानो बदलती जा रही थी। स्नान करके वह तपन के कमरे के पास आ खड़ी हुई। तपन नेत्र मूँद-कर स्तोत्र बोल रहा था :

‘शरणागत दीनार्त परित्राण परायणे,
सर्वस्यार्ति हरे देवी नारायणि नमहस्तुते ?’

तपती ने भी वह स्तोत्र मन ही मन दुहराया। ऐसा तो बहुत-कुछ उसने अपने दादाजी के पास सीखा था; किन्तु भूल गई थी; फिर भी वे महार्घ रत्न उसके स्वामी को याद थे। हाँ, स्वामी ! आज तपन की स्वामीरूप में कल्पना करने से उसे तृप्ति का अनुभव होता था। आज तक क्यों उसने तपन को नहीं देखा था ! किसलिये वह भयंकर भूल की ! तपन के मधुर कण्ठ से वाणी निकल रही थीः
अंभोधर श्यामल कुंतलायै, विभूति भूषांग विलेपनाय,
हेमांगदायै चफणाङ्गदाय, नमः शिवायै च नमः शिवाय ।

कैसी अपरूप सुन्दर श्लोकमाला ! शेली, कीट्स, बायरन, टेनिसन सुन्दर थे इस में कोई शंका नहीं, किन्तु ‘अरण्ये शरण्ये सदा माम् प्रपाहि, गतिस्तं मतिस्तं त्वमेका भवानि !’—यह कम सुन्दर थे ! कम आन्तरिकतापूर्ण थे ?

तपती के मन में विचार आया : दादाजी जीवित होते तो आज उसकी यह दुर्गति न होती। किन्तु वे तो अपना कार्य पूरा कर गये थे। सोलह वर्ष तक उन्होंने तपती को—‘आर्यनारी का स्वामी और संसार के प्रति कर्तव्य’ की शिक्षा दी थी। आधुनिक समाज के साथ कदाचित् उमका मेल न हो, किन्तु तपती उसका समन्वय क्यों न कर सकी ! दादाजी का शिक्षण उसने क्यों भुला दिया ?

तपती को लगा कि इसके लिये उसके माता-पिता ही उत्तरदायी थे। एक दिन था जब उसका अंतर होमाग्नि की भाँति पवित्र था, किन्तु आज वह दावानल बन गया था। दोनों अग्नि हैं; फिर भी कितनी अममानता ! यह वे कैसे समझ सकते हैं जिन्होंने होमशिखा नहीं देखी। तपती को याद आया कि उसकी वर्षगाँठ पर तपन ने आशीर्वाद दिया था : ‘तुम्हारे जीवन में पवित्र यज्ञशिखा प्रज्वलित हो !’ कदाचित् आज वह यज्ञशिखा प्रज्वलित हो उठी थी; किन्तु पुरोहित क्यों नहीं आता ? आयेगा, आयेगा, उसके पितामह का आशीर्वाद व्यर्थ नहीं जा सकता !

तपन पूजा-विसर्जन करके भोजन के लिये चला गया था—यह खबर पड़ते ही तपती भी उधर गई। उसका चेहरा देखकर माँ ने कहा : ‘खाकर थोड़ी देर सो जा, बेटी ! और मुसकराई । तपती का मुँह लज्जा से लाल हो गया। माँ ने सोचा था कि वह तपन के साथ रात को देर तक जागती रही होगी। तपती सिर झुकाए खड़ी थी। काश ! माँ की धारणा सत्य होती तो आज की लज्जा तपती के लिये आनन्दप्रेरक ही होती। किन्तु वह सत्य नहीं थी—और कब होगी यह भी नहीं जानती।

तपन बोला : ‘अध्ययन एक तपश्चर्या है माँ, इनसे अच्छी तरह पढ़ने को कहो !’

‘हाँ बेटा, यह तो पढ़ती है, लेकिन तू क्या करेगा ?’ माँ ने हँसकर पूछा ।

तपन ने हँसकर ही उत्तर दिया : ‘अजरामरवत् प्राज्ञ विद्यामर्थं चिन्तयेत्’—यह विद्या के विचार करें, मैं अर्थ के विचार करता हूँ । इन्हें धन की तो कोई कमी नहीं है ।’

‘तुझे भी कहाँ कमी है बेटा ?’ माँ ने उदास होकर कहा ।

‘अर्थ का अर्थ अत्यन्त व्यापक है माँ ! उसका अभाव तो मेरे लिये बना ही रहेगा ! जैसे हि—पुरुषार्थ, पौरुषार्थ परमार्थ,—अर्थ यानी रुपया नहीं !’

माँ कुछ न बोली । माँ की ओर देखकर तपती ने धीमे स्वर में कहा : ‘उसी प्रकार अनर्थ का मूल भी कभी कभी अर्थ होता है ।’

‘उपयोग न कर जानने से ऐसा होता है । उपयोग के गुण से तो विष भी अमृत बन जाता है ।’ तपन ने उत्तर दिया ।

तपती चुपचाप बैठी-बैठी साँच रही थी ‘कि—तपन ने कैसा उत्तर दिया था ? उसका मनोभाव कैसा है—यह जानने के लिये अधिक बातचीत करना चाहिये या नहीं ? वह वाली :

‘कई बार हम विष को भी अमृत मान लेते हैं ।’

‘विष को विषरूप जानने की शक्ति मनुष्य जन्मगत संस्कारों से प्राप्त करता है और शिक्षण द्वारा उसका अमृतरूप में उपयोग करने की शक्ति प्राप्त करता है ।’

माँ यह चर्चा सुन रही थी । उसने हँसकर कहा : ‘तो फिर विष और अमृत में अंतर कहाँ है बेटा ?’

‘मात्र उपयोग में,—इसके अतिरिक्त दूसरा कोई अंतर नहीं है, माँ ! इस विश्व के प्रत्येक अणु में विष और अमृत विद्यमान हैं । देश, काल, और पात्र के भेद से वह विष भी बन जाता है और अमृत भी ! जैसे नारी; कहीं विलास की ध्वंसमूर्ति तो कहीं कल्याण-मयी मातृमूर्ति !’

तपन खा चुका था; वह उठकर जाने लगा ।

तपती बोली : 'ध्वंसमूर्ति को कल्याणमूर्ति के रूप में गढ़ने का भार शिल्पी पर होता है ।'

'सच है, किन्तु शिल्पी की निष्ठुर टाँकी के आघात सहने के लिये मूर्ति को तैयार रहना पड़ता है !' कहकर तपन चला गया ।

तपन क्या कह गया ? क्या तपती को उसकी निष्ठुर टाँकी के आघात सहना होंगे ? अच्छा, वह सहने के लिये तैयार है । जो बात-बात में शब्दों का जादू कर सकता है और वह भी अत्यन्त सरल भाषा में; जो अतिगूँथ आन्तरिकता से कह सकता है कि 'मैं शिल्पी हूँ, मैं तुझ से प्यार करता हूँ; इसलिये अपनी निष्ठुर टाँकी के आघातों से तुझे सुन्दर बना दूँगा ।'—उसी को आत्म-समर्पण करके तपती कृतकृत्य हो जायेगी । भले आये वह रूपकार ! आघात पर आघात देकर तपती की सारी कुरूपता दूर कर दे, उसके समस्त शरीर—मन को अपरूप ऐश्वर्य से मढ़ दे ।

तपती की आँखों में मांती की दो बूँदे चमक उठीं । वह तुरन्त माँ के पास से चली आई । आश्चर्य ! ऐसा न होता तो माता-पिता क्यों उससे इतना स्नेह रखते ! उसने क्यों एक बार मुड़कर नहीं देखा ! किसलिये मित्रों के कहने में आकर उस सर्वश्रेष्ठ धन की अवहेलना की ?

वह तो कल ही मद्रास चला जायेगा ! आज शाम को उसे अवश्य पार्टी में ले जाऊँगी । सब देख लें कि तपती का पति अद्भुत, अपरूप था !

शाम को तपती प्रतीक्षा कर रही थी । तपन के आते ही उसे पास बिठाकर उसने गाड़ी चलाई । उसके चेहरे पर मुसकराहट खेल रही थी; आज उसका हृदय प्रेम-रक्तिमा से लाल हो गया था । मेज़वान ने उन्हें आदरपूर्वक बिठाया । तपन की समझ में न आया

कि उसे साथ लाने में तपती का क्या हेतु था ! क्या इतने दिनों बाद वह उससे प्रेम करने लगी थी ? नहीं; लोगों की टीका-टिप्पणी से बचने के लिये ही उसने यह सारा ढोंग रचा था । अपना प्रयोजन सिद्ध करने के लिये वह क्या नहीं कर सकती ? किन्तु इस समय उसका व्यवहार आन्तरिक है !—तपन सोचने लगा ।

एक युवती बोली : ‘आप तो निरामिष भोजन लेते हैं, इसलिये यहाँ असुविधा नहीं रहेगी ?’

‘जी नहीं; माँस का स्पर्श करने से मेरी जान नहीं चली जायेगी ।’

‘तो फिर खाते क्यों नहीं ? आप अंधश्रद्धालु तो मालूम नहीं होते !’

‘न खाने के अनेक कारण हैं । उनमें से एक वैज्ञानिक कारण यह है कि युगों तक अनाज और शाक-भाजी खाने के कारण मानव-उदर ने माँस पचाने की योग्यता गँवा दी है । किसी भी माँसभक्षी प्राणी के साथ मानव-उदर की तुलना करने से यह समझा जा सकता है ।’

‘और दूसरा कारण ?’

‘धरती पर फल-फूल और अनाज की कमी नहीं है; इसलिये माँस खाना निष्प्रयोजन है । मुख्यतः हमारे गर्म देश और आलसी जीवन में तो उसकी ज़रा भी आवश्यकता नहीं है ।’

‘लेकिन माँस शक्तिवर्धक है !’

‘यह मान्यता झूठी है । चीते की अपेक्षा घोड़े में अधिक शक्ति होती है । यदि घोड़े के पंजे होते तो वह चीते को हरा सकता था !—जबकि वह माँस नहीं खाता ।’

तपन का तर्क सुनकर सब मुग्ध हो गये । युवती बोली : ‘दूसरे कोई कारण हैं ?’

‘हाँ, उससे मन की सात्विकता नष्ट होती है । जो अपने मन

को मानव बनाना चाहते हों, उन्हें इस गर्म देश में मौसम न खाना ही उचित है। कदाचित् उससे पार्थिव विचारधारा में विकृति न आये, किन्तु परलोक का विचार करनेवाले व्यक्ति कम नहीं हैं।

चर्चा गम्भीर रूप धारण कर रही थी। विषय बदल देने के विचार से एक युवक बीच में बोल उठा : 'आप इतने दिनों तक हमारी सोसायटी में क्यों नहीं आये ? क्या डर लगता था ?'

यह अपराध तपती का था। उसने कभी तपन को साथ ले जाने की इच्छा प्रदर्शित नहीं की थी। वह तपन का उत्तर सुनने के लिये उत्सुक हो गई।

तपन ने हँसकर उत्तर दिया : 'अत्यन्त विचित्र लगने के कारण टेसू का फूल पलाश-वन में ही शोभा देता है, 'न्यू मार्केट' में काँच के शो-केस में नहीं !'

इन शब्दों में तपन की विनयशीलता के साथ तीक्ष्ण व्यंग्य का संमिश्रण था।

'हम काँच के शो-केस हैं ! आप हमारा अपमान कर रहे हैं ?' युवती बोली।

'इसी डर से नहीं आता था ! आपके मान और अपमान की दीवारें इतनी कच्ची होती हैं कि अन्दर जाने में भय मालूम होता है। बड़ी सावधानी से फोन करके बोलना पड़ता है—'चार दर्जन गुलाब, दो दर्जन क्रीसोस्थिमॉल, पाँच दर्जन कॉसमॉस...'

तपन के बोलने का ढँग देखकर सब हँस पड़े। किन्तु जिस युवती को अपमान लगा था, उसने कटाक्ष में कहा : 'तो हमें पलाश-वन में जाकर आपकी गर्दन पकड़कर लाना पड़ेगा, क्यों ?'

तपन मात्र हँसा।

युवती बोली : हम काँच के 'शो-केस' हैं—यह सिद्ध किये बिना आपको नहीं जाने देंगी !'

'न जाने दोगी तो काँई बात नहीं; कभी-कभी काँच के घर में

प्रवेश करने की भी इच्छा होती है !'

'तो आप प्रविष्ट हो गये, क्यों ?' युवती ने तपन को उलझन में डाल दिया।

'मुझे प्रविष्ट होने की अनुमति देकर ही आपने सिद्ध कर लिया है कि यह काँच का घर है !' कहकर तपन हँसा।

उस युवती को अपने बिछाये हुए जाल में स्वयं फँसा देखकर सब बोल उठों : 'जा री जा ! बात करना भी नहीं आता !'

युवती लज्जित होकर हँसने लगी। तपती का हृदय आनन्द से नाच रहा था। यह तपन ! उसका स्वामी ! जिसे कोई युवती बातचीत में नहीं हरा सकती थी !

इतने में मि. अधिकारी और मि. बोस आ पहुँचे। मि. बोस कटाक्ष करके बोले : 'पूजा के साथ पार्टी के मिश्रचर का क्या सम्बन्ध, तपनबाबू ?'

ज़रा भी हिचकिचाये बिना तपन ने उत्तर दिया : 'मुगलों के साथ बैठकर खाना...'

मि. बोस को पराजित होते देख मि. अधिकारी बोल उठे : 'चोटी के विषय में अपनी 'पांचाली' का कोई वर्णन सुनायेंगे, तपनबाबू ?'

तपन हँसकर बोलने लगा :

'चोटी के माहात्म्य का करता हूँ वर्णन,
सुन लो सभी चोटीहीन जन !
चोटी रखे उसकी हो जयजयकार,
चोटी बिना हारें जज-बैरिस्टर !
चोटी की महिमा कहे बेचारा तपन,
चोटी में बाँध लेना रमणी का मन !'

युवती-दल ने अट्टहास करके वातावरण गुंजित कर दिया।

मि अधिकारी और मि बोम कोष से पुरस्कारों हो गये। मि. बोम ने कहा :

‘इतने खुश क्यों होते हैं? अंग्रेजी में एक कहावत है—‘फूल्स रश इन, व्हेर एम्प्लस...’ कहकर मि. बोम चुप हो गये।

क्रोध के मारे तपती की आँखें सुलग उठीं। उसके पति को उसी के सामने मूर्ख कहने का साहस ! किन्तु तपन ने ही उत्तर दिया :

‘देवदूत अधिक सावधान होते हैं और उनका मार्ग होता है टेढ़ीमेढ़ी गल्लो में, जबकि मूर्खों का मार्ग होता है चौड़ा और सीधा; इसलिये अन्त में तो मूर्ख ही जीतते हैं ! विजयी न होने पर भी वे पीछे नहीं हटते; चतुर देवदूतों की भाँति लाभ-हानि का हिसाब करने की बुद्धि उनमें नहीं है !’

निर्भय तपन ने निःसंकोच अपने को मूर्ख मानकर ही जो उत्तर दिया, उससे युवतियाँ उसकी प्रशंसा किये बिना न रह सकीं। एक सन्नारी ने कहा : ‘आप मूर्ख ! तो फिर चतुर कौन ?’

‘जिनका ‘लक’ चाय, चॉकलेट और चॉप खाकर विकसित हो उठता है, वे !’

इन शब्दों में जो कटाक्ष था, उसका तपती पर भी प्रभाव हुआ। मि. अधिकारी खड़े होकर बोले : ‘अब आप हमें चाय, चॉप खाने मत बुलाना, तपती देवी ! इनसे सहन नहीं होता—यह स्पष्ट है।’

तपती अत्यन्त लज्जित होकर बोली : ‘मैं शर्मिन्दा हूँ मि. अधिकारी ! इसके लिये मैं आपसे माफी माँगती हूँ।’ कहकर तपती ने हाथ जोड़े। माफी कोई अमूल्य वस्तु प्राप्त हुई हो, इसप्रकार तपन भी हाथ जोड़कर और हँसकर बोले उठा : ‘मैं भी माफी

चाहता हूँ, मि. अधिकारी ! किन्तु रसिकता द्वारा आघात करने समय प्रतिघात के लिये भी तैयार रहना चाहिये—यह बात मुख जैसे मुखों के शब्दकंष में लिखी है । और मैंने इतना ही सिद्ध किया है कि कभी-कभी मुख असुर विजय प्राप्त कर लेते हैं; तथापि स्वर्ग तो देवताओं के ही हाथ में आता है; क्योंकि मुख असुर उसको रक्षा नहीं सकते;—यह बात जानते हुए भी वे हाथ बढ़ाते हैं—मुख हैं इसलिये न ! स्वर्ग तो देवताओं की ही प्रतीक्षा करता करता है !'

मि. बोस और मि. अधिकारी तपती की सहानुभूति पाकर खुश हो गये थे । तपन कद रहा था : 'आज मेरा जानबूझकर किया हुआ अपराध क्षमा नहीं करेंगे, तो भी विजय आपकी ही है !'

तपन क्या कहना चाहता है—वह न समझ पाने से मि. अधिकारी और बोस उसका मुँह ताकने लगे । किन्तु तपती चंचल हो उठी । वह क्यों सहानुभूति दिखाने गई ? मि. अधिकारी और बोस गुस्सा हो जाते तो उसका क्या बिगड़ जाता ! कुछ कहना चाहिये ऐसा सोचकर वह बोली : 'खाने के विषय में कटाक्ष करना अन्याय है !'

तपन बोला : 'मैं नहीं मानता था कि चाय-चौप खानेवालों को चतुर और 'लकी' (भाग्यवान) कहने में कटाक्ष होगा !'

'सम्भव है किसी दूसरी जगह उसे दोष न माना जाये, किन्तु यहाँ तो अभद्र मालूम होता है ।'

तपन ने निर्विकार चित्त से तपती के उत्तर में मि. अधिकारी से कहा : 'भद्र तो मैं हूँ नहीं मि. अधिकारी, और बुद्धि भी नहीं है ! मेरी बात को आपकी सद्बुद्धि हँसकर ही उड़ा सकती थी !'

एक युवती बोल उठी : 'रियली ! रसिकता की बातें करते समय क्रोध करना शोभा नहीं देता । आपके मुख कहने पर भी

इन्होंने किनना नज़र डलार दिया था ! ऐसा कुछ नहीं कहा था तबसे आपको कोश आ जाये ।'

मि. अधिकारी को लगा कि गुम्मा हो जाने में उन्होंने भूल की थी। वे बोले : 'याप से ऐसा कहा होता तो आप क्या करते ?'

'अपनी मूल बुद्धि के अनुसार 'चाय' और 'चाप' अधिक लाकर 'लकी' बन जाता !' तपन ने उत्तर दिया ।

उसके चेहरे के भाव देखकर सब हँस पड़े ! मि. बोस ने कहा : 'अच्छा, जाने दो—आओ, एक कप चाय ही पी लें !'

एक युवती बोली : 'तो क्या सचमुच आप चतुर बनना चाहते हैं ?'

मि. अधिकारी ने गंभीर मुद्रा में कहा : 'दे दो थोड़ी-सी, लेकिन अभी पीकर बैठो !'

तपन हँसकर बोला : 'लेकिन' या 'थोड़ी-सी' नहीं मि. अधिकारी ! 'अधिक' ही हमेशा आराम देती है; जैसे कि—चश्मे पर सन-गोगल्स, डाढ़ी के नीचे नकटाई, कुरते के ऊपर शाल... और चाय पर चन्द्रमुख.....'

सब हँस पड़े। मि. अधिकारी भी अपनी हँसी न रोक सके। हँसकर बोले : 'रियल ! भाषा पर आपका अच्छा अधिकार है !'

मि. बोस ने कहा : 'लेकिन यह हमारे मित्र नहीं बनना चाहते; सो सॉरी !'

'सर्टनलि ही विल बी ! तो हम इन्हें नहीं छोड़ेंगे !' मि. अधिकारी ने कहा ।

तपन चुपचाप चाय पी रहा था। चाहता तो इस कठिन परिस्थिति से छूट सकता था; किन्तु वह समझ गया था कि तपती के मन पर उन लोगों का पूरा प्रभाव है; उनका किंचित् भी अपमान वह नहीं सह सकती ! और तपन का ?

‘अब मैं जाना चाहता हूँ, कृपया मुझे आज्ञा दें !’ तपन ने कहा ।
‘नहीं, नहीं ! आपकी बातें बड़ी मीठी लगती हैं, इतनी जल्दी चले जायेंगे ?’ एक युवती धोल उठी ।

युवतियाँ तपन को नहीं छोड़ना चाहती थीं। मि. बोस और अधिकारी को ईर्ष्या हो आई। उन्हें लगा कि उनका अनादर करके ही उसने युवतियों को आकर्षित किया था। मि. बोस बोले : ‘सुना है—किसी के कहने से इनकी नीति में परिवर्तन नहीं होता, इसलिये निवेदन करना व्यर्थ है !’

मि. अधिकारी ने भी हाँ में हाँ मिलाई : ‘और कोई जरूरी काम होगा !’

कुछ युवतियाँ गुस्से में आकर बोल उठीं : ‘आप लोग चाहते हैं कि यह चले जायें ?’

मि. बोस और अधिकारी चुप हो गये। तपन ने वातावरण शांत रखने के लिये कहा : ‘नहीं नहीं, हमें काम है, अब हम जाते हैं !’

‘तू चुप रह, तपी ! इन्हें आज तक क्यों छिपा रखा था ?’ एक सहेली ने उलहने के स्वर में कहा ।

तपती कुछ उत्तर दे उससे पहले ही तपन हँसकर बोला : ‘गुप्त धन को प्रगट कर देना मूर्खता है; फेंका न जा सके तो छिपा रखना ही अच्छा !’

कहकर वह खड़ा हो गया। तपती के अन्तर में वेदना के स्वर गूँज रहे थे। तपन को उसने गुप्त धन ही माना था ?—बार-बार हथौड़ी से प्रहार किये थे, किन्तु नाखून से ठनकाकर एक बार भी विश्वास नहीं कर देखा !

गाड़ी में बैठने के बाद तपन एक शब्द भी न बोला । तपती का मन विषाद से भर गया था। उसने किसलिये मि. बोस

के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित की ? उसे विश्वास हो गया कि तपन में चाहे जैसी परिस्थिति को अनुकूल बना लेने की असाधारण शक्ति थी। उसने स्वयं ही सब संभाल लिया। हँसी-हँसी में क्रोध आ जाने से मि. अधिकारी को लज्जित होना पड़ा। लेकिन तपती के सम्बन्ध में उसकी क्या धारणा थी ? शायद सोचता होगा कि वह उसे आज भी अभद्र ही कहती है ! अब भी इन सब का असम्मान नहीं सह सकती ! तपती को सिर पटककर मरने की इच्छा हो आई, किन्तु उपाय नहीं था।

कम्पाउन्ड में गाड़ी रखकर तपन फिर बाहर चला गया।

जब हृदय में सच्चा प्रेम जागृत हो उठता है, उससमय बहुत कुछ कहने की इच्छा होने पर भी बोला नहीं जा सकता। तपती रातभर जागती रही, किन्तु तपन से कुछ कह न सकी ! उसने कई बार सोचा : पासवाले कमरे में ही तपन सो रहा है ! वह जाकर बुला सकती है, किन्तु लज्जा ने पाँव पकड़ लिये थे। इतना महाभारत करने के बाद आज वह किसप्रकार उससे प्रेम की बात कहेगी ! पिंजड़े में बन्द पंखी की भाँति उसका अंतर रो रहा था। वह तपन के समक्ष अपना हृदय खोल देने का मार्ग नहीं ढूँढ़ पाती थी। तपन ने उसे दुस्कार दिया तो ? कहेगा : किसलिये छल करने आई है ? तपती वह अपमान भी सहन कर सकती थी। किन्तु तपन कुछ न बोला, चुपचाप सुनकर निर्लिस की भाँति चला गया तो ? कुछ भी हो, तपती ने एक बार प्रयास करने का निश्चय किया। उसे लगा कि रात को जगाने की आवश्यकता नहीं है, सवेरे वह सब-कुछ कह देगी।

प्रातःकाल स्नानादि से निवृत्त होकर तपती रसोई-गृह में जा पहुँची। माँ तो पहले ही आ गई थी। तपन के लिये जल्दी भोजन बनाना था।

‘कल पार्टी में तपन को देखकर लोगों ने क्या कहा, बेटी ?’ माँने पूछा।

तपती ने लज्जा के साथ मुसकराकर कहा : ‘सब लोग बहुत खुश हुए, माँ !’

माँ हँसकर बोली : 'मैं तो पहले ही कहती थी बेटी ! अब देखना !'

तपती कुछ न बोली; प्रसन्न होकर पूरियाँ बेलने लगी। इतने में तपन आ पहुँचा। माँ को खबर नहीं थी कि इतनी जल्दी आ जायेगा। वह बोली : 'आठ की गाड़ी में जायेगा न बेटा ? इतनी जल्दी क्यों करता है—अभी तो छह बजे हैं !'

'सात बजे निकल जाऊँगा माँ ! खाने-पीने और कपड़े बदलने में एक घंटा तो लगेगा ही ! खाना दो !'

तपन भोजन करने बैठा। उसके ललाट की त्रिपुण्ड रेखा में आज रक्तचंदन की आभा थी; स्वच्छ धोती-कुरता और कंधे पर उत्तरीय था। तपती विमुग्ध होकर वह असाधारण पवित्रता देखती रही।

तपन को चुप देखकर माँ ने कहा : 'पहुँचते ही पत्र लिखना बेटा ! भूल मत जाना !'

'नहीं माँ, पहुँचते ही पत्र लिख दूँगा।'

'तभी, तू स्टेशन जा रही है न बेटी ?'

'नहीं माँ, इन्हें तकलीफ उठाने की क्या जरूरत है ? लौटने में यों ही देर हो जायेगी। मैं तो टेक्सी में जा रहा हूँ—घर की गाड़ी नहीं लेता.....' कहकर वह खाने लगा।

तपती बोल न सकी।

वह कुछ बोलेली यह सोचकर माँ चुप रही। तपन चुपचाप खाकर चला गया। माँ ने तपती को खाने बिठा दिया और याद आते ही पूछा : 'सूटकेस जमा दिया है न ?'

दाहण मानसिक उत्तेजना में तपती वह भूल ही गई थी।

'जाती हूँ.....' कहकर तपती ने जल्दी खाना खाया और तपन के कमरे में पहुँची। तपन उससमय सूटकेस का ताल लगा

रहा था। एक नौकर ने उसके जूतों की डोरी बाँध दी; दूसरा सूटकेस लेकर गाड़ी में रखने चला गया। बाहर निकलते समय उसने सामने तपती को खड़ा देखा। 'अच्छा, जाता हूँ, नमस्कार !' कहकर माँ को प्रणाम करने चला गया और फिर मि. चटर्जी को प्रणाम करके नीचे उतर गया।

विचारमग्न तपती दौड़ती हुई नीचे आई, किन्तु गाड़ी चली गई थी।

कुछ भी न कह सकी ! नहीं, नहीं, कहना ही पड़ेगा। तपती तुरन्त दूसरी गाड़ी लेकर स्टेशन पहुँची। गाड़ी छूटने में कुछ मिनटों को देर थी। वह दौड़ती-दौड़ती प्लेटफार्म पर पहुँची और देखा तो तपन अपनी बहिन का हाथ पकड़े खड़ा था। क्षणभर के लिये वह ठिठक गई, किन्तु फिर सारी दुर्बलता हटाकर तपन के पास आ खड़ी हुई। वह युवती फूट-फूटकर रो रही थी। तपन कह रहा था : 'प्यारी बहिन, इसतरह नहीं रोंते ! जाओ, पति के पास जाओ ! पति से महान वस्तु नारी-जीवन में एक भी नहीं है;—यह बात मैं तुम्हें सदैव सिखलाता रहा हूँ अरे ! इसे सँभालो !' एक सुन्दर युवक आगे आया, किन्तु उस युवती ने तपन को न छोड़ा और ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी। तपन ने उसके सिर पर हाथ रखकर कहा : 'छि; मीरा ! आज तक की मेरी सारी शिश्ता तुम धूल में मिला दोगी ? धैर्य रखो, मैं कुछ ही दिनों में आकर तुम से मिलूँगा, बहिन ! माँ वसुन्धरा जैसी सहिष्णु, आकाश की भाँति उदार और सूर्यप्रकाश के समान पवित्र बनना !'

गाड़ी न मोटी दी; तपन डिब्बे में जा बैठा। आँसुओं के कारण कुछ दिखाई नहीं देता था, फिर भी मीरा सरकती हुई गाड़ी की ओर देख रही थी। किसी को ध्यान ही नहीं था कि तपती इतने निकट खड़ी है ! तपन ने उस ओर देखा ही नहीं; और उस

युवती को तो वह पहिचानती ही न थी। लेकिन वह क्यों इतनी रो रही है ? मद्रास जा रहा है तो थोड़े ही दिनों में लौट आयेगा — इस में इतने रोने की क्या बात थी ? तपती व्याकुल हो उठी। इस रुदन का क्या कारण होगा ? धीरे-धीरे वह आगे बढ़ी और सहानुभूति प्रदर्शित करने के लिये मीरा का हाथ पकड़ने लगी। मीरा ने चौंककर देखा तो तपती ! बोली : 'अरे, मुझे छूते हुए शर्म नहीं आती ?' और झटक-से हाथ खींच लिया।

उसके पति ने कहा : 'छिः छिः ऐसा नहीं कहते !'

मीरा क्रोध के मारे गरज उठी : 'चप्पलों से मुँह तोड़ दूँगी ! मेरे दादा को देशनिकाला दे दिया, और प्रेम की अँगूठी पहिनकर विदा करने आई है ! चलो जल्दी, इसका मुँह देखने से भी गंगा में नहाना पड़ेगा !'

मीरा तुरन्त पति का हाथ पकड़कर चली गई।

जो बात कभी किसी ने नहीं कही थी, जिमकी तपती ने कल्पना भी नहीं की थी, वह मीरा कह गई ! तपती का सारा अहंकार, समस्त आभिजात्य धूल में मिल गया। 'प्रेमी की अँगूठी पहिनकर.....' तपती काँप उठी; उसने अपने बाँये हाथ की उँगली पर दृष्टि डाली। मि. अधिकारी की दी हुई अँगूठी का हीरा दहकते अंगारे की भाँति जगमगा रहा था ! अनजाने ही उसने अँगूठी उतार ली।

तपन ने जो आज तक नहीं कहा था, वह मीरा सहज में ही कह गई ! पिछले पाँच-छह महीने से तपती वह अँगूठी पहिन रही थी। उसके उन चारित्र्य-विरोधी ज्वलंत, जागृत प्रमाणों को लुप्त करने की शक्ति किसी में नहीं थी।

निराश तपती ग्लान मुँह लिये गाड़ी में आकर बैठ गई।

‘उ’ नकी बहिन का पता तुम्हे मालूम है, माँ?’ तपती ने माँ से पूछा।

‘ना, तू नहीं जानती? तूने उसे नहीं देखा?’ माँ ने प्रश्न किया।

‘उस दिन स्टेशन पर देखा था, किन्तु पता पूछूँ उससे पहले ही वह चली गई!’

‘बहुत बुरा हुआ! एक बार तुम्हें उससे मिलना चाहिये था।’

‘उससमय तो तूने नहीं कहा माँ! आज कहती है बुरा हुआ!’ तपती ने कर्ण स्वर में कहा।

पति-विरह-विधुरा पुत्री की बात सुनकर माँ ने स्नेह से कहा : ‘तपन के लौटने पर एक दिन हो आना बेटी! आज तेरे लिये उसका पत्र जरूर आयेगा!’

उदास तपती शुष्क मुँह लिये चली गई। उसे पत्र मिलेगा? इतना महान सौभाग्य उसे आज तक प्राप्त नहीं हुआ था। पिछले सात दिन तक तपती ने तपन का ध्यान किया था; किन्तु अब बहुत विलम्ब हो गया था; सिर्फ विलम्ब हुआ होता, तो भी कोई बात नहीं थी; किन्तु उसके अहंकार ने तपन का हृदय विदीर्ण कर दिया था—विच्छिन्न कर दिया था। तपती के शरीर से आज उसका अन्त-रात्मा प्रयाण कर गया था।

उसे पुण्यश्लोक दादाजी का स्मरण हो आया। मानो वे कह रहे थे—‘मेरी सारी शिखा धूल में मिला दी, बेटी!’

लेकिन वह क्यों ऐसा सोच रही थी ? तपन तो थोड़े ही दिनों में लौट आयेगा। मीरा ने अवश्य उससे कटु शब्द कहे थे, किन्तु तपन आज तक नहीं बोला ! जिस दिन मि. बनर्जी की गोद में सिर रखकर तपन से मुक्त माँगी थी, उस दिन—हाँ, उस दिन वह असह्य वेदना से तड़प उठा था।

समय की गति मानो रुक गई थी। तपती आतुरतापूर्वक पत्र की प्रतीक्षा करने लगी। वह जानती थी कि तपन उसे पत्र नहीं लिखेगा; फिर भी उसे माँ का पत्र पढ़ने की लालसा थी; कदाचित् उम में कुछ लिखा हो। इतना लम्बा सफर, इन्टरक्लास की मुसाफिरी—आराम से पहुँच जाये तो अच्छा !

माँ ने आवाज़ दी : 'आ बेटी ! तपन का पत्र आया है; पढ़कर सुना तो दे !'

तपती पत्र पढ़ने लगी—

‘प्यारी माँ !

तुम्हारे आशीर्वाद से सकुशल आ गया हूँ। समुद्र के किनारे उतरा हूँ, किन्तु यहाँ से कल ही जाना पड़ेगा। कल रात सागर का अविराम गर्जन सुना। ऐसा लगता है मानो दुहिता भारत की दुर्दशा से विचलित हुए महासिंधु का आर्तनाद कभी शांत नहीं होगा ! शेष फिर.....मेरे कोटि-कोटि प्रणाम स्वीकार करना।

रूपाकांक्षी—

तपन।’

मात्र थोड़ी-सी पंक्तियाँ ! किन्तु तपती को लगा कि दुहिता भारत की दुर्दशा से कोई हृदय-सागर क्रंदन कर रहा था। माँ को पत्र देकर तपती अपने कमरे में पहुँची और बिस्तर पर लुढ़क गई।

शाम को नौकरानी ने आकर कहा कि मि. बनर्जी, बोस और

अधिकारी आदि आये थे। तपती ने कहला दिया—वह नहीं आ सकती। माँ ने पुत्री का चित्त दूसरी ओर लगाने के लिये कहा : 'जा बेटी ! थोड़ी देर बातचीत कर !'

तपती तुनककर बोल उठी : 'नहीं जाऊँगी, जा !'

उसके मन की अस्वस्थता समझकर माँ चुपचाप चली गई। वह सोचने लगी : 'जो रात-दिन हँसने-खेलने में व्यस्त रहती थी, वही तपती पति-विरह से चूर-चूर हो गई है !'

उसे आनन्द हुआ, हँसी भी आ गई। तपन ने उसे अलग पत्र नहीं लिखा, इसलिये बुरा लगा होगा ! बड़ी मिजाज़ी लड़की है ! वह क्यों नहीं समझती कि तपन कार्य में व्यस्त था !

किन्तु एक के बाद एक दिन बीतने लगे। पन्द्रह दिन हो जाने पर भी न तो माँ के लिये पत्र आया और न तपती के लिये ! माँ भी चिन्ता करने लगी। पति से पूछने पर ज्ञात हुआ कि उनके पास भी तपन का कोई पत्र नहीं आया था। उसने तपती को बुलाकर पूछा : 'तुझ से क्या कह गया, बेटी ?'

'दो महीने लगेंगे !' तपती ने धीमे स्वर में उत्तर दिया।

माँ ने उसके चेहरे की ओर देखा। तपती अत्यन्त अस्थिर हो गई थी। पुत्री को कष्ट हाँते देख माँ ने अधिक पूछना ठीक न समझा।

किन्तु तपती को मीरा के शब्द याद आ रहे थे—'मेरे भाई को देशनिकाला दिया !' क्या सचमुच वह लौटकर नहीं आयेगा ? इसी लिये मीरा इतना रो रही थी ! कदाचित् ऐसा भी हो सकता है कि वह तपती को सदैव के लिये मुक्त करके चला गया हो !

तपती अधिक विचार न कर सकी। मि. बोस, मि. सन्याल, मि. अधिकारी आदि—जिनका उसने तपन का अपमान करने में शस्त्ररूप से उपयोग किया था—सब उसी की विचार-श्रृंखला पकड़े खड़े थे।

जिन्होंने ने तपन को बार-बार निर्लज्ज और मूर्ख कहा था, वे आज तिरस्कृत होने पर भी तपती के पास दौड़े आते थे। जिसकी बातों में अद्भुत जादू और विनय में युग-संचित संस्कार झलक उठते थे; जो सारे अपमानों को नीलकण्ठ की भाँति आत्मसात् करके अमृतवर्षा करता था,—उस ऋषितुल्य स्वामी तपन का उसने इन कुत्तों द्वारा अपमान कराया था !

वेदना से तपती का हृदय हाहाकार कर उठा। लेकिन वह क्या कर सकती थी? तपन ने अपना पता भी न लिखा ! उसकी बहिन का पता भी मालूम नहीं था ! तपती की आँखों के आगे अंधेरा छा गया।

मि चटर्जी ने आकर कहा : 'अरे सुनती हो, अपने दामाद की करतूत तो देखो !'

तपती आतुर हो गई।

माँ ने पूछा : 'खबर आई है ?'

'ना; तपी के पास पत्र नहीं आया ?' मि. चटर्जी उद्विग्न हो उठे।

'ना !' कहकर तपती की माँ ने एक गहरी साँस छोड़ी और पूछा : 'बात क्या है ?'

'ऑफिस का एक क्लर्क तीन-चार महीने से बीमार था। तपन ने उसे अस्पताल में भर्ती करा दिया था। आज वह आकर मेरे पैरों में लोट गया और बोला कि उसे 'एनेमिक' हो गया था। तपन ने अपना खून देकर उसकी जान बचा ली !'

'खून ?' तपती काँप उठी।

'हाँ, तुम्हें मालूम नहीं है ! और ऐसे रोगियों को खून देने के लिए उसने अस्पताल में रुपये भी दिये हैं। यह सब उन्हीं दो लाख रुपयों से किया होगा। मुझ से कह गया था : 'अच्छे कामों में ही लगाऊँगा, पिताजी !'

दो लाख किसलिये, वह दस लाख खर्च कर दे, लेकिन अपना खून क्यों दिया ? यह काम उसने कब किया ? तपती का अन्तर वेदना से छलक उठा। कारुण्य के शीतल स्रोत में स्नान करके उसका अन्तर आज स्वच्छ बन गया था।

बहुत देर तक अकेली बैठी रहने के बाद माँ के पास जाकर बोली : 'उनके कमरे की चाबी तो दे, माँ !'

माँ ने चाबी दे दी। तपती ने कमरा खोलकर देखा तो एक छोटी-सी मेज़ पर पेपरवेट के नीचे एक पत्र दबा था। तपती पत्र लेकर पढ़ने लगी—

'अपने विदा-अश्रु छोड़े जाता हूँ, नमस्कार !'

तपती को लगा कि वह बेहोश होकर गिर पड़ेगी। अपने को संभाल लेने के लिये वह धब-से तपन की कुर्पी पर ही बैठ गई और सिर मेज़ पर रख दिया।

माँ के बुलाने पर उसकी विचार-तंद्रा टूटी। माँ ने अन्दर आकर स्नेहपूर्ण उलहने के स्वर में कहा : 'क्या कर रही है बेटी ? परदेश तो सब के घरवाले जाते हैं, लेकिन इसतरह कोई रोने नहीं बैठता ! चल, खाना खा ले।'

'रोती नहीं हूँ माँ, तू जा—मैं आती हूँ !'

तपती का कण्ठस्वर सुनकर माँ डर गई। उसने पूछा : 'ऐसा क्यों कहती है, बेटी ? पत्र न आने पर रोने बैठता होगा ?'

'दादाजी ने मुझे धाखा नहीं दिया माँ, धोखा नहीं दिया !' कहकर दौड़ती हुई वह पितामहके विशाल तैलचित्रके सामने गिर पड़ी।

विस्मयविमूढ़ माँ कुछ समझ न सकी। वह चुनचाप खड़ी रही। स्नेहमय पिता ने दौड़कर तपती को संभाला और प्रश्नों की झड़ी लगा दी। तपती के मुँह से सिर्फ एक ही वाक्य निकला—

'अब वे नहीं आयेंगे माँ ! नहीं आयेंगे !'

दो महीने बीत गये, फिर भी न आया तपन और न आया उसका पत्र ! प्रतीक्षा करते-करते तपती का चेहरा कुम्हला गया । उसने तपन की आशा छोड़ दी थी । मि. चटर्जी भी निराश हो गये थे, किन्तु माँ की आशा नहीं टूटी । उसे विश्वास था कि तपन अवश्य आयेगा । जिसका हृदय इतना कोमल हो, वह किस तरह अपनी विवाहिता पत्नी का त्याग कर सकता है ? वह अवश्य लौटेगा । कदाचित् किसी कार्यवश रुक गया होगा या अस्वस्थ होगा...कदाचित्...नहीं, माँ इससे आगे नहीं सोच सकती थी ।

तपती से पूछना व्यर्थ था । उसने रोना भी छोड़ दिया था । मात्र उदास नयनों से मैदान की ओर देखती रहती । पिता ने एक दिन उसे बुलाकर कहा : 'चल बेटी, पूजा की छुट्टियों में शिलोंग हो आयेँ, तूने अभी नया बँगला नहीं देखा !'

तपती इसतरह चौंक उठी जैसे बिजली का झटका लगा हो । उस बँगले में तो उनकी सुहागरात्रि होनेवाली थी ! निष्ठुर विधि की कैसी विचित्रता !

बुद्धिमती तपती समझ गई थी कि उसने माता-पिता के हृदय को भीषण आघात पहुँचाया था । तपन नहीं जाता—तपती ने ही उसे निकाल दिया था—यह बात वह कैसे कहे ? सैकड़ों बार अपमान सहन करने पर भी वह नहीं गया था, निरुपय होकर ही उसने

गृहत्याग किया था ! लेकिन जिस दिन गया उस दिन तो तपती ने उसकी कामना की थी ! तरन जैसा अद्भुत बुद्धिशाली यह बात क्यों नहीं समझ सका ?

तपती की चिन्ता का पार न था । कॉलेज से आकर वह सीधी कमरे में चली जाती, सिर्फ खाने के समय बाहर निकलती थी । घूमना भी उसने बन्द कर दिया था । एक दिन माँ उसे जबरन तालाब पर घूमने ले गई । तपती किनारे जाकर बैठी कि उसी समय किसी के हँसने की आवाज़ आई । चौंकर देखा तो थोड़ी दूरी पर शिखा और मीरा एक बेंच पर बैठी थीं । तपती ने ध्यान से देखा तो वह मीरा ही थी । उसने माँ से कहा : 'जो शिखा के पास बैठी है वही उनकी बहिन !' माँ बोली : 'चल, जल्दी चल...' कहकर वह तपती को खींचने लगी । किन्तु तपती को डर लग रहा था । कदाचित् माँ की उपस्थिति में ही मीरा ने उसका अपमान कर दिया तो ? करेगी ही ! तपती जाना नहीं चाहती थी, फिर भी माँ उसे घसीट ले गई । धीरे-धीरे पास पहुँचकर उसने करुण स्वर में कहा : 'शिखा !'

दोनों चौंक उठीं । शिखा सिर झुकाकर बोली : 'आ, बैठ !' किन्तु मीरा उठकर चलने लगी ।

माँ बोली : 'तू ही तपन की बहिन है ? अपने दादा के कुछ समाचार...'

'तुम्हें उनसे क्या मतलब ? लड़की का पुनर्विवाह कर दो ! कहोगी उसी दिन आकर दादा मुक्ति-पत्र रजिस्टर्ड कर देंगे !'

माँ मानो आकाश से धरती पर गिर पड़ी . 'क्या कहा बेटी ? क्या कहती है ।'

मीरा खिलखिलाकर हँस पड़ी और बोली : 'आपकी खिल्लाड़ी बेटी ने आप से कुछ नहीं कहा ? अच्छी बात है, मैं ही सब कह देती हूँ । आपकी पुत्री ने मेरे दादा से मुक्ति माँग ली है—स्थिर

चित्त से—जिसे कहते हैं—‘कूल घने’—होश ठिकाने रखकर ! दादा ने उसे सात महीने तक सोचने का मौका दिया था। उस अरसे में आपकी सुलझणा पुत्री ने मेरे देवतुल्य दादा का अपमान किया, मित्रों से कराया, और अन्त में एक मित्र की गोद में सिर रखकर उनसे मुक्ति माँग ली। अब आप उस मित्र को या दूसरा कोई पसन्द आये तो उसे अपना दामाद बना सकती हैं !’ कहकर कुछ दूर चली गई। शिखा टकटकी लगाये तपती की ओर देख रही थी। उसका चेहरा रुई जैसा सफेद हो गया था। परिस्थिति समझने में माँ को कुछ देर अवश्य लगी, किन्तु तपती के पिछले दो महीनों के आचरण से वह आश्चर्यचकित हो गई।

‘तपी !’ माँ चिल्ला उठी।

तपती चुप रही।

‘तुम्हें यह दुर्बुद्धि कहाँ से सूझी ? बोल, जवाब दे !’

तपती काँप रही थी; शिखा ने उसे पकड़ लिया। बावरी माँ मीरा को पकड़कर बोली : ‘तेरे दादा आ गये बेटी ?’

‘नहीं, आने में अभी देर है। लेकिन अब उनसे आपका क्या वास्ता ? मेरे दादा आपको पुत्री के योग्य नहीं हैं, कोई अच्छा दामाद ढूँढ़ लो !’

माँ हतबुद्धि की भाँति खड़ी रही। उसकी समझ में न आया कि वह मीरा से क्या कहे ! अत्यन्त सावधानी से बोली : ‘माँगने से मुक्ति नहीं मिलती बेटी ! हमने तो इस तपन के हाथ में सौंपा है, यह नादान है...’

मीरा हँस पड़ी और बोली : ‘नादान ! अच्छा माँ, अपनी लाड़ली से पछ देखो कि आधी रात को ‘बेसानोवा’ में बैठकर एक मित्र के साथ धर्मपरिवर्तन करने में कौन-सी नादानी थी ?’

तपती सौम्य रोककर मीरा की बात सुन रही थी; वह रोषभरे स्वर में बोल उठी : ‘झूठा बात !’

‘चुप रह शैतान ! आजन्म सत्यसिद्ध तपन की बहिन मीरा कभी झूठ नहीं बोल सकती । डायरी में भी लिख रखा है; तुम दोनों का फोटू भी खींचा गया था । अधिक प्रमाण चाहिये हैं ?’

माँ समझ गई कि तपती मीमा के बाहर निकल गई थी । तपती करुण स्वर में बोली : ‘वह प्लान मेरा नहीं था; मि. बनर्जी ने एक दिन.....’

‘ठीक है, अब जो कुछ करना हो आज्ञादी से कर !’ कहकर मीरा कुछ दूर चली गई । माँ मीरा को एक बार मि. चटर्जी के पास ले जाना चाहती थी; इसलिये उसका हाथ पकड़कर बोली :

‘एक बार मेरे साथ घर चल बेटी ! इसके पिता को सारी बात सुना ।’

‘इसकी कोई आवश्यकता नहीं है माँ, आप चाहे जिसके साथ अपनी पुत्री का विवाह कर सकती हैं ।’

‘हिन्दू लड़की का विवाह दो बार होता है बेटी ?’

‘होता है ! आपको हिन्दूत्व से क्या वास्ता ? हिन्दू, ख्रिस्ती, मुसलमान—इनमें से आप कोई नहीं है.....’

‘एक बार नहीं चलेगी, बेटी ? चल बहिन !’

‘माफ कीजिये, मैं नहीं आ सकती । जिस घर में मेरे दादा का अनादर हुआ, उसकी परछाई में भी खड़ी नहीं रह सकती !’

‘तो क्या तेरे दादा लौटकर नहीं आयेंगे ?’

‘मेरे दादा धन के लोभी नहीं हैं । और अब आपका उनसे क्या सम्बन्ध ?’

तपती क्रोध से अंधी हो गई । उसे यह आडम्बर असह्य मालूम हुआ । वह बोल उठी : ‘तो फिर उन दो लाख का क्या ? वे लेते समय विचार नहीं आया !’

हँसते हँसते मीरा के पेट में बल पड़ गये; वह बोली : ‘वे दो लाख आपके पुनर्विवाह में भेंट दे जाऊँगी !’

शिखा ग्लान स्वर में बोली : 'झि: तपी, रुपयों की बात करते तुम्हें शर्म नहीं आती ?'

मीरा गाड़ी में बैठ गई। उसने आवाज़ दी : 'चल शिखा !' शिखा भी जाने लगी। माँ ने दौड़कर तपती से कहा : 'तू एक बार बुला बेटी !'

चाबी दिये हुए पुतले की भाँति तपती ने मीरा का हाथ पकड़ लिया और बोली : 'एक बार हमारे घर चलो ..'

मीरा क्रोध से गरज उठी : 'छोड़ दो मेरा हाथ ! तुम्हें छुना भी पाप है !'

तपती सिर से पाँव तक सुलग उठी। उसने ऐसा क्या कर डाला जिससे उसे छूने में भी पाप था ?

'जाओ, जाओ ! तुम्हारे दादा नहीं आयेंगे तो भी मैं रह लूँगी !' हताश होकर तपती ने कहा।

मोटर का स्टियरिंग पकड़कर मीरा अत्यन्त शांत स्वर में बोली : 'इसी तरह रहना ! मैं आशीर्वाद देती हूँ।'

मीरा उसे आशीर्वाद देकर जा रही थी ! उसका शांत कण्ठ-स्वर तपती पर असर कर गया। अत्यन्त तीक्ष्ण स्वभाव की उस युवती ने उसे इतनी सरलता से आशीर्वाद दे दिया ! उसने फिर मीरा का हाथ पकड़कर कहा : 'एक बार भी नहीं आओगी ?'

हाथ छुड़ाकर गाड़ी चलाते हुए मीरा बोली : 'ना, अभी समय नहीं आया ! जब आयेगा उस दिन आऊँगी तुम्हारे कुंज में !'

शिखा और मीरा एक ही गाड़ी में बैठकर चली गईं। माँ को तपती से बोलने की इच्छा नहीं होती थी। वह कितना भयंकर कार्य कर बैठी थी ! तपती गाड़ी में जाकर बैठ गई। माँ समझ गई कि अब वह नहीं बोलेंगी। वह भी हतबुद्धि होकर गाड़ी में जा बैठी।

जाते-जाते शिखा ने मीरा से कहा : 'तपती तो बिलकुल बदल गई है मीरा, कितनी दुबली हो गई !'

'ज़रा भी नहीं बदली, तुझे मालूम नहीं ! वह इसतरह जल्दी नहीं बदल सकती !'

'लेकिन सचमुच बदल जाये, तो दादा उसका स्वीकार कर लेंगे ?'

'नहीं, यह कभी नहीं हो सकता; वह किसी दूसरे से विवाह कर ले यही अच्छा है !'

शिखा थोड़ी देर चुप रहकर बोली :

'दादा ने जो नील-गुलाब उगाये हैं और जिस के लिये उन्हें प्रदर्शन में प्रथम पुरस्कार मिला है, उसका नाम नील-गुलाब क्यों रखा, जानती है ?'

'ना, यह तो मालूम नहीं !' मीरा बोली ।

'तपती की माँका नाम नीला है, उनका नाम दादाने अमर कर दिया !'

'ऐसा ! एक दिन दादा कहते थे—'साम का ऋण किस प्रकार चुकाऊँ मीरा ?' इसलिये खेती शुरू की होगी !'

दोनों फिर चुप हो गईं । थोड़ी देर में मीरा बोली : 'पुरस्कार के रुपये दादा ने कृषि-शिक्षा के लिये दान में दे दिये !'

'यह बात उन्होंने पत्र में लिखी है; लेकिन अब वे वहाँ कब तक रहेंगे ?'

'उनका कार्य पूरा हो चुका; अब शायद इसी महीने में लौट

आयेंगे। हम दोनों एक साथ वतन चलेंगे।'।

मीरा का मुँह आनन्द से चमक उठा; किन्तु दूसरे ही क्षण उस पर करुणा छलक उठी।

‘वह अभागिन भी जा सकती थी शिखा ! लेकिन अब रोने से क्या लाभ ! मुझे कितनी अभिलाषा थी कि जब दादा बातें करेंगे उससमय बाँथीं ओर मैं और दाँथीं ओर भाभी होगी ! दोनों लड़ेंगे और फिर इकट्ठे हो जायेंगे !.....’ कहकर मीरा ने एक गहरी साँस छोड़ी।

शिखा की आँखें डबडबा आईं। बोली : ‘विवाह के समय मैं होती तो कदाचित् ऐसा न होता। उसके मित्र ही अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिये उसे विपरीत मार्ग पर ले गये; किन्तु मुझे विश्वास था कि माँ उसे लौटा लेगी।’

‘कुमार्ग-गामी को कोई नहीं लौटा सकता शिखा ! शायद विवाह से पहले ही उसका पतन हो गया होगा; मैं नहीं मानती कि अब वह पवित्र होगी।’

‘किन्तु मैं ऐसा नहीं मानती मीरा ! उसका बचपन संस्कार-सम्पन्न था। वह अपने मित्रों को बनाती रहती थी। कोई उसे आकर्षित नहीं कर सका। आज भी वह किसी को चाहती हो—ऐसा मैं नहीं मानती—शायद आज भी वह.....’

उसे बीच में ही रोककर मीरा बोली : ‘इस से तो हमें हानि ही होगी। जब तक वह विवाह नहीं करेगी, दादा को शांति नहीं मिल सकती। दादा कदापि उसका स्वीकार नहीं करेंगे—फिर भले ही वह प्रेम करने लगे या मर जाये ! यह तो तू भी जानती है शिखा, कि दादा का सत्य अटल है !’

‘हँ !’ कहकर शिखा थोड़ी देर चुप रही; फिर धीमे स्वर में बोली : ‘दादाने मुक्ति न दी होती तो अच्छा था; इतनी जल्दी क्यों की ?’

‘तू तो अपनी सहेली का पक्ष लेती है, शिखा ! दादा का भी विचार कर ! मि. बनर्जी की गोद में सिर रखकर उसने समझा दिया था कि वह मुक्ति चाहती है; उसे दादा की आवश्यकता नहीं है !’

‘तो फिर आज क्यों उनके लिये ब्याकुल हो रही है ? मैं कहती हूँ कि उसे दादा से प्रेम है !’

‘वह प्रेम क्षणजीवी है, शिखा ! दादा के जाने से उसके स्त्रीत्व को आघात लगा है। दादा को वश में न कर सकी इसलिये विह्वल हो गई। तू पढ़ी-लिखी होने पर भी कुछ नहीं समझ सकती ! स्त्री-हृदय कभी उपेक्षा सहन नहीं कर सकता। दादा को प्राप्त करने पर वह फिर उनका अपमान करेगी !’

‘किन्तु अब विरहाग्निमें शुद्ध होकर वह दादासे प्रेम नहीं कर सकती ?’

‘भगवान करे वह दिन न आये ! ऐसी इच्छा मत रखना, शिखा !’

शिखा चुप हो गई। तपती के अदृष्ट की क्रूरता उसे विचलित कर रही थी। तपन के लिये भी उसका हृदय रो रहा था। तपन तो असाधारण शक्ति होने से यह सारी वेदना सहन कर सकता है किन्तु तपती ! यदि सचमुच वह तपन को चाहती है, तो उसका जीवन दुःखों की रजनी के समान अंधकारमय हो जायेगा !

‘बिनुदाके क्या समाचार हैं ? उन्होंने तो बहुत-सी गायें इकट्ठी की हैं ?’

‘करीब एक हजार। मैं तो रोज उनके साथ डमडम जाती हूँ। आज तू आनेवाली थी, इसलिये नहीं गई।’

‘तुम लोग गायों की इतनी सेवा करते हो ! दूध की क्या व्यवस्था है ?’

‘सेवा करनेवाले दूसरे लोग भी हैं। दूध की जो आमदनी होती है उसका चतुर्थांश बालकों और रोगियों के लिये खर्च किया जाता है। गोबर का खाद बनाकर दादा की खेती में उसका उपयोग करते हैं। गायों की रक्षा हो और देशवासियों को अच्छा दूध मिले यही हमारा उद्देश है।’

‘दादा ने उन्हें निःशुल्क शिक्षा देने के लिये एक विद्यालय खोलने की योजना बनाई है; जिसका खर्च अपने देश के श्रीमन्तों से प्राप्त करेंगे। उसमें प्राचीन पद्धति से शिक्षा दी जायेगी। वे ही उसके छात्र होंगे जो पैसा देने में असमर्थ हैं। उसमें एक महिला-विभाग भी होगा, जिसके संचालन का भार दादा ने हम दोनों के सिर रखा है। आर्थिक कठिनाई के कारण पढ़ न सके—यह विचार उन्हें हमेशा चुभता रहता है; इसलिये उन्होंने ने निर्धन बालकों के लिये विद्यालय खोलने का निश्चय किया है।’

शिखा को भी इस बात की खबर मिल गई थी। वह बोली : ‘अच्छी बात है, हम तो तैयार ही हैं !’

‘विद्यालय का भवन-निर्माण कार्य प्रारम्भ हो चुका है। शिवपुर में हमारी जो एक हजार बीघा ऊसर भूमि थी, वहाँ पाँच सौ कच्चे घर तैयार हो रहे हैं। प्रवेश द्वार पर लिखा है—

“मानव सत्य से बढ़कर कोई वस्तु नहीं !”

“सत्य के बिना मानव का अस्तित्व मित्र नहीं होता !”

‘दूसरी पंक्ति दादा की रची हुई मालूम होती है !’ मीरा हँसकर बोली उठी।

शिखा मीरा के हृदय की गहराई तक नहीं पहुँच सकती थी। तपती के भाग्यविपर्यय से व्यथित शिखा मीरा को हँसते देख बोली : ‘मीरा, हम जानते हैं कि दादा महान हैं, किन्तु तपती के लिये तुम्हें क्यों कुछ विचार नहीं आता ?’

मीरा थोड़ी देर चुप रहकर बोली : ‘यह बात तुम्हें से कई बार कह चुकी हूँ बहिन ! आज तो हँसकर ही अपनी वह बात उड़ा देना चाहती हूँ !’

मीरा का कण्ठस्वर सुनते ही शिखा ने चौंककर देखा तो उस की आँखों में आँसू थे।

माँ के मन में जो रही-सही आशा थी वह भी जाती रही। घर पहुँचने पर कुछ देर चुपचाप बैठ रहने के बाद वह पति को सारी कहानी सुनाने चली गई। तपती ने माता-पिता के सामने आना छोड़ दिया था, किन्तु ऐसा कब तक चलता? पूजा की छुट्टियों में कॉलेज बन्द होते ही पिता ने तपती को बुलाकर कहा : 'होना था वह हो चुका, अब तू पढ़ने में मन लगा। अगर वह लौटकर नहीं आया, तो कोई दूसरा मार्ग निकालना पड़ेगा।'

तपती कुछ न बोली। वह जानती थी पिता का तपन पर अस्यन्त स्नेह था। उन्होंने फिर कहा : 'तू हमारी इकलौती बेटी है, तेरे सुख के लिये हम सब कुछ कर सकते हैं। तेरा पुनर्विवाह करेंगे.....'

यह शब्द कहकर मि. चटर्जी स्वयं ही चौंक उठे।

तपती को चुपचाप देख, वे 'अँगूर ही खट्टे हैं' इस नीति का अनुसरण करने के लिये बोल उठे : 'वह तो बिलकुल अपद था; मुझे पहले से खबर होती तो उस के साथ हरगिज़ तेरा विवाह न करता ! वह तो मेरी ही मूर्खता थी !'

माँ इस बात का समर्थन न कर सकी; वह चुपचाप बैठी रही।

'तैयारी कर लेना बेटी, कल हम सब शिल्लिंग जायेंगे।' कहकर मि. चटर्जी चले गये।

तपती ने शिलोंग जाने की तैयारी कर ली। उसके मन में विचार उठ रहे थे : तपन न आया तो ? उसे पाकर वह जीवनभर सुखी रह सकती थी, किन्तु न पा सकी तो क्या आत्मनम विधवा बनकर बैठी रहेगी ? जिसे एक दिन भी क्रोध नहीं आया, जिसने कभी किंचित् विरोध नहीं किया, वह घरबार छोड़कर चला गया। इस बात पर तपती विश्वास न कर सकी। उसके पिता की अपार संपत्ति, उसका अतुलनीय रूप, माता का स्नेह—कोई उसे लौटा कर नहीं ला सकता !

जाने दो, लौटने की आवश्यकता भी नहीं। वह अपने भाग्य-विधाता पर निर्भर होकर चलती रहेगी। उसने कोई इतना भयंकर अपराध नहीं किया था कि तपन इसतरह उसका परित्याग कर दे !

यकायक उसे तपन के शब्द याद आ गये—‘त्याग का अर्थ ही मुक्ति ! छुड़ता से विशालता, तुच्छता से महानता की ओर जाना ! हाँ, वह उसे मुक्ति ही दे गया था। कोई बात नहीं, तपती यों ही बिता लेगी।

शिलोंग आने पर मि. राय से परिचय हुआ। मि. राय आई. सी. एस. पास सुन्दर युवक और अच्छे संगीतज्ञ थे।

मि. चटर्जी ने उन्हें बुलाकर अपनी पुत्री से परिचय करा दिया। तपती ने माँ से कहा : ‘माँ ! अगर वे न आते हों, तो यहाँ मुझे विवाहिता मानने की क्या आवश्यकता है ?’

माँ ने कोई उत्तर न दिया। तपती ने ‘मिस चटर्जी’ के रूप में ही मि. राय से परिचय किया।

थोड़े ही दिनों में मि. राय की असामान्य वाक्पटुता, अनुपम संगीत-कुशलता और अंग्रेजी ठाठबाट देखकर तपती का तस हृदय शीतल हो गया। वह रोज मित्रों के साथ घूमने जाती थी। पर्वतों की गंभीरता, झरनों की चंचलता और पाइन-वन की सुन्दर रमामल्लता

उसे सुग्ध कर देती थी।

पूजा-महोत्सव के समय शिलोंग में रहनेवाले बँगालियों ने एक नाटक खेजने का निश्चय किया। दो दिन में ही तपती ने उसका संचालन अपने हाथ में ले लिया। ऐसे कार्यों में वह खूब चतुर थी। मि. राय उसकी कार्यकुशलता देखकर दंग हो जाते और कहते—

‘दी एंजेल ऑफ़ पाइन—दि ड़िवाइन नाइटिंगेल.....’

तपती रूमाल से मि. राय के शरीर पर आघात करके कहती ‘नोटि बाँय !’

नाटक की तैयारी जोरशोर से हो रही। विजयादशमी के दिन ही प्रदर्शित करना था। कल्याणी बोली : ‘मिस चटर्जी के साथ मि. राय के विवाह का दृश्य बड़ा मजेदार है !’

‘क्यों ?’ तपती ने पूछा।

‘क्या मालूम मि. राय विलायत में कुछ कर आये हैं या नहीं !’

‘किन्तु अभिनय के साथ उसका क्या सम्बन्ध ?’

‘कभी-कभी अभिनय भी सत्य हो जाता है !’ कहकर कल्याणी हँसने लगी।

‘आपकी मान्यता सत्य सिद्ध हुई, तो मैं आपको अपने खर्च से इंग्लैन्ड जाँच करने के लिये भेजूँगा, कल्याणीदेवी !’ मि. राय बोले।

मि. राय के शब्द सुनकर सब हँस पड़े। कल्याणी बोली : ‘आप तो बड़े चतुर हैं ! मेरे ही शब्द बदलकर तपती के समस्त प्रस्ताव रूप में रख दिये ! आपकी बुद्धि वास्तव में हाकिम जैसी है !’

मालती बोली : ‘अब हाकिमी करने की जरूरत नहीं है, अब तो हुकम बजाना पड़ेगा !’

तपती अभी तक चुप थी। यकायक तीक्ष्ण स्वर में बोली : ‘मालूम नहीं आप किसजिसे मेरी इतनी चिन्ता करते हैं ! मैं एक बात कहना चाहती हूँ।’

‘कहिये, जरूर कहिये !’

‘विवाह का दृश्य निकाले बिना नाटक शोभा नहीं देगा ! नाट्यकार ने नायक-नायिका को लग्न-बंधन में बाँधा ही नहीं; उसने विवाह की बात ही नहीं लिखी है।’

‘नाटक अच्छा होने से हमने वह प्रसंग बढ़ाया है; पूजा के त्योहार में करुण नाटक अच्छा लगेगा ?’

तपती ने तुरन्त उत्तर दिया : ‘दुनिया में अनेक व्यक्तियों के हृदय में इससे भी करुण नाटक हो रहे हैं।’

प्रस्ताव पाम हो गया। कोई तपती की बात का विरोध न कर सका। किन्तु मि. राय उसका उद्देश न समझ सके। उनका लिखा हुआ भाग ही तपती ने क्यों निकाल दिया ?

तपती को घर भेजने के लिये जाते समय एक शिला पर बैठकर उन्होंने पूछा :

‘लग्न का दृश्य क्यों निकाल दिया, मिस चटर्जी ?’

तपती बोली : ‘ऐसा नाटक क्यों पसंद किया, हमसे अच्छे दूसरे नाटक नहीं थे ? ज्योति गोस्वामी के नाटक बड़े कठिन होते हैं।’

‘चिरविरह के बाद मिलन का दृश्य अच्छा जमता !’

‘ना, नहीं जमता। जिन्हें थोड़ा भी कला का ज्ञान होता, वे बोल उठते कि नाटक का खून कर दिया !’

मि. राय थोड़ी देर तक चुप रहे। बहुत दिनों तक इंग्लैन्ड में रहने से उन्हें बँगाली साहित्य का विशेष ज्ञान नहीं था। उन्होंने पूछा : ‘ज्योति गोस्वामी स्त्री है या पुरुष ? बहुत अच्छा लिखते हैं !’

‘मालूम नहीं, किन्तु लेखनी में जादू है। पुस्तक का नाम भी अद्भुत है—‘मुक्ति का बन्धन !’

मि. राय को संतोष हुआ। कला की हत्या न हो इसलिये तपती ने फेरफार किया था। तपती के हाथ की माला उस दिन उन्हें नहीं मिलेगी—बट इफ ग्रेशस गोड विव्स...

घर आकर अपने शयन-खण्ड में बैठी-बैठी तपती सोचने लगी : मि. राय खूब सुन्दर थे। उनके साथ विवाह करने में कोई आपत्ति नहीं थी; किन्तु पहले तपन से तलाक लेना पड़ेगी। एक प्रकार से अच्छा ही हुआ था। तपन जैसे पुराने और विचित्र स्वभाववाले आदमी का वह क्या करेगी ? उसके शिक्षण और संस्कारों का तपन से मेल नहीं बैठता। मि. राय ही अच्छे थे।

लेकिन इतनी जल्दबाजी किसलिये ? पहले कलकत्ता जाकर विधिपूर्वक विवाह-विच्छेद करने के बाद मि. राय की परीक्षा कर लेना ही अच्छा है ! एम. ए. पास करने के बाद देखा जायेगा।

लेकिन मि. राय अशरीर हो उठे थे। आज ही उन्होंने ने कह दिया था ! इसका एक कारण उसका मौन्दर्य था ! और दूसरा—उसके पिता की सम्पत्ति—जिसके लिये उसने तपन को निकाल दिया था ! लेकिन अब यह सोचने की आवश्यकता नहीं थी। मि. राय कहीं तपन जैसे अशिक्षित नहीं थे ! धन का लोभ उन्हें नहीं हो सकता।

मुँह पर पक-पावडर लगाकर तपती माँ के पास गई। माँ पुत्री का परिवर्तन देख रही थी। वह बोली :

‘तेरे मुँह से अँग्रेजी गीत अच्छे लगते हैं, बेटी कितने सीख लिये ?’

‘तीन-चार सीखी हूँ। मि. राय के सिखाने का ढंग भी अच्छा है।’

माँ प्रसन्न होकर बोली : ‘लड़का सुन्दर है, बातचीत का ढंग भी अच्छा है।’

तपती कटाक्ष करके बोली : ‘तेरे तपन से भी !’

माँ व्यथित होकर सोचने लगी : ‘उसकी बात अब किसलिये करती है बेटी ! वह तो छोड़कर चला गया !’

‘तू तो बिलकुल भोली है माँ, अभी कहाँ न्यायालय में विधि-पूर्वक विवाह-विच्छेद हुआ है? दो लाख से उसका पेट नहीं भर सकता, अभी एकाध लाख की जरूरत होगी, इसी लिये तो मुक्ति-पत्र हाथ में रखा है !’

माँ थोड़ी देर चुप रहकर बोली : ‘जाने दे यह बातें !’

‘रुपयों पर ही उसकी नजर थी, माँ ! यह बात तो मैंने उससे पहले ही दिन कह दी थी कि मैं उसका स्वीकार नहीं करूँगी। वह इतना चालाक निकला कि सात महीने तक नाटक करके चला गया। अपने वेतन के रुपये तेरे पास रखकर वह सब को बतलाना चाहता था कि वह किसी का दान नहीं लेता; और तुमने बातों में आकर दो लाख रुपये दे दिये; हिसाब तक नहीं माँगा !’

‘लेकिन ऑफिस के क्लर्क को खून दिया था, उसका क्या ?’

तपती लज्जित हो गई। किन्तु दूसरे ही क्षण उसकी तीक्ष्ण बुद्धि ने सहायता की। वह बोली : ‘यह भी चालाकी थी ! आफिस के खर्च से ही उसे अस्पताल में रखा था और सब समझा दिया था। शायद थोड़ा-सा खून भी दिया होगा, लेकिन उससे क्या ? उसके शरीर में कहाँ खून की कमी थी ! तू कैसा-कैसा खिलाती थी !’ कहकर वह हँस उठी। माँ को भी यह बात सच मालूम हुई। फिर भी वह बोली : ‘न जाता तो अच्छा था...’

‘क्या खाक अच्छा था ? न जाता तो चालाकी पकड़ी जाती, और जेल जाने को नौचत आ जाती; इसी डर से देश छोड़कर भाग गया !’

माँ आज उलझन में पड़ गई ! क्या सचमुच तपन उन्हें इस तरह धोखा देकर चला गया था ?

तपती भोजन करके शयन-खण्ड में गई। नाइटड्रेस पहिनते-

पहिनते उसने बार-बार आइने में अपनी मुखाकृति का निरीक्षण कर लिया। मुरझाये चेहरे पर पुनः लाली आ रही थी। आँखों की चमक भी लौट आई थी। लाल लाल ओंठों को उलट-पलटकर वह मन ही मन बोली : 'इन ओंठों को पहली बार चूमनेवाला तपन तो नहीं ही हो सकता !'

ओह ! वह कितनी भयंकर भूल कर बैठी थी ! शरीर बिलकुल सूख गया था। यह मूर्खता नहीं तो दूसरा क्या है ? तपती उस धूर्त को सर्वस्व अर्पण करने गई थी ! एक पंक्ति रटते-रटते वह सो गई—'बहेन माइ बिलवेड कम्स !...'

ना

टक के दिन मि. राय ने तपती से फिर एक बार विवाह का दृश्य जोड़ देने का निवेदन किया। किन्तु उसने दृढ़ता से कहा : 'नहीं, मैं अभिनय नहीं करूँगी; लग्न-बन्धन मुझे असह्य है !'

सब आश्चर्यचकित हो उठे : 'क्या मतलब ! क्या आप विवाह नहीं करेंगे ?'

सब को अट्टहास द्वारा दिग्भ्रम करके तपती बोली : 'मैं विवाह की अपेक्षा कुछ विशेष करना चाहती हूँ !'

मि. राय बोले : 'अनोखी सुझाव ! क्या करना चाहती हैं ?'

'जो मेरे साथ विवाह करेगा; वही मुझ से वह बात कहेगा !'

मि. राय व्याकुल होकर सोचने लगे — ऐसा क्या हो सकता है ? विवाह की अपेक्षा प्रेम बड़ा कहलाता है। वे बोले : 'प्रेम ?'

सब हँस पड़े। मि. राय विचार करके बोले : 'समझा ! आपकी इच्छा कम्पेनियेट मेरेज की है !'

तपती झोर से हँसकर बोली : 'आपकी बुद्धि वह नहीं सोच सकती मि. राय !'

चारों ओर अंधकार देखकर मि. राय चुप हो गये।

तपती बोली : 'मैं ही कहे देती हूँ, सुनो ! विवाह की अपेक्षा बड़ी वस्तु है कुँवारे युवकों का सिर खा जाना !'

हँसकर कल्याणी बोली : 'आजकल शायद यही करती है !'

'चुप मर अभागिन ! इसके पिर में तो गोबर भरा है !'

सब हँस पड़े। मि. राय भी हँसे, किन्तु तपती उन्हें असाध्य लग रही थी। आखिर वह चाहती क्या है ?

नाटक पूरा हो जाने के बाद घर जाते समय रास्ते में उन्होंने ने पूछा : 'आप सचमुच विवाह नहीं करेंगी मिस चटर्जी ?'

'मेरे पिता ने एक व्यक्ति पसन्द किया है, अगर उससे विवाह न हुआ तो तुम्हारा विचार करूँगी !'

मि. राय कुछ न बोले। कुछ दूर चलने पर उन्होंने अपनी राह ली।

तपती मन ही मन हँस पड़ी। उसने एक कंकर से दो पत्थी मारे थे ! कुशलतापूर्वक मि. राय से कह दिया था कि विवाहिता न होने पर भी उसका पति निश्चित हो गया था—अब तपन की बात प्रगट होने पर भी भय का कोई कारण नहीं रहेगा। मि. राय के मन में वह बस जाती है या वे उसे भूल जाते हैं—इस बात की वह परीक्षा कर लेना चाहती थी। अब उसने धोखा न खाने का निश्चय कर लिया था। चूँकि मि. राय के साथ विवाह करने में तपती को किंचित् आपत्ति नहीं थी, फिर भी वह उनकी अच्छी तरह जाँच कर लेना चाहती थी; क्योंकि वह विवाह अंतरंग नहीं बाह्य था।

दूसरे दिन प्रातःकाल ही माँ के पास एक पत्र आया; जिसमें लिखा था:—

'विजयादशमी के असंख्य प्रणाम स्वीकार करना, माँ ! आपके स्नेह-
श्रम से किंचित् उद्भूत न हो सका। हृत्भागी बालक को चमा करना !

आपका ही

—तपन !'

माँ पत्र देखती ही रही। ऊपर कलकत्ते का पता लिखा था। वह अवश्य आ गया होगा। उसने स्वामी से जाकर कहा :

'तपन को आने का तार दे दो; तपती के साथ अन्तिम समा-
धान हो जाये ! और 'मुक्ति-पत्र' तो लिखाना ही पड़ेगा।'

मि. चटर्जी थोड़ी देर विचार करके बोले : 'तपती से पूछ लिया ? क्या कहा उसने ?'

'ना, उससे पूछने की कोई आवश्यकता नहीं; अभी तार दे दो; 'मि-पेड !'

तुरन्त तार दे दिया गया। प्रत्युत्तर में तपन ने लिखा कि वह त्रयोदशी के दिन शिलोंग आयेगा, और किसी होटल में उतरेगा !

माँ ने तपती से समाचार कहे। तपन से बातचीत करने के बाद ही वह आगे कदम रखना चाहती थी। सच पूछो तो आज भी उसका हृदय तपन के लिये स्नेहातुर था।

मि. राय रोज सवेरे तपती को साथ लेकर घूमने जाते थे। उस दिन भी वह सजधज कर उनके साथ गई।

रास्ते में एक वृक्ष पर असंख्य सुन्दर फूल खिले थे। मि. राय ने कूदकर एक डाली भुका दी। तपती फूल चुन-चुनकर वेणी में पिरोने लगी और दो-चार फूल मि. राय पर फेंके। मि. राय हँसकर बोले : 'अत्यन्त स्वीट...'

तपती एक और फूल फेंककर बोली : 'देखती हूँ कितनी है मेरे इडियट की वीट !'

एक आदमी सिर पर पेटी-बिस्तर रखे चला आ रहा था। तपती मानो भूत देखकर चौंक उठी—तपन ! तपन चुपचाप एक ओर हाँकर चल गया, किन्तु उसके मुँह पर जो कटाक्ष था वह तपती की दृष्टि से बाहर न रहा। वह तपन की ओर देखती रही, मि. राय बोले : 'इसे पहिचानती हैं ?'

'हाँ।' कहकर तपती एक ऊँचे पत्थर पर चढ़ गई और देखने लगी कि तपन किधर जाता है; किन्तु वह रास्ते के मोड़ में अदृश्य हो गया था। जरूर वह घर ही जायेगा। तपती गहरी चिन्ता में पड़ गई। उसे यहाँ आने की क्या जरूरत थी ? उसने देख लिया कि तपती कितनी स्वच्छन्दता से मि. राय के साथ खेल रही थी ! कोई बात नहीं; उसके कटाक्ष का तपती पर कोई असर नहीं होगा। शायद वह सोचता होगा कि उसके त्रियोग में तपती रो-रोकर मर जायेगी ! हाय री किस्मत !

थोड़ी दूर जाकर दोनों लौट आये। तपती तपन को अच्छी

तरह बतला देना चाहती थी कि वह उसकी अपेक्षा रखकर नहीं बैठी थी, अपने जीवनसाथी का रिक्तस्थान आसानी से पूर्ण कर सकती थी।

‘माँ, कहाँ छिपा है तेरा वह धूर्त लड़का ? बाहर निकाल ?’

माँ ने आश्चर्य से पूछा : ‘कौन ? तपन आ गया क्या ?’

‘हाँ, लेकिन है कहाँ ? घर नहीं आया ?’

‘ना, होटल में उतरने को लिखा है। कल यहाँ विजयादशमी का प्रणाम करने आयेगा !’

तपती को आश्चर्य हुआ। होटल में क्यों उतरा ? यहाँ आने के लिये किसने मना किया था ? उसने माँ से पूछा : ‘तुम्हें उसके आने की खबर थी ?’

‘हाँ, मैंने ही उसे आने के लिये तार दिया था। तेरे साथ समझौता हो ज़रूरी था और मुक्ति पत्र भी लिखा लेंगे।’

‘ठीक है, लेकिन जो कुछ कहना है मैं ही कहूँगी, समझी ?’

माँ कुछ न बोली। तपती शाम को सजधजकर मि. राय के साथ हाटल की ओर चल दी। अब वह धैर्य नहीं रख सकती थी। मि. राय को साथ ले जाकर वह तपन को बतला देना चाहती थी कि उसे कितना योग्य पति मिल गया था !

तपन एक खिड़की में खड़ा-खड़ा पाइन-वन की ओर देख रहा था।

‘नमस्कार तपनबाबू ! घर न आने के लिये धन्यवाद देती हूँ; आपने अच्छा ही किया !’

तपन ने मुड़कर देखा और नमस्कार करके कहा : ‘आओ, मीरा से सुना था कि आप अस्वस्थ हैं; आशा है अब आपकी तबीयत ठीक होगी !’

‘जी हाँ ! आइये मि. राय, आप से परिचय करा दूँ। इनके साथ एक दिन शास्त्रोक्त-विधि से मेरा विवाह हुआ था ! और तपनबाबू, ये हैं मिस्टर बी. सी. राय, आई. सी. एस.। बंगाली

में कहूँ तो 'बुद्धचंद्र राय !' कहकर तपती खिलखिला उठी। 'इनके साथ मेरे भावी सम्बन्ध का अनुमान आपने कर ही लिया होगा !'

मृदु मुस्कान के साथ नमस्कार करके तपन बोला : 'आप से मिलकर खुशी हुई मि. राय ! कामना करता हूँ कि—आपके जीवन में उतर आये पाइन-वन की शीतल शांति और उस निर्भरिणी का नन्दित कल्लोल ! बैठिये, चाय पियेंगे न !'

तपन ने होटल के नौकर से चाय लाने को कहा।

आश्चर्य ! उसकी जिह्वा पर भाषा मानो बिजली की भाँति खेल रही थी ! कैसी कवित्वमय भाषा !

'तपन ने मि. राय से पूछा : 'आपका कार्यस्थल कहाँ है ? मेरी समझ में बंगाल से बाहर तो नहीं ही होगा !'

'जी, नदिया जिले में। वहाँ मलेरिया का बहुत जोर रहता है इसलिये चिन्ता बनी रहती है।'

'मलेरिया तो गरीबों का रोग है, आप किसलिये चिन्ता करते हैं ?'

'अनुप्रास लगाये बिना आप बात नहीं कर सकते, तपन बाबू ?' तपती ने पूछा।

'अनुप्रास भी च्यवनप्राश की भाँति उपादेय और उपकारी है !' कहकर वह मुस्कराया।

'बात करने की कला भी आपने आश्चर्यजनक रीति से हस्तगत की है !' तपती ने हँसकर कहा।

नौकर चाय लेकर आ पहुँचा। तपन ने अपने हाथ से चाय बनाकर मि. राय और तपती को दी। मि. राय की समझ में नहीं आता था कि वे क्या बोलें। तपती भी कुछ विचलित हो गई थी।

तपन बोला : 'मीरा ने आपके साथ साथ बड़ा अन्याय किया है; उसके लिये मैं आप से क्षमा चाहता हूँ। आप तो शिबिता हैं; उस जैसी ग्रामीण लड़की के कहने का बुरा मत मानना !'

तपती अचम्भे में पड़ गई। तपन की यह कैसी धूर्तता ! वह

मंथन स्वर में बोली : 'जी नहीं, उसका मुझे बिलकुल बुरा नहीं लगा। आज आप हमारे घर तो आयेंगे न ?'

'आज पास के एक गाँव में जाना है, अभी जाना पड़ेगा।'

'क्या काम है वहाँ ? चलिये, हम भी आपके साथ चलें।'

तपती की बात सुनकर तपन को आश्चर्य हुआ। कुछ भी कहे बिना वह उनके साथ बाहर निकला। तीनों चुपचाप चल रहे थे; हर एक का मन चिन्ता में डूब गया था।

मार्ग के दोनों ओर की वृक्षराजि फूलों से लद रही थी। तपती ने मि. राय से कहा : 'फूल गिरा दो न !' एक-दो छल्लों मारने पर भी मि. राय डाली न पकड़ सके। तपन ने अपने शाल के छोर में एक पत्थर बाँधकर ऊपर फेंका और डाली झुक आई। उसने मि. राय से कहा : 'फूल ले लीजिये।' मि. राय गर्दन उठाकर फूल तोड़ने जा रहे थे कि उसी समय ऊपर से उनकी आँख में किरकिरी पड़ी और रुमाल से आँख दबाकर नीचे देखने लगे। तपन ने फूलों से लदी हुई एक टहनी तोड़कर तपती को दी और फिर कुशलतापूर्वक मि. राय की किरकिरी निकाल दी।

तपन अब भी उसके प्रति सहानुभूति प्रदर्शित कर रहा था ? —तपती की समझ में न आया। वह तो मि. राय को साथ लेकर तपन को आघात पहुँचाने आई थी, किन्तु तपन बड़ी सावधानी से उनकी सेवा कर रहा था ! वह ज़रा भी विचलित न हुआ, आश्चर्य !

'पाइन-वन आपको कैसा लगता है ?' कुछ न सूझने पर तपती ने पूछा।

तपन ने हँसकर उत्तर दिया : 'माँ के मुँह पर झलकती हुई स्निग्धता के समान स्नेह भरा !'

दूर-दूर एक धुँधले-से पहाड़ की ओर उँगली उठाकर तपती ने फिर पूछा : 'और वह पर्वत ?'

तपन ने धीमे स्वर में कहा : 'दुःख के दिनों में सुख की स्मृति के समान विषादमय !'

पुष्पाच्छादित वृक्षराजि की ओर संकेत करके तपती बोली :
'बे फूलों के गुच्छे?'

'युवती की माँग के समान सुन्दर, सुकुमार;—अखण्ड रहे
उनकी सौभाग्यशोभा !'

तपती हार गई।

फिर एक झरने की ओर उँगली उठाकर उसने मि. राय से
पूछा : 'अब आप कहिये, वह झरना कैसा लगता है?'

मि. राय ने कहा : 'आपकी सुन्दर वेणी समान !'

तपती ने हँसकर कहा : यूनिवर्सल न हुआ। आप कहिये, तपनबाबू !'

'मौन गिरिजाया की मूक वाणी, स्थिर धरित्री की अस्थिर अश्रु-
धारा समान !'

कुछ दूर एक युवती बैठी थी। तपती ने पूछा : 'कहिये मि. राय,
वह युवती कैसी लगती है?'

मि. राय बोले : 'इनके साथ प्रतियोगिता नहीं कर सकता; फिर भी
कहता हूँ : 'निर्जन पड़ाव की तलहटी में खड़ी हुई जीवंत प्रतिमा समान !'

तपती हर्षित होकर बोली : 'नवीनता न होने पर भी सुन्दर
है; अब आप कहिये!'

तपन बोला : 'पहले एकबार आप ही कहिये !'

तपती बोली : 'मंदाकिनी के तट पर बैठी हुई विरहिणी वधू
—अब आप कहिये!'

तपन प्रसंशापूर्ण दृष्टि से तपती की ओर देखकर बोला : 'बहुत
सुन्दर ! मुझे अब रहने दीजिये !'

'ना, कहिये, कहना ही पड़ेगा !' तपती ने आग्रह किया।

'मैं कुछ अद्भुत कहूँ तो ?' तपन ने हँसकर पूछा।

'कहिये ! जो कुछ आप कहना चाहते हों !'

तपन बोला :

'मरण वीथिका में जीवन का उच्छ्वास,
जीवन-यातना में मृत्यु की मधुरता.....'

छोटी-सी पगड़ंडो गाँव की ओर जा रही थी। तपन नमस्कार करके हँसता हुआ चला गया। तपती आश्चर्य के साथ तपन के शब्दों का मंथन करने लगी। उस कविता में वह क्या कह गया ! तपती को विचार करते देख मि. राय बोले : 'उसकी कविता ने आपको मुग्ध कर दिया, मिस चटर्जी !'

ईर्ष्या मत करना मि. राय ! उसकी कविता पर मुग्ध होना ही पड़ता है। और वह ईर्ष्यालु भी नहीं है।'

'नहीं, नहीं, ईर्ष्या कैसी ? उसने तो आपको स्वेच्छा से मुक्ति दी है; क्या वह आपके योग्य है ?'

तपती काँप उठी। स्वेच्छा से मुक्ति दे गया था ? नहीं, उसी ने मुक्ति माँग ली थी। हजारों अपमान सहने पर भी उसने मुक्ति की बात नहीं निकाली; मुक्ति देते समय भी बार-बार पूछ लिया था और देने के बाद रा-राकर पूजा की वेदी भिगो दी थी !

फिर उसकी अयोग्यता कहाँ ? उसका हँसता चेहरा, संयम और वाक्कुटा—सब तपती के अंतर को मुग्ध बना गये थे। अपराध हतना ही था कि उसने दाँ लाख रुपये का हिसाब नहीं दिया था। नहीं दिया तो क्या हाँ गया ?—उसने चोरी नहीं की थी, माँगकर ले गया था !

तपती ने लौटने की इच्छा व्यक्त की। मि. राय आशंका से अधीर हो उठे थे। तपन का उन्हें भय लग रहा था। अद्भुत प्रकृति थी उस व्यक्ति की—हिमालय-सा अविचल और सागर-सा संगीतमय ! वे बोले : 'चलो, थोड़ी देर घूमें.....' किन्तु तपती को अच्छा नहीं लगता था। जो अपने प्रगाढ़ सम्बन्ध को इसप्रकार अवहेलनापूर्वक तोड़ सकता है, उसे क्या कहा जाये ?—मनुष्य, पत्थर या देवता ?

'नहीं, अब लौट चलें मि. राय ! मुझे जल्दी घर पहुँचना है।' कहकर वह लौट पड़ी। विवश होकर मि. राय को भी उसका अद्भु-

सरण करना पड़ा। रास्तेभर वह चुपचाप चलती रही। मि. राय भी कुछ न बोल सके।

अर्धरात्रि !

तपती अपने शयन-खण्ड में बैठी-बैठी तपन के आचरण का, उसके प्रत्येक शब्द का मंथन कर रही थी। उसे याद आया वर्षगाँठ के अवसर पर तपन का दिया हुआ आशीर्वाद, और याद आई उसकी कवित्वमय आशिषवाणी ! आज के शब्द भी याद आ गये : 'जीवन-यातना में मृत्यु की मधुरता !' वह क्या कह गया ? तपती के विरह से तपन को इतनी महान वेदना होती थी—इसका तो उसे कभी विचार तक न आया था ! फिर भी आज के शब्द—हाँ, वही थी उसनी अंतरवेदना की मधुर, करुण या विषमय दशा !

तपती का अन्तर तृप्ति का अनुभव करने लगा। तपन के हृदय में आज भी उसका स्थान था !

दादाजी एक बार आकर उससे कुछ कह जायें—तपन एक बार प्रेम की नूतन वाणी सुना दे, तो तपती आज बच सकती है। वह अर्द्धनिद्रित दशा में पड़ी रही। उसकी विचार-शक्ति मानो कुण्ठित हो गई थी।

सवेरे निश्चित समय पर मि. राय आ पहुँचे; किन्तु तपती ने आने से इन्कार कर दिया।

मि. राय अत्यन्त उदास होकर बोले : 'धूमने के लिये ही यहाँ आया था, मिस चटर्जी !'

'यह आपका हेतु होगा, मेरा हेतु तो बदला लेने का था !'

'किसने अपमान किया है आपका ?' मि. राय आश्चर्य से बोल उठे।

'तपन ने ! उसने मेरे स्त्रीत्वको क्रूरता से कुचल दिया है; मेरी ऐश्वर्या की पाषाण की भाँति मोड़ दिया है; मेरे बंधन को तोड़कर

कहता गया—‘अपने विदा-अश्रु छोड़े जा रहा हूँ, नमस्कार !’

कहकर तपती जोर से रो पड़ी। मि. राय अचम्भे में पड़ गये। तपती ने आत्मसंवरण करके कहा : ‘शाम को आना मि. राय ! वह भी शाम को आयेगा। और सुनो, मैं आज भी उसे चाहती हूँ ! अंतर से चाहती हूँ—हृदय की धड़कन की तरह, जीवन-यातना की भाँति !’

कहकर वह चली गई। मि. राय थोड़ी देर खड़े रहे फिर धीरे-धीरे चल दिये। उन्होंने समझ लिया था कि तपती को पाना अशक्य है।

शा

म को तपती सजधज कर तपन की प्रतीक्षा कर रही थी ।
कुछ युवक-युवतियों के साथ मि. राय भी उपस्थित थे ।

तपती बोली : 'जो उसे बातचीत में हरा देगा, उसे मैं
इनाम दूँगी !'

सलिला बोली : 'इस में क्या बड़ी बात है ? पुरुषों को तो
चुटकी बजाते ही बेवकूफ बना सकती हूँ !'

माधुरी बोली : 'पाँच मिनट में हरा दूँगी, देख लेना !'

मिनती बोली : 'कमल वन में मार्ग भूला हुआ पथिक बना
दूँगी, काँटा चुभते ही मूर्च्छित हो जायेगा !'

तपती बोली : 'किन्तु वह तपन-सूर्य है, कमल ही उसकी ओर
देखता रह जायेगा !'

मि. राय भौंहे चढ़ाकर बोले : 'गुलाब भाग के जन्तु को हराने
में क्या देर !'

तपती मि. राय की ईर्ष्या को ताड़ गई । बोली : 'वह है गुलाब-
भाग का मधुकर, जो हमेशा गुलाब के अंतर में ही रहता है !'

इतना कहने से ही उसे तृप्ति का अनुभव हुआ । आज अन-
जाने ही उसके मुँह से तपन की मोहकवाणी निकल रही थी ।

मि. राय ने छुप रहना ही ठीक समझा और मिसिस चटर्जी को
प्रणाम किया । फिर सब को नमस्कार करके अपने स्थान पर बैठ गया ।

प्राथमिक परिचय-विधि के पश्चात् सलिला बोली : 'आपकी
खूब प्रशंसा सुनी है, ऐसा लगता है जैसे आप जादूगर हों !'

‘मेरे भाग्य को दूसरों की ईर्ष्या का कारण न बनाओ मिस गुप्ता, जगत के जादूगरों का अभी सन्मान होता है।’

‘लेकिन आपका अनादर किसलिये करें?’

‘ओस के बाद जैसा धूप का, गर्म रेत पर जैसा अश्रु का,—
ऐसा आदर मैं नहीं कर सकता।’

इन शब्दों में मानो गुप्त वेदना का संकेत था।

वातावरण की गंभीरता को कम करने के लिये माधुरी बोली :
‘छोड़ो इन बातोंको, चायकीमहफिल में हँसीकी बातें ही शोभा देती हैं।’

मि. राय इस विषय में कुशल थे। वे बोले : ‘राइट, हँसना तो हर समय अच्छा लगता है।’

उधर से तपती बोल उठी : ‘हर समय ऐसा नहीं होता। मानव को मानव बनाने की शक्ति रुदन में ही है। आपकी क्या मान्यता है?’ तपती ने तपन की ओर देखा।

विस्मित तपन समझ न सका कि तपती आज उसके साथ क्या खिलवाड़ करना चाहती थी। आज वह उसे समझ नहीं पाता था। हँसकर बोला : ‘इनके मन्तव्य का समर्थन करना ही आपको उचित है!’

तपती मीठी धमकीभरे स्वर में बोली : ‘चुप रहो! मेरा मन्तव्य किसी के मन्तव्य की चिन्ता नहीं करता। मेरा मत होता है स्वतंत्र, मुक्त, स्वाधीन! अब आप अपना मन्तव्य कहिये!’

अधिक आश्चर्य के साथ तपन धीमे स्वर में बोला : ‘मेरा मन्तव्य ऐसा है कि हास्य में रुदन और रुदन में हास्य ढूँढ़ने की योग्यता का होना आवश्यक है। पृथ्वी के तीन भाग अश्रु-सागर में मात्र एक भाग हास्य का द्वीपपुंज प्रत्यक्ष देखने में मनोरम मालूम होता होता है; किन्तु उसी प्रकार जिसप्रकार मगर का पानी से बाहर निकल आना आनन्ददायक होने पर भी अस्वाभाविक है। हास्य के प्रयोजन का अस्वीकार नहीं किया जा सकता, किन्तु रुदन का प्रयोजन

ही विशेष है; हास्य से ही रुदन की उत्पत्ति होती है; किन्तु गंभीर आनन्द तो रुदन से ही उत्पन्न होता है। इसप्रकार विचारने से हास्य-रुदन में कोई अंतर मालूम नहीं होता।'

मिनती बोल उठी : 'यह तो दर्शनशास्त्र का निबन्ध-सा मालूम होता है। हम तो सरल हास्य ही चाहते हैं !'

तपन बोला : 'सरल शब्द पात्रानुसार परिवर्तित होते हैं।'

'क्या आप यह कहना चाहते हैं कि हमारी अपेक्षा आप श्रेष्ठ पात्र है?'

तपन बोला : 'श्रेष्ठता का प्रश्न असंगत है। दुनिया में कंचन के प्रयोजन की अपेक्षा काँच का प्रयोजन कम नहीं है !'

मधुर हास्य से तपती का मुँह उज्ज्वल हो गया। काँच समझकर ही उसने तपन का अस्वीकार किया था ? यह बोली : 'हाँ, कागज़ी निब्बू से लेकर करंजी तक की जरूरत पड़ती है !'

सब हँस रहे थे। तपन की वाक्चातुर्य की प्रशंसा और उसी के समर्थन से, मि. राय मन ही मन कुढ़ रहे थे। वे बोले : 'केकड़ों की भी ?'

तपती की आँखें चमक उठीं। वह अनजाने ही तपन का अनुकरण कर रही थी। उसने समझ लिया कि मि. राय उसे सहन नहीं कर सकते थे। वह बोली : 'हाँ केकड़ा भी अच्छा,—जिसप्रकार काँच की कलामय सुराही के जल की अपेक्षा कुएँ का काला पानी !'

तपती के शब्द सुनकर सब चुप हो गये ! तपन सब समझ गया; उसकी आँखों में वेदना छलक उठी। धीमे स्वर में बोला : बेचारे 'क' को किसलिये कलंकित करती हैं, तपती देवी ?'

तपती मुसकराकर बोली : 'कापुरुष के शरीर पर कीचड़ लगाना ही उचित होगा !'

उन्हें 'कापुरुष' कहा गया था—ऐसा सोचकर मि. राय क्रोध दबाकर बोले : 'कापुरुष से विपरीत प्रकार का व्यक्ति यहाँ कौन है, मिस चटर्जी ?'

तपती बोली : 'पराजय होने पर भी जो पीठ न दिखाये; जैसे—आप !'

'मैं ! तो फिर कापुरुष कौन ?'

तपन की ओर उँगली का संकेत करके तपती बोली : 'यह इडियट, यह धूर्त, यह बदमाश !'

सब अचम्भे में पड़ गये। मि. राय को खुशी हुई, फिर भी बोले : 'ब्रि:, छि:, मि. चटर्जी ? आप क्या कर रही हैं ?'

'मैंने आप से कह दिया है कि—मुझे 'मिस चटर्जी' मत कहना ! अब ध्यान रखना !'

'लेकिन आप इनका अपमान कर रही हैं मिस चटर...'

तपती ज़ोर से बोल उठी : 'शट् अप !—फिर मिस चटर्जी ?'

तपती का उच्च स्वर सुनकर माँ एकदम बाहर आई। उसे डर था कि वह तपन के साथ झगड़ा न कर बैठे ! तपन कुण्ठित स्वर में बोला : 'ये मेहमान हैं माँ, इनका अपमान नहीं होना चाहिये ! इन्हें मना कर दीजिये !' कहकर उसने कातर दृष्टि से माँ की ओर देखा।

यकायक तपती खड़ी हो गई और अपनी लम्बी वेणी चाबुक की तरह तपन के बाँयें हाथ पर फटकार दी—सटाक् सटाक् ! फिर चीत्कार कर उठी : 'ये तुम्हारे मेहमान हैं ? तुम इनकी इज्जत करोगे और तुम्हारी विवाहिता पत्नी का 'मिस' कहकर अपमान करें उसे चुपचाप सहते रहोगे ? किसलिये ? क्या कारण ? बोली !' कहकर एक और आघात किया।

उस आकस्मिक आघात से सारी सभा स्तब्ध हो गई। तपन के गौर बाहु पर खून के निशान उभर आये थे। माँ आत्मसंवरण करके बोली : 'यह क्या किया बेटी ?'

क्रोध से थरथर काँपती हुई तपती ने तपन के हाथ पर दृष्टि डाली। मानो उस रक्त द्वारा ही वह अपनी शुभ्र माँग भरेगी।

अश्रुबद्ध कंठ से बोली : 'हाथ फेर दूँ, जलन हो रही है ?'

तपती के व्याकुल कण्ठस्वर से आकर्षित तपन ने निर्लिप्त की भाँति उत्तर दिया : 'नहीं रे नहीं !' रोने की क्या बात है ! यह तो मिट जायेगा !'

फिर स्नेहपूर्वक तपती का सिर उठाकर बोला : 'माँ, इन्हें सँभालो, नहीं तो गिर पड़ेगी !'

माँ ने जाकर तपती को पकड़ लिया। तपती थरथर काँप रही थी। तपन ने उठकर सब को नमस्कार किया।

तपती ने दौड़कर उसका मार्ग रोक लिया और बोली : 'जाते हो ?'

'मैं तुझे मुक्ति दे चुका हूँ तपती ! तुझे स्वीकार करने की शक्ति अब मुझ में नहीं है !'

विस्मय से तपती के नेत्र विस्फारित हो गये : 'मुक्ति दे दी ?'

'हाँ, मेरा सत्य वज्र से भी कठोर, मृत्यु से भी निष्ठुर है।

सत्य का गला घोटकर अब तुझे अपनी सहधर्मिणी के आसन पर नहीं बिठा सकता !'

तपन जाने लगा; किन्तु विमूढ़ तपती गिर पड़ेगी—इस भय से उसे पकड़ लिया और स्नेहशीतल मधुर स्वर में बोला :

'इतने दिनों बाद इसप्रकार क्यों आई तपती ? तू मुक्त विहंग की भाँति नीलाकाश के असीम विस्तार में पल्ल फड़फड़ाना; मेरी धरा पर उसकी छाया पड़ेगी। मुक्ति के उस अबाध अधिकार में रहेगी अपने चिरमिलन की अभ्यर्थना !'

तपन चला गया।

यकायक तपती के आर्त्त चीत्कार से वातावरण थरथरा उठा : 'दादाजी ! दादाजी !'

×

×

×

दिन, मास, वर्ष बीत रहे थे।

विशाल “तपती-निवाम” में तपती तपन के परिश्रक्त खण्ड में बैठी रहती। दुःखी पिता आकर कहते : ‘तेरा पुनर्विवाह करेंगे बेटी, तू हमारी इकलौती पुत्री...’

विधि जैसी निष्ठुर उदासीनता से तपती कहती : ‘इसीलिये तो दादाजी की गढ़ी हुई देवमूर्ति को दानवी बना दिया था ? किन्तु अपनी निष्ठुर टाँकी के आघात से वह उसे देवी बना गया है पिताजी, इस मन्दिर में अब किसी को प्रवेश करने का अधिकार नहीं है—जाओ !’

स्नेहदुर्बल पिता कहने : ‘मुझ से दो लाख रुपये लेकर मेरे पिता की स्मृति में “श्यामसुन्दर भिक्षुकाश्रम” की स्थापना की है; कितना विशाल हृदय ! चल बटी, उसे मना लायें !’

तपती हँसकर उत्तर देती : ‘मैं उनकी सहधर्मिणी बन चुकी हूँ पिताजी, अब सत्य का भंग करके विलास-साथी नहीं बनना चाहती !’

माँ आकर स्नेहसज्जल नेत्रों में कहती : ‘इसतरह कब तक रहेगी, बेटी ?’

तपती स्निग्धमधुर स्वर में कहती : ‘मेरी यह विरह-चिन्ता इसी तरह सुलगती रहेगी, माँ !’

गंभीर निस्तब्ध तपन की रिक्त शय्या के निकट घुटनों के बल पड़ी हुई तपती का कण्ठ स्वर सुनाई देता था :

‘मैं खड़ी इस पार तुम उस पार हो,
अश्रु-सागर बीच में लहरा रहा !’



